UNIVERSAL LIBRARY
OU_186737
UNIVERSAL LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H 294.5942 Accession No. P.G.H. 2843

Author L19P

Title लल्लूलाल जी कृत प्रेम सागर (सचित्र)

This book should be returned on or before the date last marked below.

❀ श्री गणेशाय नमः ❀

❀ असली ❀

प्रेम सागर (सचित्र)

(पं० लल्लूलाल जी कृत)

स्टाकिस्टः—

नूतन धार्मिक पुस्तकालय
बम्बई।

दसवाँ संस्करण] १९६२ मूल्य ४)

284
वाराणसी

॥ प्रेमसागर की विषय सूची ॥

अध्याय	विषय	पृ० सं०
१	उपोद्घात	४
२	देवकी का विवाह	१२
३	बलदेव जन्म	१५
४	श्रीकृष्ण जन्म	१८
५	कंस के उपद्रव	२०
६	कृष्ण जन्मोत्सव-नन्दोत्सव	२२
७	पूतना वध	२४
८	सकटासुर वाणावर्त वध	२५
९	विश्व दर्शन	२७
१०	ऊखल बन्धन	३०
११	यमलार्जुन मोक्ष	३२
१२	बकासुर वध	३४
१३	अघासुर वध	३६
१४	ब्रह्मा वत्स हरण	३७
१५	ब्रह्मा स्तुति	३९
१६	धेनुकासुर वध	४०
१७	नाग लीला	४१
१८	दावाग्नि पान	४४
१९	प्रलम्बासुर वध	४६
२०	दावाग्नि मोचन	४७
२१	वर्षाऋतु वर्णन	४८
२२	गोपी वेणुगीत वर्णन	४९
२३	चीर हरण लीला	५०
२४	द्विजपत्नि वाचक	५२
२५	गोवर्द्धन पूजन लीला	५५
२६	व्रज रक्षण लीला	५९
२७	व्रजवासियों को श्रीकृष्ण के महापुरुषत्व का ज्ञान होना	६१
२८	इन्द्र द्वारा श्रीकृष्ण स्तुति	६२
२९	वैकुण्ठ चरित्र	६३
३०	एक भक्ता गोपी को मुक्ति प्राप्त	६५
३१	रास मण्डल लीला	६६
३२	गोपियों का कृष्ण गुणगान	७१
३३	गोपी कृष्ण सम्वाद	७२
३४	श्रीकृष्ण रास लीला	७४
३५	विद्याधर मोक्ष तथा शंखचूड़ का वध	७६
३६	श्रीकृष्ण यश वर्णन	७८
३७	अरिष्टासुर वध	७९
३८	केशी व व्योमासुर वध	८२
३९	अक्रूरजी की वृन्दावन यात्रा	८५
४०	चतुर्भुज रूप वर्णन	८९
४१	श्रीकृष्ण स्तुति	८९
४२	श्रीकृष्ण मथुरापुरी गमन	९०
४३	धनुष भंजन	९४
४४	कुबलिया पीड़ वध	९७
४५	कंस वध	१००
४६	उग्रसेन राज्याभिषेक	१०२
४७	उद्धव गमन	११०
४८	उद्धव गोपी सम्वाद	११३
४९	कुब्जागृह लीला	११८
५०	अक्रूर हस्तिनापुर गमन	११९
५१	जरासिंध पराजय	१२२
५२	कालयवन वध तथा मुचकन्द तरण एवं श्रीकृष्ण द्वारिका गमन	१२६
५३	रुक्मिणी कथा	१३०
५४	रुक्मिणी हरण लीला	१३७
५५	रुक्मिणी विवाह	१४३
५६	प्रद्युम्न जन्म शम्बर वध	१४९
५७	स्यामंतक मणि चरित्र	१५४
५८	शतधन्वा वध	१६०

अध्याय	विषय	पृष्ठ सं०
५९—श्रीकृष्ण के अन्य विवाह		१६७
६०—भौमासुर वध		१७४
६१—रुक्मिणी मान लीला वर्णन		१८२
६२—रुक्म वध		१८४
६३—ऊषा स्वप्न तथा अनुरुद्ध हरण		१९०
६४—ऊषा अनुरुद्ध विवाह		२०२
६५—नृगोपाख्यान		२१०
६६—बलराम जी का व्रज गवन		२१४
६७—पौण्ड्रक वध		२१७
६८—द्विविद कपि वध		२२०
६९—शाम्ब विवाह वर्णन		२२२
७०—श्रीकृष्ण गृहस्थाश्रम		२२५
७१—नारद जी द्वारा युधिष्ठिर सन्देश		२२८
७२—श्रीकृष्ण हस्तिनापुर गवन		२३०
७३—जरासन्ध वध		२३१
७४—बन्दी नृप मोक्ष		[illegible]
७५—शिशुपाल वध		२३९
७६—दुर्योधन मान भंग		२४३
७७—शाल्व वध		२४५
७८—सूत वध		२४९
७९—बलरामजी की तीर्थ यात्रा		२५१
८०—सुदामा चरित्र		२५३
८१—सुदामा दरिद्र संहार		२५६
८२—श्रीकृष्ण कुरुक्षेत्र गवन		२५८
८३—श्रीकृष्ण पत्नि व द्रोपदी सम्वाद		२६१
८४—वसुदेव कृत यज्ञ वर्णन		२६४
८५—देवकी मृत पुत्रानयन		२६६
८६—सुभद्रा हरण		२६८
८७—वेद स्तुति		२७१
८८—वृकासुर वध और मोक्ष		२७३
८९—भृगु परीक्षो पाख्यान		२७५
९०—द्वारिकापुरी वैभव वर्णन		२७८

॥ पद ॥

यशोदा तेरो भलो हियो है माई ।
कमल नयन माखन के कारण बाँधे ऊखल लाई ॥
जो सम्पदा देव मुनि दुर्लभ सपनेहु देइ न दिखाई ।
याही तें तू गरब भुलानी, घर बैठे निधि पाई ॥
सुत काहू को रोवत देखति, दौरि लेत हिय लाई ।
अब अपने घर लरिका सों, इती कहाँ जड़ताई ॥
बारम्बार सजल लोचन ह्वै चितवत कुमर कन्हाई ।
कहा करो बलि जाउँ छोरती तेरी सौंह दिवाई ॥
जो मूरति जल थल में व्यापक निगम न खोजत पाई ।
सो मूरत तू अपने आंगन चुटकी दै दै नचाई ॥
सुर पालक सब असुर संहारक, त्रिभुवन जानिमनाई ।
सूरदास यह प्रभु की लीला निगम नेति नित गाई ॥

॥ श्री गणेशाय नमः ॥

❀ श्री कविवर लल्लूलालजी कृत असली ❀

प्रेम सागर

(सचित्र)

पूर्वार्द्ध—

अध्याय १

दोहा—विघन बिदारन विरदवर, बारन बदन बिकास ।
वर देवहु बाढ़े बिसद, बानी-बुद्धि-बिलास ॥
युगल चरन जुगवत जगत, जपत रैन दिन तोहि ।
जग माता सरस्वति सुमिर, मुक्ति युक्ति देमोहि ॥

महाभारत के अन्त में जब श्रीकृष्णचन्द्र अन्तर्ध्यान हुए, तब पाँडव महा दुखित हो हस्तिनापुर का राज्य परीक्षित को दे आप हिमालय में गलने को चले गये और राजा परीक्षित सब देश जीत धर्मराज करने लगे। कुछ दिन पीछे एक दिन राजापरीक्षित आखेट को धाये थे वहाँ देखा कि एक गाय और बैल दौड़े चले आते हैं, तिनके पीछे मूसल हाथ में लिए एक शूद्र उन्हें मारता चला आता है। जब वे पास पहुँचे तब राजा ने शूद्र को बुलाय कर कहा—अरे तू कौन है जो गाय बैल को जान से मारता है। अपना नाम बता, क्या अर्जुन को तूने दूर गया जाना। जिससे उसका धनुष नहीं पहचाना ? पांडवों के कुल में ऐसा किसी को न पावेगा कि जिसके होते कोई दीन को सतावेगा। इतना कह राजा ने खड्ग हाथ में लिया। यह देख वह शूद्र डर कर खड़ा हो गया। फिर नृपति ने गाय और बैल को भी निकट बुलाय के पूछा कि तुम कौन हो? मुझे समझाकर कहो, देवता हो कि ब्राह्मण और क्यों भागे जाते हो ? निधड़क होके कहो, मेरे रहते किसी की इतनी सामर्थ नहीं जो तुम्हें दुःख दे। इतनो बात सुनकर बैल शिर झुका कर बोला—महाराज ! यह पाप रूप काले वस्त्र पहिने डरावनी सूरत जो आपके

सन्मुख खड़ा हुआ है सो कलियुग है, इसी के आने से मैं भागा जाता हूँ यह गाय स्वरूप पृथ्वी है, सो ये इसके डर से भाग चली और मेरा नाम धर्म है, मैं चार पाँव रखता हूँ–तप, सत्य, दया और शौच। सतयुगमें मेरे चरण बीस बिस्वे थे, त्रेता में सोलह, द्वापर में बारह, अब कलियुग में चार बिस्वे हैं इस लिए कलि के बीच में चल नहीं सकता। धरती बोली–धर्मावतार मुझसे भी इस युग में रहा नहीं जाता, क्योंकि शूद्र राजा हो अधिक अधर्म मेरे ऊपर करेंगे, उनका बोझ मैं न सह सकूँगी, इस भय से मैं भी भागती हूँ! यह सुनते ही राजा ने क्रोध कर कलियुग से कहा–मैं तुझे अभी मारता हूँ। वह घबरा कर राजा के चरणों पर गिरकर बोला–पृथ्वीनाथ! अब तो मैं तुम्हारी शरण हूँ, मुझे कहीं रहने को ठौर बताओ, क्योंकि तीन काल और चारों युग जो ब्राह्मणों ने बनाये हैं सो किसी भाँति मेटे न मिटेंगे। इतना बचन सुनते ही राजा परीक्षित ने कलियुग से कहा कि तुम इतनी ठौर रहो, जुआ, झूँठ, मदकी हाट, वेश्या के घर, हत्या, चोरी और स्वर्ण में। यह सुन कलि ने तो अपने स्थान को प्रस्थान किया और धर्म मन में रख लिया। पृथ्वी अपने रूप में मिल गई। फिर राजा नगर में आये और धर्मराज करने लगे।

कितने ही दिन पीछे राजा फिर एक समय आखेट को गये और चलते-चलते बड़े प्यासे भये सिर के मुकुट में तो कलियुग रहता ही था उसने अपना अवसर पा राजा को अज्ञान किया। राजा प्यास के मारे जहाँ लोमशऋषि आसन मारे नयन मूँद हरि का ध्यान लगाये तप कर रहे थे वहाँ आये। उन्हें देख परीक्षित मन में कहने लगा कि यह अपने तप के घमण्ड से मुझे देख आँखें मूँद रहा है। ऐसी मति ठान एक मरा साँप जो वहाँ पड़ा था ऋषि के गले में डाल अपने घर आया मुकुट उतारते ही राजा को ज्ञान हुआ तो सोच कर कहने लगा कि कंचन में कलियुग का बास है, यह मेरे शीश पर था, इससे मेरे कुमति हुई जो मरा सर्प लोमशऋषि के गले में डाल दिया सो मेरा उद्धार अब कैसे होगा।

जहाँ लोमशऋषि थे वहाँ कितने एक लड़के खेलते हुए जो निकले तो मरा साँप उनके गले में देख अचम्भे में रहे और घबराकर आपस में कहने लगे कि भाई! कोई उनके पुत्र से जाकर कहदे। वह उस उपवन में कौशिकी नदी के तीर

ऋषि के बालकों के सङ्ग खेलता है। यह सुनते ही एक लड़का वहाँ दौड़ा गया जहाँ श्रङ्गीऋषि बालकों के साथ खेलता था। कहा बन्धु ! तुम यहाँ खेलते हो ? कोई दुष्ट मरा हुआ काला नाग तुम्हारे पिता के गले में डाल गया है। यह सुनते ही श्रङ्गीऋषि के नयन लाल हो गये, और क्रोध कर कहने लगे कि कलियुग में जो राजा उपजे हैं वे अभिमानी धन के मद में अन्धे हो गये हैं,ऐसे कह श्रङ्गी-ऋषि ने कौशिकी नदी का जल चुल्लू में ले राजा परीक्षित को शाप दिया कि तुझ को तक्षक सर्प सातवे दिन काटेगा।

राजा को शाप देकर अपने पिता के पास जा गले से साँप निकाल के कहने लगा—हे पिता ! तुम अपनी देह सँभालो मैंने उसे शाप दिया, जिसने आपके गले में मरा सर्प डाला था। यह बचन सुनते हो लोमशऋषि सचेत हो नयन उघार अपने ज्ञान से बिचार कर बोले अरे पुत्र ! तैंने यह क्या किया क्यों राजा को शाप दिया। उसके राज्य में हम सुखी हैं कोऊ पशु पक्षी भी दुखो न हुआ, ऐसा धर्म का राज्य था कि जिसमें सिंह, गाय एक साथ रहते आपस में कुछ न कहते और पुत्र जिसके देश में हम बसते हैं। क्या हुआ उसने मरा सर्प मेरे गले में डाला था, उसे शाप क्योंदिया। तनिक अपराध पर ऐसा शाप तैंने दिया, बड़ा यह तैंने पाप किया कुछ बिचार मन में नहीं किया गुण छोड़ अवगुण ही लिया साधु को चाहिये शील स्वभाव से रहे, आप कुछ न कहे, और की सुन ले सब का गुण ले और अवगुण को तज दे।

लोमश ऋषि नै एक चेले से कहा कि तुम राजा परीक्षित को जाकर जतादो कि तुम्हें शृङ्गीऋषि ने शाप दिया है, लोग तो भले ही दोष देंगे ही, पर राजा सावधान तो हो जाँयगे। इतना बचन गुरु का मान कर चेला राजा के पास आया और कहा महाराज, तुम्हें शृङ्गीऋषि ने यह शाप दिया है कि सातवे दिन तक्षक डसेगा, अब तुम वह कार्य करो जिससे कर्म की फाँसी से छूटो, सुनते हो राजा प्रसन्नता से खड़ा हो हाथ जोड़ कहने लगा कि मुझ पर ऋषिने बड़ो कृपा की जो शाप दिया, क्यों कि मैं माया मोह के अपार शोक सागर में पड़ा था, सो निकाल बाहर किया, जब मुनि का शिष्य विदा हुआ तब राजाने आप तो वैरा-

ग्य लिया और जनमेजय को बुलाय राज पाट देकर कहा बेटा ! गौ, ब्राह्मण की रक्षा कीजियो और प्रजा को सुख दीजो। इतना कह रनवास में आये, सभी रानी राजा को उदास देखते ही पावों पर गिर रो २ कर कहने लगीं कि महाराज ! तुम्हारा वियोग हम अबला न सह सकेंगी, इससे साथ जायें तो भला। राजा बोला पतिव्रता स्त्रीको उचित है जिससे अपने पति का धर्म रहे वही काम करे।

इतना कह धन,कुटुम्ब और राज्यकी माया तज निर्मोही हो आप योगसाधने गङ्गा के तीर जा बैठा इसको जिसने सुना वह बिना रोये न रहा और यह समाचार जब मुनियों ने सुना कि राजा परीक्षित श्रङ्गी ऋषि के शापसे मरने को गङ्गा तीर पर आ बैठा है तब व्यास, बशिष्ठ, भरद्वाज, कात्यायन, पाराशर, नारद, विश्वामित्र बामदेव, जमदग्नि आदि अठासी सहस्र ऋषि आये और आसन बिछाय पंक्तिमें बैठ गये अपने अपने ज्ञानसे अनेक-अनेक भाँति के धर्म राजा को सुनाने लगे कि इतने में राजा की श्रद्धा देख पोथी काँख में लिये दिगम्बर वेष में श्रीशुकदेव जी भी आन पहुँचे उनको देखते ही जितने मुनि थे सब खड़े हुए और राजा परीक्षित भी हाथ बाँधे खड़ा हो विनती कर कहने लगा कि हे कृपानिधान ! मुझ पर बड़ी दया की जो इस समय आपने मेरी सुधि ली,इतनी बात सुन कर शुकदेव मुनिजी बैठे। राजा ऋषियों से कहने लगा कि महाराज ! व्यास जी के जो बेटे के पोते, जिनको देख तुम बड़े २ मुनीश उठे सो तो उचित नहीं, इसका कारण कहो जो मेरे मनका सन्देह जाय। यह सुन पाराशर मुनि बोले राजा जितने हम अवस्था में बड़े ऋषि हैं उतने ही ज्ञान में शुक से छोटे हैं इस लिए सब ने शुक का आदर मान किया। राजा का कोई बड़ा पुण्य उदय हुआ जो शुकदेव जी आये, ये हम सब से उत्तम धर्म कहेंगे, जिसके सुनने से तू जन्म-मरण से छूट भव सागर से पार होगा। राजा परीक्षित ने शुकदेवजी को दण्डवत् कर पूछा कि महाराज मुझे समझाय के कहो कि किस रीति से कर्म के फन्दे से सात दिन की अवधि में मोक्ष को प्राप्त हूँगा। अधर्म अपार है, मैं इस भवसागर से कैसे पार हूँगा।

श्री शुकदेवजी बोले राजा ! तू ये थोड़े दिन मत समझ, मुक्ति तो होती है

एक घड़ी के ध्यान में जैसे राजा खट्वाँग को नारद मुनिनै ज्ञान कराया था और उसने दो ही घड़ी में मुक्ति पाई थी, तुझे तो सात दिन का समय है। जो एक चित्त हो करो ध्यान, तो सब समझोगे अपने ही ज्ञान। यह देहक्या है किस का है वास, कौन करता है इस में प्रकाश। यह सुन राजा ने हर्ष से पूछा कि महाराज ! सब धर्मों में उत्तम कौनसा है, सो कृपा कर कहो। तब शुकदेव जी बोले राजा ! जैसे सब कर्मों में वैष्णव धर्म बड़ा है तैसे ही पुराणोंमें श्रीमद्भागवत जहाँ हरि भक्त यह कथा सुनते हैं वहाँ ही सब तोर्थ और धर्म आते हैं। भागवत के समान कोईभी पुराण नहीं है इस कारण मैं तुझे बारह स्कन्ध महापुराण सुनाता-हूँ जो व्यास मुनि ने मुझे पढ़ाया है तू श्रद्धा समेत आनन्द से चित्तदे सुन। तब तो राजा परीक्षित् बड़े प्रेमसे सुननै लगे और श्रीशुकदेवजी नियमसे सुनानै लगे।

नौ स्कन्ध की कथा जब मुनि ने सुनाई तब राजाने कहा दीनदयालू दया कर श्री कृष्णावतार की कथा कहिये क्यों कि हमारे सहायक कुलपूज्य वही हैं। शुकदेवजी बोले राजा ! तुमने मुझे बड़ा सुख दिया जो यह प्रसंग पूछा, सुनो मैं कहता हूँ यदुकुल में पहले भजमान नाम राजा थे जिनके पुत्र पृथु, पृथु के विदुर थे उनके शूरसेन जिन्होंने नौखण्ड पृथ्वी जीत कर यश पाया। उनकी स्त्री का नाम मरिष्या उनके दस लड़के और पाँच लड़कियाँ तिनमें बड़े पुत्र वसुदेव जिनकी स्त्री के आठवें गर्भ में श्री कृष्णचन्द्र जी ने जन्म लिया शूरसेन की पाँच पुत्रियों में सबसे बड़ी पुत्री कुन्ती थी जो पांडु को ब्याही थी। जिनकी गाथा महा भारत में कही है और वासुदेवजी पहले तो रोहिण नरेश की बेटी रोहिणी को ब्याह लाये तिसके सीछे सत्रह ब्याह किये। तब अठारह पटरानी हुईं तब मथुरामें कंस की बहिन देवकी को ब्याहा तहाँ आकाश वाणी हुई कि इस लड़की के आठवें गर्भ में कंस का काल उपजेगा। यह सुन कंस ने बहिन बहनोई को एक घर में बन्दकर दिया और श्रीकृष्ण ने वहाँ ही जन्म लिया। राजा परीक्षित बोले महाराज ! कंस जन्म कैसे हुआ किसने उसे महा वर दिया और कौन रीति से कृष्ण जन्मे और फिर किस किस विधि से गोकुल पहुँचे यह तुम मुझे समझा के कहो।

श्रीशुकदेवजी बोले—मथुरापुरी का आहुक नाम राजा तिसके दो बेटे थे एक

श्री शुकदेवजी का राजा परीक्षित को कथा सुनाना

का नाम देवक दूसरे का नाम उग्रसैन था। कितने ही दिन पीछे उग्रसैन वहाँ का राजा हुआ जिसकी एकही रानीथी उसका नाम पवनरेखा था सो वह अति सुन्दरी और पतिव्रता थी। आठों पहर स्वामी की आज्ञा ही में रहे एक दिन कपड़ों से भई तौ पति की आज्ञा ले सखियों के साथ रथ में चढ़ कर बनमें खेलने को गई वहाँ चहुँ ओर बृक्षों में फल फूल लगे हुए थे सुगन्धित मन्द २ ठण्डी हवा बह रही थी कोकिल कपोत कीर-मोर मीठी मीठी मन भावन बोलियाँ बोलरहे थे। रानी दृश्य को देख रथ से उतर कर चली तो अचानक एक ओर अकेली भूल से जा निकली द्रुमलिका नाम का राक्षस भी संयोग से आ पहुँचा, वह इसके योवन और रूप की छवि देख कर छक रहा और मन में कहने लगा कि इससे भोग करना चाहिये। निदान तुरन्त राजा उग्रसैन का स्वरूप बना रानी के पास जाकर बोला, तू मुझसे मिल रानी बोली महाराज दिन को कामकेलि करना उचित नहीं क्योंकि इसमें शील और धर्म जाता है आप ज्ञानवान होकर ऐसी कुमति बिचारते हैं।

जब पवनरेखा ने यह कहा, तब द्रुमलिक ने रानी का हाथ पकड़ खेंच लिया और प्रसङ्ग किया। इस भाँति छलसे भोगकर अपना असली रूप धारण कर लिया रानी अति दुःख पाय करके बोली—अरे अधर्मी! तूने यह क्या अनर्थ किया जो मेरे सत को खो दिया। धिक्कार है तेरे माता—पिता और गुरू को जिसने तुझे

ऐसी बुद्धि दी। जो नर देह पाकर किसी का सत भङ्ग करते हैं सो जन्म जन्म नरक में पड़ते हैं द्रुमलिक बोला, रानी! तू शाप मत दे, तेरी कोख बन्द देख मेरे मनमें बड़ी चिंता थी सो गई। आज से हुई गर्भ की आस लड़का होगा दसवें मास और मेरी देह के स्वभाव से तेरा पुत्र सौ खंड पृथ्वी को जीत राज्य करेगा और श्रीकृष्णजी सों लड़ेगा। मेरा नाम कालनेमी था, तब विष्णु से युद्ध किया था, अब जन्म ले लिया तो द्रुमलिक नाम कहाया। इतनी बात कह जब द्रुमलिक चला गया तब रानी को भी कुछ मन में धीरज भया।

दोहा--जैसी हो भवतव्यता, तैसी उपजे बुद्धि। हौनहार हृदय बसे, विसर जाय सब सुद्धि॥

इतने में सब सखी आईं। रानी का श्रङ्गार बिगड़ा देख सहेला बोल उठीं, इतनी देर तुझै कहाँ लगी और ऐसी गति कैसे हुई। पवनरेखा ने कहा सुनो सहेली! तुमने इस बनमें तजी अकेली, एक बन्दर आया उसने मुझे अधिक सताया तिसके डर से मैं थर-थर काँपती हूँ। यह बात सुनकर सबकी सब घबराईं और रानी को रथ पर चढ़ाय कर लाईं। जब दस महीने का पूरा लड़का हुआ तिस समय बड़ी आँधी चलने लगी धरती डोलने लगी अँधेरा ऐसा हुआ जो दिनकी रातहोगई तारे टूट२कर गिरने व बादल गर्जनेऔर बिजली कड़कनेलगी।

माघ सुदी तेरस बृहस्पतिवार को राजा कंस ने जन्म लिया सो राजा उग्रसेन ने प्रसन्न हो नगर की मंगलामुखियों को बुलाय मंगलाचार करवाये और सब ब्राह्मण, पंडित, ज्योतिषियों को भी अति मान-सन्मान से बुलाये भिजवाये। राजाने बड़ी भाव भक्ति से आसन देदे बैठाये तब ज्योतिषियों ने लग्न साध मुहूर्त बिचार कर कहा पृथ्वीनाथ! यह लड़का कंस नाम तुम्हारे वंश में उपजा सो अति बलवान होगा राक्षसों को साथ ले राज्य करेगा और देवता और हरिभक्तों को दुःख दे आपसे राज्य छीन निदान हरिके हाथ से मरेगा।

शुकदेव मुनि बोले राजा! अब मैं उग्रसन के भाई देवक की कथा कहता हूँ कि उनके चार बेटे थे और छः बेटियाँ, सो छहों बसुदेव को ब्याह दीं, सातवीं देवकी हुई जिसके होने से देवताओं को बड़ी प्रसन्नता हुई। उग्रसेन के दस पुत्रों में सब से बड़ा कंस ही था जब से जन्मा तब से यह काम करने लगाकि नगर में जाय छोटे२

लड़कों को पकड़ लावे और मार डाले जो बड़े होंय तिनकी छाती पर चढ़, गला घोंट जी निकाले इस दुख से कोई कहीं निकलने न पावे, सब कोई अपने २ लड़कों को छिपावें प्रजा कहै यह दुष्ट कंस उग्रसैन का नहीं है किसी महा पापी ने कंस का जन्म लिया है। जिसने सारे नगर को सताया है। उग्रसेन ने कंस को बुला कर बहुत समझाया पर उनका कहना उसके जी में कुछ भी न भाया। निदान जब कंस आठ वर्ष का भया तब मगध देश पर चढ़ गया, वहाँ का राजा जरासिंध बड़ा योधा था तिससे मल्ल युद्ध किया तो उसने कंस का बल देख लिया और हार मान अपनी दो बेटियाँ ब्याह दीं, उन्हें ले मथुरा में आया और उग्रसेन से बैर बढ़ाया। एक दिन अपने पिता से बोला कि तुम राम नाम कहना छोड़ दो और महादेव का जप करो उसने कहा मेरे तो कर्त्ता दुखहर्ता वहीं हैं जो उन को ही न जपूँगा तो अधर्मी हो कैसे भवसागर पार हूँगा। यह सुन कंस ने बाप को पकड़ कर सारा राज ले लिया और नगर में यह ड्यौढ़ी फेरदी कि कोई यज्ञ, दान धर्म तप और राम नाम जप करने न पावेगा तब ऐसा अधर्म बढ़ा कि गौ, ब्राह्मण, हरि के भक्त दुख पाने लगे, धरती बोझ से मरने लगी। एक दिन दल ले राजा इन्द्र पर चढ़ चला वहाँ मन्त्री ने कहा महाराज ! इन्द्रासन बिना तप किये नहीं मिलता। आप बल का गर्व न करिये देखो गर्वने रावणको खोदियाकि जिनके कुलमें एकभी न रहा।

शुकदेव राजा परीक्षित से कहने लगे कि राजन्! जब पृथ्वी पर अति अधर्म होने लगा, तब पृथ्वी दुःख पाय घबराय गाय का रूप बनाय रँभाती २ देवलोक में गई और इन्द्र की सभा में जाय शिर झुकाय उसने अपनी सब पीर कही कि महाराज ! संसार में असुर अति पाप करने लगे हैं, तिनके डर से धर्म तो उठ गया, और मुझे भी आज्ञा दो कि नरपुर छोड़ के रसातल को जाऊँ यह बात सुन देवताओं को साथ ले ब्रह्मा के पास गये ब्रह्माजी सब को महादेवजी के निकट ले गये। महादेवजी बोले हे ब्रह्माजी ! ये बात मेरे हाथमें नहीं है। एक तो पृथ्वी का भार उतारना व दूसरे मोक्ष शेष में सब कर सक्ता हूँ। अतएव सबको साथ ले वहाँ गये जहाँ क्षीर सागर में नारायण सा रहे थे उनको सोते जान ब्रह्मा, रुद्र, इंद्र सब देवताओं को साथ ले हाथ जोड़ विनती करने लगे महाराजाधिराज !

आपकी महिमा कौन कह सके। जब २ दैत्य तुम्हारे भक्तों को दुःख देते हैं, तब २ तुम आप ही उनकी रक्षा करते हो नाथ ! अब कंस के सताने से पृथ्वी अति व्याकुल हो पुकार करती है। उसकी सुधि बेग लीजै और असुरों को मार साधुओं को सुख दीजै।

तब आकाशवाणी हुई कि तुम सब देवी देवता ब्रजमण्डल में जाय मथुरा नगरी में जन्म लो, पीछे चार स्वरूप धर हरि भी बसुदेव के घर देवकी की कोख में अवतार लेंगे और बाल लीलाकर नन्द यशोदा को सुख देंगे। यह आकाश-बाणी ब्रह्मा ने सबको बुझाकर कही, तत्पश्चात् सुर, मुनि, किन्नर और गंधर्व अपनी २ स्त्रियों समेत जन्म ले ब्रजमण्डल में यदुवंशी और गोप कहाये और जो चारों वेदकी ऋचायें थी सो भी ब्रह्मा की आज्ञा से ब्रज में गोपियाँ कहलाईं। तब क्षीर समुद्र में हरि विचार करने लगे कि पहिले लक्ष्मण होवें बलराम पीछे बासुदेव हो मेरा नाम भरत प्रद्युम्न, शत्रुघ्न अनिरुद्ध और सीतारुक्मिणी का अवतार लेगी।

दोहा-अद्भुत रचना कृष्ण की, नर तन अजर अगेह। खेल तत्व बत्तीस का, बिधि रचते नर देह।

इति श्रीलल्लूलाल कृत प्रेमसागर भगवानकृष्ण जन्म प्रसंग कथा प्रथमो अध्यायः ॥ १ ॥

अध्याय-२

श्री शुकदेवजी बोले हे महाराज ! कंस तो इस अनीति से मथुरा में राज्य करने लगा और उग्रसेन काराग्रह में दुःख सहने लगे। देवक जो कंस का चचा था, उसकी कन्या देवकी ब्याह के योग्य हुई तो कंस से कहा कि यह लड़की किस को दें तब कंस बोला शूरसैन के पुत्र बसुदेव को दीजिये। इतनी बात के सुनते ही देवक ने एक ब्राह्मण को बुलाय शुभ लग्न ठहराय शूरसैन के घर टीका भेज दिया। तब तो शूरसैन बड़ी धूम-धाम से बरात बनाय मथुरा में बसुदेव को ब्याहने आये।

बरात का आगवन सुन अति मान आदर से आगौनी की जनवासा दिया। फिर खिलाय पिलाय सब बरातियों को मण्डप के नीचे लेजाय बैठाया और बेद की विधि से कंस ने बसुदेव को कन्यादान दिया तिसके दहेज में पन्द्रह सहस्र घोड़े चार सहस्र हाथी अट्ठारह सौ रथ, दास-दासी अनेक दे कंचन के थाल रत्नजटित आभूषण से भर २ के अनगिनत दिये। तब बरातियों को भी अलङ्कार समेत आगे

पहराये। पीछे सब जब बरात पहुँचाने चले तब आकाशवाणी हुईकि अरे कंस! जिसे तू पहुँचाने चला है उसी का आठवाँ पुत्र तेरा काल होकर उपजेगा उसके ही हाथ तेरी मृत्यु है।

यह सुन कंस डर से काँप उठा और देवकी की चोटी पकड़ रथ के नीचे खींच लिया खड्ग हाथ में ले कहने लगा जिस पेड़को जड़ से उखाड़िये उस में फूल फल काहे को लगेगा। अब इसी को मारूँ तो निर्भय राज करूँ। यह देख कर बसुदेव मन में बिचारने लगे, इस मूर्ख ने दिया सन्ताप, जानता नहीं पुण्य और पाप मैं अब क्रोध करताहूँ तो काज बिगड़ेगा इससे इस समय क्षमा करना हीयोग्य है।

जो बैरी खेंचे तलवार। करें साधु तिनको अनुहार। समझा मूढ़ सोइ पछिताय। जैसे पानी आग बुझाइ॥

बसुदेव कंस के पास जा, हाथ जोड़ बिनती कर कहने लगे कि सुनो पृथ्वीनाथ! तुमसा बली संसार में कोई नहीं और सब तुम्हारे छाँह तले बसते हैं। ऐसे शूर हो स्त्री पर शस्त्र छोड़ो, यह अनुचित है। उसमें भी बहिन के मारने से महा पाप होताहै, तिसपर भी मनुष्य अधर्म तब करे जब जाने कि मैं अभी न मरूँगा इस संसार की तो यही रीति है, इधर जन्मा उधर मरा अपनी अबला अन्धी बहिन को छोड़ दीजै। पर कंस अपना काल जान और भी झुँझलाया। तब बसु-

● देवकी को बध करने के लिये कंस का उद्यत होना ●

नारद और कंस संवाद

देव सोचने लगे यह पापी तो असुर बुद्धि किये अपने हठ की टेक पर है जिससे इसके हाथ से यह बचे सो उपाय किया जाना चाहिये। ऐसे बिचार मनमें कहने लगे अब तो इससे यह कह देवकी को बचाऊँ कि जो पुत्र मेरे जन्मेगा सो तुझे दूँगा। पीछे किसने देखा है लड़का होय कि लड़की यह दुष्ट मरे कि न मरे यह अवसर तो टलै फेर समझा जायगा। इस भाँति मन में निश्चय कर बसुदेव ने कंस से कहा महाराज! तुम्हारी मृत्यु इसके पुत्र के हाथ से होयगी अतः मैंने एक ठहराई है कि देवकी के जितने लड़के होंगे उतने मैं तुम्हें सोंप दूँगा। यह बचन मैंने तुमको दिया। ऐसी बात जब बसुदेव ने कही तब कंसने मानली और देवकी को छोड़ कहने लगा हे बसुदेव तुमने अच्छा बिचार किया जो ऐसे भारी पापसे मुझे बचा लिया। इतनी कह बिदा हो वे सब अपने घर गये।

कितने दिन पीछे जब पहला पुत्र देवकी के हुआ तब बसुदेव ले कंस पै गये और रोता हुआ लड़का आगे रख दिया। देखते ही कंस ने कहा बसुदेव तुम बड़े सत्यवादी हो मैंने आज जाना क्यों कि तुमने मुझसे कपट न किया निर्मोही हो अपना पुत्र ला दिया इसमे कुछ डर नहीं है यह बालक मैंने तुमको दिया इतना

सुन बालक ले दण्डवत् कर बसुदेव जी तो अपने घर आये और उसी समय नारद मुनिजी ने जाय कन्स से कहा राजा ! तुमने यह क्या किया जो बालक उलटा फेर दिया। क्या तुम नहीं जानते कि बसुदेव की सेवा करने को सब देवताओं ने ब्रज में आय जन्म लिया है और देवकी के आठवें गर्भ में श्रीकृष्ण जन्म ले सब राक्षसों को मारकर भूमि का भार उतारेंगे। इतना कह नारद मुनि ने आठ लकीर खेंच गिनवाईं जब आठ ही गिनती में आईं तब डर कर कंस ने लड़के समेत बसुदेवजी को बुला भेजा। नारद मुनि तो यों समझाय बुझाय चले गये और कंस ने बसुदेव से बालक ले मार डाला ऐसे ही जब २ पुत्र होय तब २ बसुदेव ले आवें और कंस मार डाले। इसी रीति से छः बालक मारे तब सातवें गर्भ में शेष रूप जो भगवान हैं उन्होंने आ निवास किया। यह कथा सुन राजा परीक्षित ने शुकदेव मुनि से पूछा महाराज नारद मुनि ने जो अधिक पाप करवाया उसका ब्यौरा समझा कर कहो। जिससे मेरे मन का सन्देह जाय। श्रीशुकदेवजी बोले राजन् ! नारद मुनिने बिचारा कि यह अधिक पाप करे तो श्री भगवान तुरन्त प्रगटेंगे।

दो०-होनहारहोकर रहैं,बिसर जायसब सुद्ध।जैसी जस होतव्यतातैसीबनजायबुद्ध॥

इति श्री लल्लूलालकृत प्रेमसागरे देवकी विवाह बालक बधो नाम द्वितीयो अध्यायः ॥२॥

अध्याय-३

शुकदेवजी राजा परीक्षित से कहने लगे कि राजा ! गर्भ में आये हरी और ब्रह्मादिक ने स्तुति करी, देवो जिस भाँति बलदेवजी को गोकुल ले गई तिस रीति को कहता हूँ। एक दिन राजा कन्स अपनी सभा में आय बैठा और जितने दैत्य उसके थे उनको बुलाकर कहा सुनों सब देवता पृथ्वी पर जन्म ले चुके हैं उन्हीके संग श्रीकृष्ण भी अवतार लेंगे, यह भेद मुझसे नारद मुनि समझाय कह गये हैं इससे अब उचित है कि तुम जाकर सब यदुबंशियों का नाश करो और एक भी जीता न बचे यह आज्ञा पा सबके सब दण्डवत कर चले, नगर में आ ढूँढ़ पकड़ २ कर बाँधने लगे। खाते, पीते, खड़े, बैठे, सोते, जगते, चलते, फिरते, जिसे पाया तिसे न छोड़ा। सब को एक ठौर लाय और जला २ डुबा २ पटक २ दे दे कर मार डाला इस रीति से छोटे बड़े भाँति २ के भयानक भेष बनाय नगर

नगर गाँव २ गली २ घर २ खोज २ मारने लगे और यदुवंशी दुःख पाय २ देश छोड़ छोड़ प्राण बचा कर भागने लगे।

उसी समय बसुदेव की जो अन्य स्त्रियाँ थीं सो रोहिणी समेत मथुरा से गोकुल में आईं। वहाँ बसुदेव जो के परम मित्र नन्द जी रहते थे उन्होंने हित से आशा भरोसा दे अपने यहाँ सत्कार से रक्खा तब वे आनन्द से रहने लगीं। तब कंस देवताओं को यों सताने और अति पाप करने लगा। तब विष्णु ने अपने नेत्रों से अपनी एक महामाया उपजाई। वह हाथ बाँध सन्मुख आई उसने कहा अब तू जा संसार में अवतार ले मधुपुरी के बीच जहाँ दुष्ट कंस मेरे भक्तों को दुःख देता है और (कश्यप अदिति) जो वसुदेव देवकी ही ब्रज में जन्मे हैं जिनको कैद कर रक्खा है छः बालक तौ उस कंसने मार डाले अब सातमें गर्भ लक्ष्मण जो हैं। उनको देवकी के उदर से निकाल गोकुल में जाकर इस रीति से रोहिणी के पेट में रख दीजो कि कोई दुष्ट न जानें और और सब वहाँ के लोग तेरा यश बखानें।

इस भाँति माया को समझाय श्री नारायण बोले कि तू पहले जाकर यह काय करके नन्द के घर में जन्म ले, पीछे बसुदेव गृह में अवतार ले। मैं भी नन्द के घर आता हूँ। इतना सुनते ही माया उठ मथुरा में आई और मोहनी रूप बना वसुदेव के गृह में प्रवेश कर बैठ गई।

चौपाई—जो छिपाय गर्भ हर लिया। जाय रोहिणी को सो दिया।
जाने सब पहला आधान। भये रोहिणी के श्री भगवान॥

इस रीति से श्रावण सुदी चौदस बुधवार को बल्देव जी ने गोकुल में जन्म लिया और माया ने बसुदेव देवकी को जाय स्वप्न दिया कि मैंने तुम्हारा पुत्र गर्भ से ले जाय रोहिणी को दिया है तुम किसी बात की चिंता मत कीजो सुनते ही बसुदेव देवकी जाग पड़े और आपस में कहने लगे कि यह तो भगवान ने भला किया कंस को उसी समय चेताना चाहिये नहीं तो क्या जानिये पीछे क्या दुःख दे। यों सोच समझ रख वालों से बुलाकर कहा। उन्होंने कंस को जा सुनाया कि महाराज देवकी का गर्भ अधूरा गया बालक कुछ पूरा न भया सुनते ही कंस घबरा कर बोला कि तुम अब की बेर चौकसी करियो क्योंकि आठवें ही गर्भ का मुझे डर है

जो आकाशवाणी कह गई है! राजा परीक्षित ने पूछा हे महाराज मेरा संदेह मिटाइये कि देवकी के गर्भ में बास बलराम जी ने किया और रोहिणीमात कैसे भई। यह सुन श्री शुकदेवजी बोले हे राजा बल्देवजी को नारायण की आज्ञानुसार जो योगमाया ने देवकी के गर्भ से निकाल रोहिणीजी के गर्भ में बास करा दिया इसलिये वह माता कहलाई बल्देवजी के जन्म के बाद जब श्री कृष्णजी देवकी के गर्भ में आये तभी माता ने जा नन्द की नारी यशोदा के पेट में बास किया। दोनों गर्भ से थीं कि एक पर्व में नहाने गईं। वहाँ संयोग से यशोदा भी आन मिली तो आपस में दुख सुख की चर्चा चली। निदान यशोदा ने देवकी को बचन दे कहा कि तेरा बालक मैं रक्खूँगी, अपना तुझे दूँगी। ऐसे बचन दे यह अपने घर आई और वह अपने घर गई। आगे जब कंस ने जाना कि देवकी को आठवाँ गर्भ रहा तब जा बसुदेव का घर घेरा चारों ओर दैत्यों की चौकी बैठादी और वसुदेवजो को बुलाकर कहा कि अब तुम मुझसे कपट न कीजो और अपना लड़का ला मुझको दीजो, तब मैंने तुम्हारा ही कहना मान लिया था।

ऐसे कह वसुदेव देवकी को हथकड़ी पहिराय एक कोठे में मूँद कर ताला दे निज मन्दिर आ, मारे डर के उपवास कर सो रहा। फिर भोर होते ही वहीं गया जहाँ वसुदेव देवकी थे, गर्भ का प्रकाश देख कहने लगा इसी यम गुफा में मेरा काल है, मार तो डालूँ पर अपयश से डरता हूँ क्योंकि बलवान हो स्त्री को मारना उचित नहीं भला इसके पुत्र ही को मारूँगा यों कह आ गज, सिंह स्वान और अपने बड़े २ योद्धा यहाँ चौकसी को रखवाये और आप भी नित चौकसी कर आवै एक पल भो न चैन पावै जहाँ देखे आठ पहर चौंसठ घड़ी कृष्ण रूप काल ही समान दृष्टि आवे और चितातुर हो रात दिन गमावै।

इधर कंस की तो यह दशा थी, उधर बसुदेव और देवकी इन दिनों महा कष्ट में श्रीकृष्ण ही को मनाते थे कि इस बीच भगवान ने आ उन्हें स्वप्न दिया उनके मन का सोच दूर किया हम बेग ही जन्म ले तुम्हारी चिंता मेटते हैं यह सुन बसुदेव देवकी जाग पड़े इतने में ब्रह्मा, रुद्र, इन्द्रादि सब देवता अपने २ बिमान छोड़ अलखस्वरूप बन बसुदेव के गृह में आये और हाथ जोड़ वेद गाय गाय गर्भ की

स्तुति करने लगे उस समय उनको तो किसी ने न देखा पर वेद की धुनि सबने सुनी यह अचरज देख रखवाले बहुत अचम्भे में हुए और वसुदेव देवकी को निश्चय हुआ कि भगवान बेगही हमारी पीर हरेंगे।

इति श्री लल्लूलाल कृते प्रेमसागरे वन्देव जन्म व गर्भस्तुतितो तृतीयोऽध्यायः--

अध्याय-४

श्रीशुकदेवजी बोले कि हे राजा जिस समय श्रीकृष्णका जन्म हुआ तिस काल सब ही के जी में ऐसा आनंद उपजा कि दुख का नाम भी न रहा हर्ष से लगे बन उपवन हरे हो २ फूलने,नदी,नाले सरोवर झरने,तिन पर भाँति२ के पक्षी किलोल करने और नगर २ गाँव २ घर २ मङ्गलाचार होने ब्राह्मण यज्ञ रचने,दसों दिशाके दिग्पाल हर्षने बादल ब्रजमंडल पर फिरते देवता अपने २ विमानों में बैठे आकाश से फूल बरसाने, विद्याधर गंधर्व चारण ढोल दमामे भेरी बजाय २ गुण-गाने और एक ओर उर्वशी आदि सब अप्सरा नाचने लगी।

दो०-प्रगटे मोहनलालजी भादों अष्टमी बुधवार। रोहिणी नक्षत्र जहाँ जोग भए नाम भया नंदकुमार॥

भगवान ने जिनका मेघवर्ण, चन्द्रमुख, कमलनयन, पीताम्बर काछे, मुकुट धरे बैजयन्तीमाला और रत्नजटित आभूषण पहरे, चतुर्भुज रूप किये शंख चक्र, गदा, पद्म, लिये वसुदेव देवकी को दर्शन दिया,देखते ही अचम्भे में हो उन दोनों ने ज्ञान से बिचारा तो आदि पुरुष को जाना तब हाथ जोड़ विनती कर कहा हमारे बड़े भाग्यहैं जो आपने दर्शन दिया और जन्म मरण का निबेड़ा किया।

इतनी प्रार्थना कर पहली कथा सुनाई जैसे कंस ने दुख दिया था। तब श्री-कृष्णचन्द्र बोले तुम अब किसी बात की चिंता मन में मत करो मैंने तुम्हारे दुःख को दूर करने को ही अवतार लियाहै। पर इस समय मुझे गोकुल पहुँचा दो और इसी बिरियाँ यशोदा के लड़की हुई है सो कंस को लादो और अपने जाने का कारण कहता हूँ सो सुनो।

दो०-नन्द यशोदा तप करो,मोही सों मन लाय। देखन चाहत बाल सुख रहौं कछुक दिन जाय॥

फिर कंस को मार आन मिलूँगा तुम अपने मन में धैर्य धरो। ऐसे समझाय श्रीकृष्ण बालक बन रोने लगे और अपनी माया फैलादी तब तो वसुदेव देवकी

का ज्ञान गया और जाना कि हमारे पुत्र भया यह समझ दस सहस्र गायें मन में संकल्प कर लड़के को गोद में उठा छाती से लगा लिया। उसका मुख देख दोनों लम्बी २ श्वासें भर आपस में कहने लगे जो किसी रीति से इस लड़के को भगा दीजै तो पापी कंस के हाथ से प्राण बचे। बसुदेव बोले—

चौपाई—बिधना बिन राखे नहिं कोई। करम लिखा सोई फल होई॥
तब कर जोरि देवकीकहै। नंदमित्र गोकुल में रहै।पीर यशोदा मैन हमारी। नारि रोहिणी तहाँ तिहारी

इस बालक को वहाँ ले जाओ, यों सुन बसुदेव अकुला कर कहने लगे इस कठिन बन्धन से कैसे छूटूँ। इतनी कही तो सब बेड़ी हथकड़ी खुल पड़ीं चारों

बसुदेव का श्री कृष्ण को लेकर गोकुल जाना

ओर के किवाड़ खुल गये, पहरुए अचेत हो नींद वश भए, तब तो बसुदेवजी ने श्रीकृष्ण का सूप में रख शिर पर धर लिया, और झटपट हीं गोकुल को गये।

सोरठा—ऊपर बरसे मेघ, पीछे सिंह गुजरे। सोचत हैं बसुदेव, यमुना देखि प्रवाह अति॥ २॥

ऐसा बिचारकर भगवान का ध्यान धर आगे यमुना में पैर ज्यों २ बढ़ाते जाते थे त्यों २ नदी बढ़ती जाती थी जब नाक तक पानी आया तब तो ये बहुत घबराये इनको व्याकुल जान श्रीकृष्ण ने अपना पाँव बढ़ाया और हुंकार दिया चरण छूते ही यमुना थाह हुई, बसुदेव पार हो नंद की पौर पर जा पहुँचे वहाँ किवाड़ खुले

पाये धँसके देखा तो सब बेसुध पड़े हैं देवी ने ऐसी मोहनी डाली थी कि यशोदा को लड़की होने की सुध नहीं थी,बसुदेवजी ने कृष्ण को यशोदा के ढिंग सुला दिया और कन्या को ले चट अपना पंथ लिया, नदी उतर मथुरा आये तहाँ देवकी बैठी सोचती थी, जब कन्या दे वहाँ की कुशल कही वह प्रसन्नहो बोली हेस्वामी ! हमें कंस अब मारही डाले तोभी चिन्ता नहीं क्योंकि इसदुष्टके हाथसे पुत्रतो बचा।

बसुदेवजी के आते ही दोनों ने अपनी २ हथकड़ियाँ पहरलीं,कन्या रो उठी रोने की ध्वनि सुन पहरुए जागे ता अपने २ शस्त्र ले ले सावधान होने लगे तुपक छोड़ने तिनका शब्द सुन लगे हाथी चिंघाड़ने सिंह दहाड़ने और कुत्ते भूँकने,उसी सम अँधेरी रात के बीच एक रखवाले ने आय हाथ जोड़ कंस से प्रार्थनी की कि महाराज ! बैरी ने जन्म लिया यह सुन कंस मूर्छित हो गिरा।

इति लल्लूलाल कृते प्रेमसागरे कृष्ण जन्म कन्या ग्रहणनाम चतुर्थोऽध्याय ॥ ४ ॥

अध्याय-५

कंस का देवकी की कन्या को मारना.

बालक का जन्म सुनते ही कंस डरता काँपता उठ खड़ा हुआ और खड्ग हाथ में ले गिरता पड़ता दौड़ता धुकड़ पुकड़ करता बहिन के पास जा पहुँचा उसके हाथ से लड़की छीनने लगा तब वह हाथ जोड़ बोली भैया, यह कन्या तेरी भानजी है

इसे मत मार यह पेट पोंछनी है मेरे छः बालक मारे हैं तिनका दुःख अति सताता है, बिन काज कन्या को मार क्यों पाप को बढ़ाता है कंस बोला जीजी लड़की तुझे न दूँगा इसे जो ब्याहेगा सो मुझे मारेगा। इतना कह बाहर आय ज्यों ही चाहा कि फिराय पत्थर पर मारे त्यों ही हाथ से छूट कन्या आकाश को गई और पुकार के कह गई कि अरे कन्स मेरे पटकने से क्या हुआ तेरा बैरी तो जन्म ले चुकातेरा जी न बचेगा।

दो०—दया न आई कन्स को, घड़ा पाप का फूट। पत्थर से पटकन लगो, गई हाथ से छूट॥

यह सुन कंस पछताता हुआ वहाँ आया, जहाँ बसुदेव देवकी थे आते ही उनने हाथ-पाँव की हथकड़ी बेड़ी काट दी और बिनती कर कहने लगा कि मैंने बड़ा पाप किया जो तुम्हारे पुत्र मारे यह कलंक कैसे छूटेगा, मेरी गति किस जन्म में होगी तुम्हारे देवता झूँठे हुए, जिन्हों ने कहा था कि देवकी के गर्भ में लड़का होगा सो यह लड़की हुई वह भी हाथ से छूट स्वर्ग को गई अब दया कर मेरा दोष जी में मत रक्खो क्योंकि कर्म का लिखा किसी के मेटे नहीं मिटता जो ज्ञानी हैं सो मरना जीना समान ही जानते हैं और अभिमानी मित्र शत्रु कर मानते हैं, तुम तो साधु और बड़े सत्यवादी हो जो हमारे हेतु अपने पुत्रों को ले आये।

ऐसे कंस बार२ हाथ जोड़ने लगा तब बसुदेव देवकी बोले महाराज तुम सच कहते हो इसमें तुम्हारा कुछ दोष नहीं बिधाता ने यही कर्म में लिखा था यह सुन कंस प्रसन्न हो अति हित से बसुदेव दवको को अपने घर ले आया; और भोजन करवाय बागे पहराय बड़े आदर भाव से दोनों को फेर वहीं पहुँचा दिया और मंत्री को बुलाके कहा कि, देवी कह गई है कि तेरा बैरी जगत में जन्मा इस से अब देवताओं को जहाँ पाओ तहाँ मारो क्योंकि उन्होंने वे समझे झूँठी बात कही कि देवकी के आठवें गर्भ में तेरा शत्रु होगा, मन्त्री बोला उनको मारना क्या बड़ी बात है वे तो जन्म के भिखारी हैं जब आप कोपियेगा तभी वे भाग जावेंगे, उनकी क्या सामर्थ जो तुम्हारे सन्मुख हों, ब्रह्मा तो आठ पहर ध्यान में रहता है, महादेव माँग धतूरा खाय, इंद्र का कुछ तुम पर बस न बसाय; रहा नारायण सो संग्राम नहीं जाने लक्ष्मी के साथ रहता है। कंस बोला नारायण को कहाँ पावें और किस बिधि से जीतें सो मन्त्री ने कहा महाराज! जो नारायण को जीतना चाहते हो तो

जिनके घर में उनका बास आठों पहर है, तिनही का अब बिनाश करो, ब्राह्मण, वैष्णव, योगी यती, तपस्वी, सन्यासी, वैरागी आदि जितने हरिके भक्त हैं तिनमें लड़के से ले बूढ़े तक भी जीता न रहे, यह सुन कंसने प्रधान से कहा तुम सबको जाके मारो, आज्ञा पाकर मन्त्री अनेक राक्षसों के साथ बिदा हो नगर में (गौ-ब्राह्मण) बालक, हरि भक्तों को ढूँढ़ २ कर मारने लगे।

इति श्रीलल्लूलाल कृते प्रेमसागरे कन्साउपद्रवकरणों नामऽपंचमोध्यायः ॥५॥

अध्याय–६

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले हे राजा! एक समय नन्द यशोदा ने पुत्र के लिये बड़ा तप किया, तहाँ श्रीनारायण ने आय वर दिया कि हम तुम्हारे यहाँ जन्म ले आयेंगे जब भाद्रपद बदी अष्टमी बुधवार को आधी रात के समय श्री कृष्ण आये तब यशोदा ने ही पुत्रका मुख देख नन्दको बुला अति आनन्द माना और अपना जीवन सफल जाना, भोर होते ही उठ के नन्दजी ने पण्डित और ज्योतिषियों को बुला भेजा वे अपनी पोथी पत्रा लेके आये, जिन्होंने शास्त्र की विधि से सम्वत् महीना, तिथि दिन नक्षत्र, योग करण ठहराय, लग्न, बिचार मुहूर्त साध के कहा महाराज शास्त्र के बिचार में ऐसा आया है कि यह लड़का दूसरा बिधाता हो सब असुरों को मार ब्रज का भार उतार गोपीनाथ कहायेगा सारा संसार इसी का यश गावेगा यह सुन नन्द जी ने कंचन के श्रृङ्ग रूपे के खुर, ताँबे

की पीठ की दो लाख गऊ पाटंबर उढ़ाय सङ्कल्प कीं और अनेक दानकर ब्राह्मणों

को दक्षिणा दे आशिष ले बिदा किया तब नगरकी सब मङ्गलामुखियों को बुलाय वे आय आय अपना गुण प्रकाश करने लगीं बर्जात्री बजाने नर्तक नाचने, गायक गाने, ढ़ाँढ़ी ढ़ाँढ़िन यश बखाननै, और जितनै गोकुल के गोप ग्वाल थे वे भी अपनी अपनी नारियों के शिर पर दहेड़ियाँ लिदाय भाँति २ के भेष बनाये नाचते गाते नन्द को बधाई देनै आये आते ही ऐसा दधिकाँदा किया कि सारे गोकुल में दही ही दही कर दिया जब दधिकाँदा खेल चुके तब नन्द जी ने सब को खिलाय पिलाय बागे पहराय तिलक दे बिदा किया।

इसी रीति से कई दिन तक बधाई रही पीछे नन्दजीसे जिसने जो जो माँगा सो सो पाया बधाई से निश्चन्त हो नन्दजी ने सब ग्वालाओं को बुलाय के कहा भाइयो! हमने सुना है कि कंस बालक पकड़ पकड़ कर मँगवाता है न जाने कोई दुष्ट कुछ बात लगा दे इससे उचित है सब मिल भेंट ले चलें और बरसौड़ी दे आवें यह बचन मान सब अपने २ घर से दूध दही माखन ले मथुरा आये कंस से भेंट कर भेंट दी कौड़ी कौड़ी चुकाय बिदा होकर अपनी बाट ली।

ज्यों ही जमुना तीर पर आये त्योंही समाचार सुन बसुदेवजी आ पहुँचे। नन्द जी से मिल कुशल क्षेम पूछ कहने लगे तुमसा सगा मित्र हमारा संसार में कोई नहीं क्यों कि जब हमें भारी विपत्ति भई तब गर्भवती रोहिणी तुम्हारे यहाँ भेजदी उसके लड़का हुआ सो तुमने पाल बड़ा किया हम तुम्हारे गुण कहाँ तक बखानें इतना कह फिर पूछा कहो रामकृष्ण और यशोदा रानी आनन्द से हैं? नन्दजी बोले आप की कृपा से भला है और तुम्हारे पुत्र बल्देव जी भी कुशल से हैं कि जिनके होते तुम्हारे पुण्य प्रताप से हमारे भी पुत्र हुआ। पर एक तुम्हारे ही दुख से हम दुखित हैं। बसुदेव कहने लगे मित्र! विधाता से कछु न बस्याता कर्म की रेख किसी से मेंटो न जाय। इस संसार में आय दुख पीर कौन ना पछिताया ऐसा ज्ञान जनाय के कहा!

चौपाई—तुम घर जाओ बेगि आपने। कीने कन्स उपद्रव घने॥
बालक ढूँढ़ मँगाये नीच। भई सब तरह परजा मीच॥

तुम तो सब यहाँ चले आये हो और राक्षस ढूँढ़ते फिरते हैं न जानिये कोई

दुष्ट जाय गोकुल में उपाधि मचावे यह सुनते ही नन्द जी अकुला कर सब को साथ लिये सोचते बिचारते मथुरा से गोकुल को चले ।

इति श्री लल्लूलाल कृते प्रेमसागरे कृष्ण नन्दोत्सव षष्ठो अध्यायः ॥६॥

अध्याय–७

श्रीशुकदेव जी बोले हे राजा ! कंस का मन्त्री तो अनेक राक्षस साथ लिये मारता ही था कि कंस ने पूतना नाम राक्षसी को यदुवंशियों के बालक मारने को कहा यह सुन वह प्रसन्न हो दण्डवत कर चली तो अपने जी में कहने लगी ।

दोहा—भये पूत हैं नन्द के सुनों गोकुल गाँव । चलकर अबही आई गोपी दबे पाँव ॥

यह कह सोलह शृङ्गार बारह आभूषण कर कुच में विष लगाय माहनी रूप बन,कपट किये,कमलका फूल हाथमें लिये, बनठनकेऐसी चलीकि जैसेशृङ्गार किये लक्ष्मी अपने पति पै जाती होय गोकुल में पहुँच हँसती २ नन्द के मन्दिर बीच गई इसे देख सब गोपियाँ मोहित हो भूली सी रहीं यह जा यशोदा के पास बैठी और कशल पूछ आशीष दी कि बीर तेरा कान्हा जीवे कोटिबरस । ऐसी प्रीति बढ़ाय लड़के को यशोदा के हाथ से गोद में रख ज्योंही दूध पिलाने लगी त्यों ही कृष्ण दोनों हाथों से छाँती पकड़ मुँह में लगाय लगे प्राण समेत दूध पीने अब तो अति व्याकुल हो पूतना पुकारी कैसा यशोदा तेरा पूत मनुष नहीं है यह यमदूत है जेबरी जान मैंने साँप पकड़ा जो इसके हाथ से बच जीती जाऊँगी तो फिर

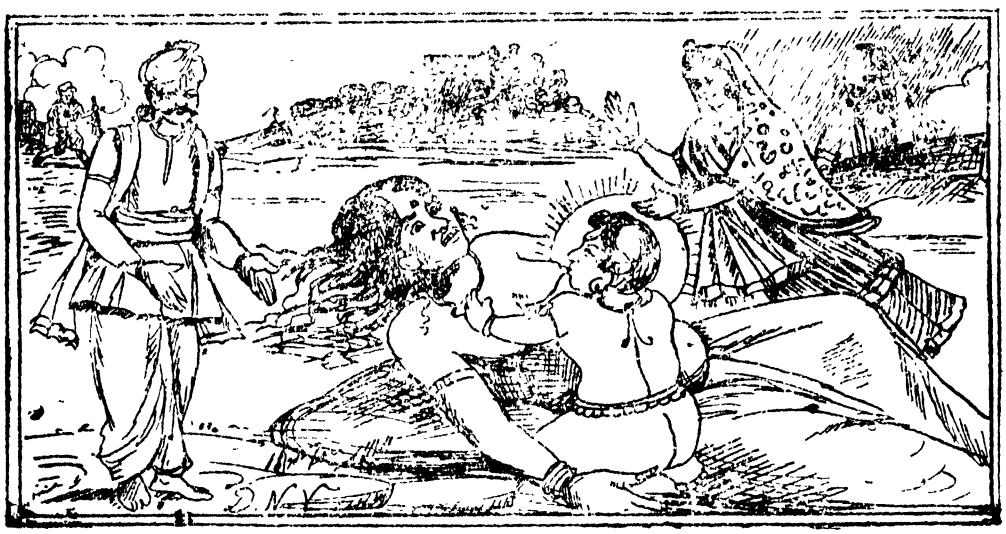

गोकल में कभी न आऊँगी यों कहभाग गाँव के बाहर आई कृष्णने छोड़ी निदान

उसका जी लिया वह पछाड़ खाय ऐसी गिरी जैसे आकाश से बज्र गिरे तिसका अति शब्द सुन रोहिणी और यशोदा रोती पीटती वहीं आईं पूतना दो कोस में मरी पड़ी थी। और उसके पीछे सब गाँव उठधाया देखा तो श्रीकृष्ण उसकी छाती पर चढ़े दूध पी रहे हैं झट उठाय मुख चूम हृदय से लगाय घर ले गई स्यानों को बुलाय झाड़ फूँक कराने लगीं और पूतना को देख ग्वाल खड़े आपस में कह रहे थे कि भाई! इसके गिरने का धमाका सुन हम ऐसे डरे हैं जो छाती अभी तक धड़कती है न जानिये बालक की क्या गति हुई होगी। इतने में मथुरा से नन्द जी आये तो देखते क्या हैं कि एक राक्षसी मरी पड़ी है और ब्रजवासियों की भीड़ घेरे खड़ी है, पूछा यह उपाधि कैसे हुई। वे कहने लगे महाराज! पहले तो यह अति सुन्दर हो तुम्हारे घर गई और आशीषदी, इसे देख ब्रज नारी भूली रहीं और यह कृष्ण को दूध पिलाने लगी पीछे हम नहीं जानते क्या गति हुई। इतना सुन नन्दजी बोले बड़ी कुशल भई जो बालक बचा और यह गोकुल पर न गिरी नहीं तो एक भी जीता न बचता सब इसके नीचे दब मरते। यों कह नन्दजी तो घर आय दान पुन्य करने लगे और ग्वालों ने झट से फावड़े कुदाल से पूतना के हाथ पाँव काट गड्ढे खोद गाढ़ दिये और माँस चाँम इकट्ठा कर फूँकदिया उसके जलने से ऐसी सुगन्ध फैलीकि जिसने संसार को सुगन्धि से भर दिया। यह सुन राजा परीक्षित ने श्रीशुकदेवजी से पूछा कि महाराज! वह राक्षसी महा मलीन मद्य माँस खाने वाली उसके शरीर से सुगन्ध कैसे निकली। सो कृपाकर कहो मुनि बोले राजा! श्रीकृष्णचन्द्र ने दूध पी उसे मुक्ति दी इसकारण सुगन्धि निकली।

इति श्री लल्लूलालकृते प्रेमसागरे पूतना बधो सप्तमों अध्याय॥७॥

अध्याय-८

शकटासुर तृणावर्त्त वध

श्री शुकदेवजी बोले हे महाराज परीक्षित—

दोहा-जिहि नक्षत्र मोहन भये सो नक्षत्र परो आय। चारु बधाए रीति सब, करत यशोदा माय।

जब सत्ताईस दिन के हरिजी हुए तब नन्दजी ने ब्राह्मण और ब्रजवासियो को नौता भेज दिया वे आये तिन्हें आदर मानकर बैठाया आगे, ब्राह्मणों को बहुत सा दान दे बिदा किया और भाइयों को बागे पहिराये। षटरस भोजन

कराने लगे तिस समय यशोदा रानी परोसती थीं, रोहिणी टहल करती थी, ब्रजवासी हँस २ खा रहे थे। गोपियाँ गीत गा रहीं थी, सब आनन्द में ऐसे मग्न थे कि कृष्ण की सुरति किसी को भी न थी, और कृष्ण एक भारी छकड़े के नीचे पालने में अचेत सोते थे कि इतने में भूखे हो जगे तो पाँव का अँगूठा मुँह में दे रोवन लगे हिलक हिलक चारों ओर देखने, उसी अवसर में उड़ता हुआ एक राक्षस आ निकला कृष्ण को अकेला देख अपने मन में कहने लगा कि यह तो कोई बड़ा बली उपजा है पर आज मैं इससे पूतना का वैर लूँगा ये मनमें ठान शकट पै आन बैठा तिसी से उसका नाम शकटासुर हुआ जब गाढ़ा चरचराय कर हिला तब श्रीकृष्ण ने बिलखते २ एक ऐसी लात मारी कि वह मर कर कंस की सभा मथुरा में जाकर गिरा और कंस देखकर बड़ा दुखित हुआ। इधर छकड़ा टूँक २ हो गिरा तो जितने बासन दूध दही के सब फूट चूर हुए और गोरस की नदी बह निकली गाढ़े के टूटने और फूटने का शब्द सुन सब गोपी ग्वाल दौड़े आये

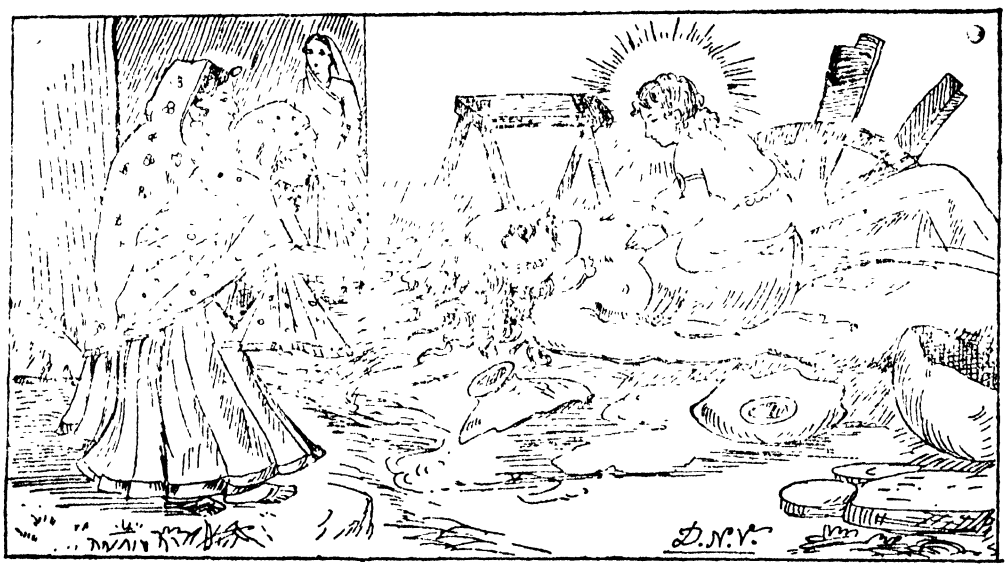

॥ शकटासुर-वध ॥

आते ही यशोदाजी ने कृष्ण को उठाया मुँह चूँम छाती से लगा लिया यह अचरज देख सब आपस में कहने लगे आज ईश्वर ने बड़ी कृपा की जो बालक बच रहा और खाली शकट ही टूटा।

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी बोले हे महाराज! जब हरि पांच महीने

के हुए तब कंस ने तृणावर्त को पठाया वह बगुला हो गोकुल में आया नंद रानी कृष्ण को गोद में लिये आँगन के बीच में बैठी थीं कि एकाएक कन्हैया ऐसे भारी हुए तो यशोदा ने मारे बोझ के गोद से उतारे इतने में ही एक ऐसी आँधी आई कि दिन की रात हो गई और पेड़ उखड़ उखड़ गिरने लगे छप्पर गिरने लगे तब व्याकुल हो यशोदाजी श्रीकृष्ण को उठाने लगीं पर वे न उठे ज्योंही उनके शरीर से इनका हाथ अलग हुआ त्योंही तृणावर्त आकाश को ले उड़ा। और मन में कहने लगा कि आज इसे बिना मारे न रहूँगा वह तो कृष्ण को लिये वहाँ यह बिचार करता था और यहाँ यशोदाजी ने जब कृष्ण को न पाया तब रो रो कृष्ण २ कह पुकारने लगीं यह शब्द सुन सब गोपी ग्वाल दौड़े आये साथ ही ढूँढ़ने धाये अँधेरे में अटकल से टटोल टटोल कर चलते थे। तिस पर ठोकर खाय गिर पड़ते थे।

जब श्रीकृष्ण ने नन्द यशोदा सहित सब ब्रजबासी अति दुखित देखे तब तृणावर्त को फिराय आँगन में लाय शिला पर पटका तुरन्त उसका जी देह से निकल सटका, आँधी थम गई उजाला हुआ सब भूले भटके घर आये देखें तो राक्षस आँगन में मरा पड़ा है श्रीकृष्ण उसकी छाती पर खेल रहे हैं आते ही यशोदा ने उठाय के कंठ से लगा लिया और बहुत सा दान ब्राह्मणों को दिया।

इति श्रीलल्लूलाल कृते प्रेमसागरे संकट भंजन तृणावर्त बधो नाम अष्ठमो अध्यायः ॥ ८ ॥

अध्याय–९

श्री शुकदेवजी बोले–हे राजा ! एक दिन बसुदेवजी ने गर्ग मुनि को जो ज्योतिषी और यदुवंशियों के पुरोहित थे उन्हें बुलाकर कहा कि तुम गोकुल में जाओ और लड़के का नाम करण संस्कार कर आओ।

दोहा—गई रोहिणी गर्भ सों भयो पूत है ताहि। किती आयु कैसा बली कहा नाम तेहि आहि॥

नंदजी के पुत्र हुआ है सो भी तुम्हें बुला गये हैं सुनते ही गर्ग मुनि प्रसन्न हो चले और गोकुल के निकट जा पहुँचे उसी समय किसी ने नन्दजी से आ कहा कि यदुवंशियों के पुरोहित गर्ग मुनि जी आये हैं। यह सुन नन्दजी आनन्द से ग्वाल बालों के सङ्ग भेट ले उठ धाये और पाटम्बर के पाँवड़े डालते

बाजे बजाते ले आये पूजा कर आसन पै बैठाया चरण धो चरणामृत ले स्त्री

गर्ग मुनि द्वारा श्रीकृष्ण का नाम करणसंस्कार

पुरुष हाथ जोड़ कहने लगे महाराज ! बड़े भाग्य हमारे जो आपने दर्शन दे घर पवित्र किया तुम्हारे प्रताप से दो पुत्र हुए हैं एक रोहिणी के एक हमारे कृपा कर तिनका नाम धरिये गर्ग मुनि बोले नाम रखना उचित नहीं क्यों कि यह बात फैलेगी कि गर्ग मुनि गोकुल में लड़कों का नाम धरने धाये हैं और कंस सुन पावैगा तो वह यही जानेगा कि देवकी के पुत्र को बसुदेव के मित्र के यहाँ कोई पहुँचाय आया है। इस लिये गर्ग पुरोहित गया है यह समझ बूझ के मुझको पकड़ मंगावेगा और न जानिये तुम पर भी क्या उपाधि लावे इससे तुम फैलाव मत करौ चुपचाप घर में नाम धर लो नन्दजी बोले गर्गजी ! तुमनेसच कहा इतना कह घर के भीतर ले जाय बैठाया। तब गर्गमुनि ने नन्दजी से दोनों की जन्म तिथि और समय पूछ लग्न सोध मास ठहराय कर कहाकि सुनों नन्दजी ! बासुदेव की रानी रोहिणी के पुत्र के तो इतने नाम होवेंगे। संघर्षण, रेवतीरमण, वल्देव बलराम, कालिद्री-भेदन, हलधर, और बलवीर और कृष्णरूप जो तुम्हारा लड़का है इसके नाम, अनगिनती हैं यह किसी समय बसुदेव के यहाँ जन्मा इससे बासुदेव नाम हुआ बिचार में आता है कि ये दौनों बालक तुम्हारे चारों युगों में जब जब जन्मे हैं तब तब साथ ही जन्मे हैं नन्दजी बोले इनके गुण कहो गर्ग मुनि

ने उत्तर दिया ये दूसरे बिधाता हैं इनकी गति कुछ जानी नहीं जाती है पर मैं यह जानता हूँ कि कंस को मार भूमि का भार उतारेंगे ऐसे कह गर्ग मुनि चले गये और बसुदेव से जा समाचार कहे आगे दोनों बालक गोकुल में दिन व दिन बढ़ने लगे और बाल लीला कर नन्द यशोदा को सुखदेने लगे, नीले, पीले, झिगुले पहने माथे पर छोटी-छोटी लटुरियाँ बिखरी हुई, ताइ तगड़े बाँधे, कठले गले में डाले, खिलौने हाथ में लिये खेलते आँगन के बीच घुटनों चल-चल गिर २ पड़े और तोतली तोतली बातें करें रोहिणी और यशोदा पीछे २ लगी फिरें, इसीलिये कि कहीं बालक किसीसे डर ठोकर खा न गिरें, जब छोटे २ बछड़े और बछियाओं की पूँछ पकड़ पकड़ उठें और गिर २ पड़ें तब यशोदा और रोहिणी अति प्यार से उठाय छातीसे लगाय दूध पिलायें, भाँति भाँति के लाड़ लड़ावें। जब श्रीकृष्ण बड़े भये तो एक दिन सखानके साथ ब्रज में दधि माखनकी चोरी को गये।

चौपाई—सूने घर में ढूँढे जाय। जो पावै सो देय लुटाय।
जिनको घर में सोते पावै तिनकी ढकी दही ढुरकावें॥

जहाँ छीके पर गोरस इत्यादि रक्खा देखें तहाँ पीढ़ी पर पटरा, पटरे पर ऊखल धर साथियों को खड़ा कर उसके ऊपर चढ़ उतार लें, कुछ खावें कुछ लुटावें ऐसे गोपियों के घर घर नित चोरी कर आवें, एक दिन सबने मता किया और गृह में मोहन को आने दिया, ज्यों घर भीतर पैंठे, चाहाकि दही, माखन चुरावें त्योंही गोपीयों ने जाय पकड़ कर कहा। और दिन आते थे निशि भोर। अब कहाँ जाओगे माखन चोर! यों कह जब सब गोपी मिल कन्हैया को पकड़ कर यशोदा के पास उलाहना देने चली तब श्रीकृष्णने ऐसा छल किया कि उसके लड़के का हाथ उसे पकड़ा दिया और आपने दौड़कर अपने ग्वालबालोंका संग किया वे ग्वालिनें चलदीं और नन्दरानी के निकट आय पावों पड़ बोली कि जो तुम बुरा न मानों तो हम कुछ कहैं, जैसी कुछ उपाधि कृष्ण ने ठानी है।

दोहा—दूध दही माखन मही, बचे नहीं ब्रज माँझ। ऐसी चोरी करत है, फिरत भोर अरु साँझ॥

जहाँ कहीं धरा ढका पाते हैं तहाँ निधड़क उठा लाते हैं, कुछ खाते हैं कुछ गिराते हैं, और जो कोई इनके मुख में दही लगा बतावे तासों उलट कर कहते हैं कि तूने ही तो लगाया है। इस भाँति नित नई चोरी कर आते आज हमने

पकड़ पाया सो तुमको दिखाने लाई हैं। यशोदा बोली वीर! तू किसका लड़का पकड़ लाई, कलसे तो वह बाहर नहीं निकला मेरा कुँवर कन्हाई। ऐसी ही बोलती हो। यह सुन और अपना बालक हाथमें देख हँस कर लजाय रही, तब यशोदाजी ने कृष्ण को बुलाय के कहा पुत्र! तुम किसी के यहाँ मत जाओ।

चौपाई—सुनके कान्ह कहत तुतलाय। मत मैया तू इन्हें पतियाय॥
झूँठी गोपी झूँठी बोलें। मेरे पीछे लागी डोलें॥

कभी दौहनी कभी बछड़ा पकड़ाती है, कभी घर की टहल कराती हैं मुझे द्वारे रखवाली बैठाय अपने काज को जाती हैं फिर झूँठ मूँठ आय तुम से बातें लगाती हैं, यों सुन गोपी हरि मुख देख २ मुसकरा चली गईं। आगे एक दिन कृष्ण बलराम सखाओं के संग रेत में खेलते थे कि कान्हा ने मिट्टी खाई तो एक सखा ने यशोदा से जा लगाई, वह क्रोध कर हाथ में छड़ी ले आई, माँ को रिस भरी आती देख मुँह पोंछ कर डर कर खड़े हो रहे, उन्होंने जाते ही कहा क्योंरे! तूने मिट्टी क्यों खाई? कृष्ण डर से काँपते बोले माता! तुम से किसने कहा, वे बोलीं तेरे सखा ने, तब मोहन ने कोपकर सखा से पूछा क्योंरे, मैंने माटी कब खाई। वह भय खाकर बोला भैया! मैं तेरी बात कुछ नहीं जानता क्या कहूँ। ज्यों ही कान्ह सखा से बतराने लगे त्योंही यशोदा ने उन्हें जा पकड़ा तहाँ कृष्ण कहने लगे, मैया तू मत रिसाय कहीं मनुष्य भी मिट्टी खाते हैं। वह बोली मैं तेरी अटपटी बात नहीं सुनती जो तू सच्चा है तो अपना मुख दिखा। ज्योंही कृष्ण ने मुख खोला त्योंही उस मैंतीन लोक दृष्टि आये तब यशोदा को ज्ञान हुआ तो मन में कहने लगी कि में बड़ी मूर्खा हूँ, जो त्रिलोकीनाथ को अपना सुत मानती हूँ।

इतनी कथा कह श्री शुकदेवजी राजा परीक्षित से बोले हे राजा! जब नन्दरानी ने ऐसा जाना तब हरि ने जगत मोहनी माया फैलाई, तो इतने में मोहन को यशोदा प्यार कर कंठ लगाय घर ले आई।

इति श्री लल्लूलाल कृत प्रेमसागरे विश्व दर्शन नाम नवमो अध्यायः॥ ९॥

अध्याय—१०

॥ भगवान श्रीकृष्ण का ऊखल से बाँधे जाना॥

एक दिन दही मथने की बिरियाँ जान भोर ही नन्दरानी उठी और सब गो-

पियों को जाय बुलाया वे आय झाड़ बुहार लीप पोत अपनी २ मथनियाँ ले लें दधि मथने लगीं तहीं नन्दमहरि भी एक बडामा कोरा चरुआ ले इडुये पर रख चौकी बिछा नेती और रई मँगाय टटको २ दहेहिया बाँध २ राम कृष्ण के लिये बिलोमन बैठी तिस समय नन्द के घर ऐसा शब्द दही मथने का हो रहा कि जैसे मेघ गरजता हो इतने में श्रीकृष्ण जागे रो रोकर मैया २ कह पुकारा किसीने नहीं सुना तब आपही यशोदा के निकट आये और आखें डबडबाय अनमने हो सिसक सिसक तुतलाय२कहने लगे कि माँ तुझे कई बेर बुलाया पर मुझे कलेवा देने न आई तेरा काज अब तक नहीं निबटा इतना कह मचल पड़े और लगे चरुये से निकल दौनों हाथ डाल माखन काढ़२ फेंकने, अङ्ग अङ्ग लथेड़ने और पाँव पटक २ आँचल खेंच २ रोने लगे तब नन्दरानी घबराय झुझलाय के बोली बेटा ! यह क्या चाल निकाली।

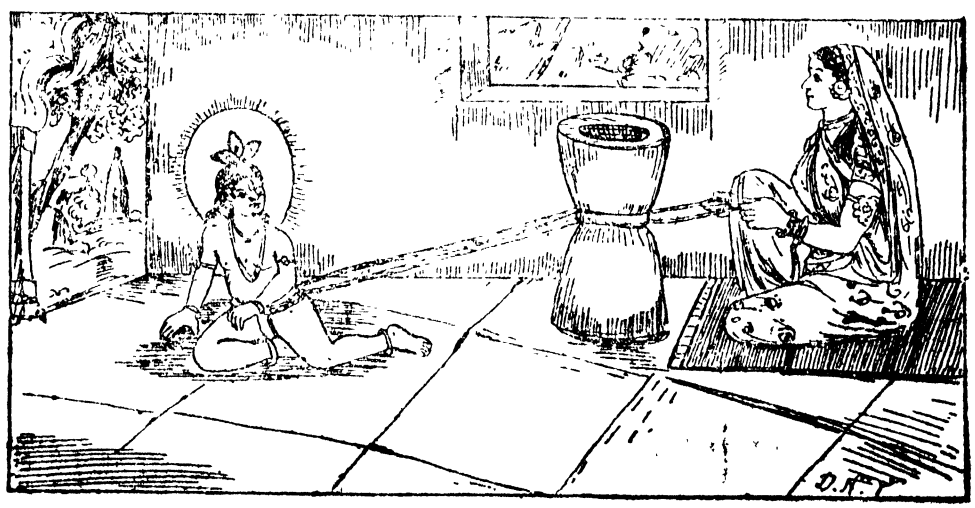

(ऊखल- बन्धन)

चौपाई—चल उठ तुझे कलेवा देऊँ। कृष्ण कहैं अब मैं नहिं लेऊँ॥
पहले ज्यों नहीं दीनों माय। अब तो मेरी लेय बलाय॥

निदान यशोदा ने फुसलाया प्यार से मुँह चूँम गोद में उठा लिया और दधि माखन रोटी खाने को दिया। हरि हँस हँस खाते थे, नन्दमहरि आँचल की ओट किये खिला रही थी इस लिये कि मति किसी की दीठि (नजर) लगे, इसी बीच एक गोपी ने आकर कहा कि तुम यहाँ बैठी हो वहाँ चूल्हे पर से दूध उफन गया

यह सुनते ही झट कृष्ण को गोद से उतार उठ धाई और जाके दूध बचाया वहाँ काम्हा दही मही के भाजन फोड़ रई तोड़ माखन भरी कथोरी ले ग्वालों में दौड़ आये एक ऊखल औंधा धरा पाया तिस पर जा बैठे और चारों ओर सखाओं को बैठाय लगे आपस में हँस २ बाँट बाँट माँखन खाने इतने में यशोदा दूध उतार आय देखें आँगन और तिवारे में दही मही की कीच हो रही है। तब तो सोच समझ हाथ में छड़ी ले निकली और ढूँढ़ती २ वहाँ आई जहाँ श्रीकृष्ण मण्डली बनाय माखन खाय खिलाय रहे थे जाते ही पीछे से घेरा तो हरि माँ को देखते ही रोकर हाहा खाय लगे कहने कि गोरस किसने लुटाया मैं नहीं जानूँ मुझे छोड़ दे ऐसे दीन बचन सुन यशोदा हँस कर हाथ से छड़ी गेर और आनन्द में मग्न हो कंठ लगाय श्रीकृष्णको ऊखलसे बाँधने लगी तब श्रीकृष्णने ऐसा किया कि जिस रस्सी से बाँधे वही छोटी हो जाय। यशोदा ने सारे घर की रस्सी मँगवाई तो भी श्रीकृष्ण बाँधे न गये निदान माँ को दुखित जान आपही बँधाई में आगये। नन्द-रानी उन्हें बँध गोपियों से खोलने की सौंह ले फिर घर की टहल करने लगी।

इति श्री लल्लूलाल कृते प्रेमसागरे दाम-बधन नाम दसमो अध्यायः ॥ १० ॥

अध्याय–११

यमलार्जुन की कथा

श्रीशुकदेवजी बोले हे राजा! श्रीकृष्णचन्द्र को बँधे-बँधे पूर्वजन्म की कुबेर के बेटों की नारद शाप की याद आई। यह सुन राजा परीक्षित ने श्री शुकदेवजी से पूछा महाराज कुबेर के पुत्रों को नारद मुनि ने कैसे शाप दिया सो समझा के कहो। शुकदेव मुनि बोले नल कूबर नाम कुबेर के दो लड़के कैलाश में रहते थे सो शिवकी अति सेवा कर धनवान हुए स्त्रियाँ साथ लेके वन बिहार को गये, वहाँ जाय मद्य पी मदमाते भये, रानियों समेत नंगे ही गङ्गा में नहाने लगे, और गल-बहियाँ डाल-डाल अनेक २ भाँति की किलोलें करने लगे कि इतने में वहाँ नारद मुनि आ निकले उन्हें देखते ही रानियाँ तो निकल कपड़े पहनने लगीं और ये मतवारे वहीं खड़े रहे इनकी दशा देख मन में नारदजी कहने लगे कि इनको धन-का गर्व–हुआ–है इसी से मदमाते हो काम क्रोध को सुखकर मानते हैं। निर्धन

मनुष्य को अहङ्कार नहीं होता और धनवान को धर्म अधर्म का विचार कहाँ है। परन्तु मूर्ख झूँठी देह-से मोह कर भूले, सम्पत्ति कुटुम्ब देख देखकर फूले और साधुजन धनमद मन में न आने दे, सम्पत्ति विपत्ति एक सम माने इतना कह नारद मुनिने इन्हें शाप दिया कि इस-पापसे तुम गोकुल में जा बृक्ष हो जाओ जब श्रीकृष्ण अवतार लेंगे तब तुम्हें मुक्ति देंगे ऐसा नारद मुनि ने उन्हें शाप दिया उसी से वे गोकुल में आ बृक्ष हुए तब उनका नाम यमलार्जुन हुआ इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले महाराज ! इस बात की सुरति कर श्रीकृष्ण ओखली को घसीटकर वहाँ ले गये जहाँ यमलार्जुन पेड़ थे जाते ही उन दौनों तरुवरों के बीच, ऊखल

(यमलार्जुन-मोक्ष)

को अड़ा, बल से एक झटका मारा कि वे दोनों पेड़ उखड़ पड़े और उनसे दो पुरुष अति सुन्दर निकल हाथ जोड़ कर स्तुति करने लगे। तब श्रीकृष्ण बोले सुनो ! नारद मुनि ने तुम पर बड़ी दया को जो गोकुल में मुक्ति दी उनकी कृपा से तुमने मुझे पाया अब बर माँगो जो तुम्हारे मन में हो। यमलार्जुन बोले दीननाथ ! यह नारद मुनि ही की कृपा है जो आपके चरण परसे और दर्शन किये अब हमें किसी वस्तु की इच्छा नहीं पर इतना ही वर दीजै जो सदा तुम्हारी भक्ति हमारे हृदय में निवास करता रहे सो श्रीकृष्णचन्द्र ने तिन्हें बर दे बिदा किया।

इति श्रीलल्लूलाल कृते प्रेमसागरे यमलार्जुन उद्धारो नाम एकादसोऽध्याय ॥११॥

अध्याय १२

श्री शुकदेव मुनि बोले हे राजा! जब वे दोनों तरु गिरे तब उनका शब्द सुन नन्दरानी घबरा कर दौड़ी आई जहाँ कृष्ण को ऊखल से बाँध गई थी, और उनके पीछे सब गोपी ग्वाल भी आये जब श्रीकृष्ण को वहाँ न पाया तब व्याकुल हो यशोदा मोहन २ पुकारती और कहती चली कहाँ गया मोहन यहीं बँधा था। भाई कहीं किसी ने देखा मेरा कुमर कन्हाई, इतने में यों ही आ एक बोली ब्रजनारी, कि दो पेड़ गिरे तहाँ बचे मुरारी, यह सुन अब आगे जाय देखें सो सचमुच ही वृक्ष उखड़े हैं और कृष्ण तिनके बीच ओखली से बँधे सिकुड़े बैठे हैं जाते ही जाते नन्दमहरि ने ऊखल से खोल कान्ह को रो के गले लगा लिया सब गोपियाँ डरा जान लगीं चुटकी ताली दे-दे हँसाने तब नन्द उपनन्द आपस में कहने लगे कि युगानयुग के रूख जमे हुए कैसे उखड़ पड़े यह बड़ा अचम्भा जी में आता है कुछ भेद इनका समझा नहीं जाता है इतनी सुन के एक लड़के ने पेड़ गिरने का ब्यौरा ज्यों त्यों कहा पर किसी के जी में न आया एक गोपी बोली ये बालक इस भेद को क्या समझे दूसरे ने कहा कदाचित यही हो हरि की गति कौन जाने ऐसी अनेक-अनेक भाँति की बातें कर श्रीकृष्ण को ले सब आनन्द से गोकुल में आये तब नन्दजी ने बहुत सा दान पुण्य किया जब कृष्ण का जन्म दिन आया तो यशोदा रानी ने कुटुम्ब को नौता दे बुलाया और मङ्गलाचार वर्षगाँठ बाँधी जब सब जेंवन बैठे तब नन्दराय बोले सुनो भैया! अब इस गोकुल में रहना कैसे बने, दिन दिन होने लगे उपद्रव घने, चलो कहीं ऐसे ठौर जावें जहाँ तृण जल का सुख पावें उपनन्द बोले बृन्दावन जाय बसिये तो आनन्द से रहिये यह बचन सुन नन्द जी ने सब को खिलाय पिलाय पान दे बैठाया त्यों ही एक ज्योतिषी को बुलाया यात्रा का मुहूर्त पूछा उसने विचार के कहा इस दिशा की यात्रा को कल का दिन अति उत्तम है वामयोगिनी पीछे दिशाशूल और सन्मुख चन्द्रमा हैं आप निःसन्देह भोर ही प्रस्थान कीजै, यह सुन उस समय तो गोपी ग्वाल अपने अपने घर गये और सबेरे ही उठ अपनी २ वस्तु भी गाड़ी पर लाद आ इकट्ठे भये। कुटुम्ब समेत नन्दजी भी साथ हो लिये और चले २ नन्दजी उधर साँझ समय जा पहुँचे बृन्दादेवी को

मनाय सुख चैन से रहने लगे जब श्रीकृष्ण पाँच वर्ष के हुए तब माँ से कहने लगे, कि माँ मैं बछड़े चरावने जाऊँगा तू बलदाऊ से कहदे कि मुझे बन में अकेला न छोड़े वह बोली पूत बछड़े चरावने वाले बहुत हैं दास तुम्हारे तुम मत पलक ओट हो मेरे नयनों के आगे से प्यारे। कान्ह बोले जो मैं बन में खेलने जाऊँगा तो खाने को खाऊँगा, नहीं तो नहीं, यह सुन यशोदा ने ग्वालबालों को बुलाय कृष्ण बलराम को सौंप कर कहा कि तुम बछड़े चरावने दूर मत जाइयो, और साँझ होते ही दोनों को सङ्ग लेकर आइयो बन में इन्हें अकेले मत छोड़ियो साथ रहियो तुम इनके रखवाले हो ऐसे कह कलेवा दे रामकृष्ण को उनके सङ्ग कर दिया वे जाय जमुना के तीर बछड़े चराने लगे और ग्वाल बालों में खेलने लगे कि इतने में कंस का पठाया वत्सासुर आया उसे देखते ही सब बछड़े डर कर जिधर तिधर भागे तब श्रीकृष्णजी ने बलदेवजी को सैन से चिताया कि भाई यह कोई राक्षस आया ज्योंही आगे चरता वह घात करनेको निकट पहुँचा त्योंही श्रीकृष्णने पिछले पाँव से पकड़ फिराय कर ऐसा पटका कि उसका जी घाट से निकल सटका।

वत्सासुर का मरना सुनके कंस ने बकासुर को भेजा वह बृन्दावन आके अपनी घात लगाय यमुना के तीर पर बक समाज में बैठा उसे देख मारे भय के ग्वालबाल कृष्ण से कहने लगे कि भैया! यह तो कोई राक्षस बगुला बन आया है इसके हाथ

(बकासुर-बध)

से कैसे बचेंगे, ये तो कृष्ण से यों कहते ही थे और उधर वह जी में यह विचारता

था कि आज इसे बिना मारे न जाऊँगा इतने में जो श्रीकृष्ण उसके निकट गये उसने उन्हें चोंच में उटाया मुँह मूँद लिया ग्वालबाल ब्याकुल हो चारों ओर देख रो २ पुकार २ लगे कहने हाय २ यहाँ तो हलधर भी नहीं हैं हम यशोदा से क्या कहेंगे। इनको अति दुखित देख श्रीकृष्ण ऐसे ताते हुए कि वह मुख में न रख सका जो उसने उन्हें उगला तौ उसी की चोंच पकड़ और पाँव तले दबाय चीर डाला और बछड़े घेर सखाओं को साथ ले हँसते हँसते घर आये।

इति श्री लल्लूलाल कृत प्रेमसा रे वत्सासुर व बकासुर बधो नाम द्वादसोऽभ्यायः ॥१२॥

अध्याय--१३

श्री शुकदेव मुनि बोले सुनों महाराज! प्रातः होते ही एक दिन श्री कृष्ण बछड़े चरावने बन को चले तिनके साथ सब ग्वालबाल भी अपने अपने घर से छाक ले २ हो लिये और गोचर भूमि में जाय छाक धर बछड़े चरने को छोड़े लगे खरी गेरू तन मे चित्र-बिचित्र लगाने व बन के फल फूलों के गहने बनाय २ पहन २ खेलने और पशु पक्षियों की बोली आदि से भाँति भाँति के कुतूहल कर नाचने इतने में कंस का पठाया अघासुर नाम राक्षस आया सो अति बड़ा अजगर हो मुँह पसार बैठा सब सखाओं समेत श्री कृष्ण भी खेलते २ वहाँ जा निकले जहाँ वह घात लगाये बैठा था दूर से उसे देख ग्वाल बाल आपस में कहने लगे कि भाई! यह तो कोई पहाड़ है कि जिसकी कन्दरा इतनी बड़ी है ऐसे कहते और बछड़ा चराते उसके पास पहुँचे तब एक लड़का उसका मुख देख बोला भाई! यह कोई अति भयावनी गुफा है इसके भीतर न जावेंगे हमें देखते ही भय लगता है। फिर तोष नाम सखा बोला चलो इसमें धँस चलें, कृष्ण साथ रहते हम क्यों डरें जो कोई असुर होगा तो बकासुर की भाँति मारा जायगा।

यों सब सखा खड़े बात कहते ही थे कि उसने ऐसी लम्बी साँस खेंची कि बछड़ा समेत सब ग्वाल बाल उड़के उसके मुख में जापड़े विष भरी ताती भाप जो लगी तो लगे ब्याकुल हो बछड़े रँभाने और सखा पुकारने कि कृष्ण प्यारे बेग सुध लो नहीं तो जले मरते हैं उनकी पुकार सुनते ही आतुर हो श्रीकृष्ण उसके मुख में आ पड़ गये उसने प्रसन्न हो मुँह मूँद लिया तब श्री कृष्ण ने अपना शरीर

(अघासुर-वध)

इतना बढ़ाया कि उसका पेट फट गया। सब पखेरू और ग्वाल बाल निकल पड़े तिस समय आनन्द कर देवताओं ने फूल और अमृत बरसाय सब की तपन हरली सब ग्वालबाल श्री कृष्णचन्द्र से कहने लगे कि भैया! इस असुर को मार आज तूने भले बचाये नहीं तो सब मर चुके थे।

इति श्री लल्लूलाल कृते प्रेमसागरे अघासुर वधो नाम त्रयोदसोऽध्यायः ॥ १३ ॥

अध्याय—१४

श्रीशुकदेव मुनि बोले हे राजा! ऐसे अघासुर को मार श्री कृष्णचन्द्र ने फेर जाय कदम्ब की छांह में बछड़े घेर खड़े हो बंशी बजाय सब ग्वालबालों को बुलाय-कर कहा भैया! यह भली ठौर है इसे छोड़ आगे कहाँ जाँय! बैठो यहीं छाक खाँय सो सुनते ही उन्होंने बछड़े तो चरने को हाँक दिये और आक ढाक वड़ कदंब कमल के पात लाय, पत्तलें दौने बनाय झाड़ बुहार श्रीकृष्ण के चारों ओर पाँति को पाँति बैठ गये और अपनी अपनी छाँके खोल लगे आपसमें परोसने, जब परोस चुके तब श्रीकृष्णचन्द्र ने सब के बीच खड़े हो पहले आप कौर उठाय खाने की आज्ञादी, वे खाने लगे सिर पर मोर मुकुट धरे, बन माला गले में पहने, लकुट लिए, त्रिभङ्गी छबि किये, पीताम्बर पहने पीतपट ओढ़ हँस हँस श्रीकृष्ण भी अपनी छाक में से सबको खिलाते थे और आप एक—एक के पनबारे से उठाय २ चाख २ मीठे तीखे चरपरे का स्वाद कहते जाते थे वे उस मण्डली में ऐसे सुहावने लगते थे कि जैसे

कि तारों में चन्द्रमा तिस समय ब्रह्मादि सब देवता अपने अपने बिमानों में बैठ आकाशसे ग्वाल मंडली का सुख देखते थे इतने में ब्रह्मा माया से मोहित हो आय सब बछड़े चुराय ले गया वहाँ ग्वाल वालों ने खाते २ चिंताकर श्रीकृष्ण से कहा भैया!हम तो निश्चिन्ताई से बैठखाय रहेहैं न जानिये बछड़े कहाँ निकलगए होंयगे।

दोहा-तब ग्वालन सों कहत कन्हाई। तुम सब जेंवत रहियो भाई।
जानि कोउ उटै करै ओसेर। सबन के बछरे लाऊँ घेर॥

ऐसे कह कितनो एक दूर बन में लाय जब जानाकि यहाँ से बछड़े ब्रह्मा ले गया तब श्रीकृष्ण वैसेही बनाय लाए यहाँ आय देखें तो ग्वालबालों को भी उठाय ले गया और फिर उन्होंने जैसे थे तैसे ही वे भी बनाये और साँझ हुई जान सब की साथले बृन्दाबन आए सब ग्वालबाल अपने २ घरगए पर किसीने यह भेद न जानाकि ये हमारे बालक बछड़े नहीं वरन औरहैं दिन २ माया बढ़ती चली।

इतनी कथा सुनाय श्रीशकदेवजी बोले महाराज!वही ब्रह्मा ग्वालबाल बछड़ों को लेजाय एक पर्वत की कन्दरा में भर मुँह पर पत्थर की शिलाधर भूल गया, और श्रीकृष्णचन्द्र नित नई लीला करते थे। इसमें एक वर्ष बीत गया तब ब्रह्मा को सुधि हुई तो मन में कहने लगे कि मेरा तो यहाँ एक पल भी न हुआ पर नर लोक का तो एक वर्ष होगया इससे अब चलकर देखना चाहिए कि ब्रज में ग्वाल वालों की बछड़ों बिना क्या गति भई यह बिचार उठकर वहाँ आया जहाँ कन्दरा में सबको मूँद गया था शिला उठाय देखे तो लड़के और बछड़े घोर निन्द्रा में सोए पड़े हैं, वहाँ से चल ब्रन्दाबन में आया बालक और बछड़े सब ज्यों के त्यों देख अचम्भे में हो कहने लगा कैसे ग्वाल बछड़े यहाँ आये। कैसे कृष्ण नये उपजाये। इतनी कह फिर कन्दरा को देखने गया जितने वह वहाँ सें देखकर आवे तितने बीच यहाँ कृष्ण ने ऐसी माया करी कि जितने ग्वालवाल और बछड़े थे सब चतुर्भुज हो गये और एक एक के आगे ब्रह्मा,रुद्र, इन्द्र हाथ जोड़े खड़े थे।

दोहा-देखि बिरंचि चित्र सो भयो। भूलो ज्ञान ग्यान ध्यान भयो।
जनु पाषाण देवी चौंमुखी। भई भक्ति पूजा बिन देखी॥

डर कर नयन मूँद लगा थर २ काँपने जब अन्तर्यामी श्रीकृष्णचन्द्र जी ने जाना कि ब्रह्मा अति ब्याकुल है, तब सब का अंश हर लिया और आप अकेले

रह गए ऐसे कि जैसे भिन्न बादल हो जाय।

इति श्री लल्लूलाल कृते प्रेमसागरे ब्रह्मा वत्स हरणो नाम चतुर्दसोऽध्यायः ॥१४॥

अध्याय–१५

श्रीशुकदेवजी बोले कि हे राजा ! जब श्रीकृष्णने अपनी माया उठाली तब ब्रह्मा को अपने शरीर का ज्ञान हुआ तो ध्यान कर भगवान के पास आ गिड़गिड़ाया पाँवों पड़ विनतीकर हाथ बाँध खड़ा हो विनय करने लगा कि हे नाथ ! तुमने बड़ी कृपा करी जो मेरा गर्व दूर किया इसी से मैं अन्धा हो रहा था ऐसो

(ब्रह्मा स्तुति)

बुद्धि किसकी है जो बिना तुम्हारी दया के तुम्हारे चरित्रों को जाने तुम्हारी माया ने सब मोहे हैं ऐसा कौन है जो तुम्हें मोहे तुम सब के कर्ता हो तुम्हारे रोम रोम में मुझ से अनेक ब्रह्मा पड़े हैं, मैं किस गिनती में हूँ दीनदयाल ! अब दया कर क्षमा कीजै मेरा दोष चित्त में न दीजै ॥

दो०–वृन्दावन सौ वन नहीं, नन्दगाँव सौ गाँव । बन्शीवट सौ वट नहीं ना कृष्ण नाम सम नाम ॥
वृन्दावन सम लोक ना तिहुं लोक माँ और । राधेवर खेले सदा अति छवि से ताठौर ॥२॥

इतनी सुन श्रीकृष्णचन्द्र मुस्कराए तब ब्रह्मा ने सबग्वालबाल और बछड़े सोते ला दिये और लज्जित हो अपने स्थान को गये जैसे मण्डली आगे थी तैसी ही बन गई, वर्ष दिन बीता सो किसी ने न जाना जो ग्वाल बालों को नींद गई तो श्रीकृष्ण बछड़े घेर लाये तब तिन से लड़के बोले भैया तू बछड़े बेग ले आया हम भोजन करने भी न पाये।

चौ०—सुनतबचन हँस कहत बिहारी। मोकोचिंताभई बिहारी। निकटहोइकठौरेपाये अबघर चलौमोरके आये॥

ऐसे आपस में बतराय बछरुओं को साथ ले सब हँसते खेलते अपने घर आये।

इति श्री लल्लूलाल कृते प्रेमसागरे ब्रह्मास्तुतिकरणो नाम पंचदशोऽध्यायः।१५।

अध्याय—१६

श्री शुकदेवजी बोले हे महाराज! जब श्रीकृष्ण गऊऐं चराते २ आठ वर्ष

(धेनुक-वध)

के हुये तब वे मगन हो एक दिन ग्वालबालों समेत गाय लिये बनमें पहुँचे वहाँ बन की छबि देख श्रीकृष्ण बलराम जी से कहने लगे दाऊ, यह तो अति मन भावनी सुहावनी ठौर है कैसे बृक्ष झुक रहे हैं और भाँति भाँतिके पशु पक्षी कलोल करते हैं। ऐसे कह कर ऊँचे टीले पर चढ़े और दुपट्टा फिराया। कारी, गोरी, धूमरी, धौरी, भूरी नीली कह कह पुकारने लगे सुनते ही सब गायें रंभाती, दौड़ी आईं तिस समय ऐसी शोभा हो रही थी कि जैसे चहुँ ओर से वर्ण२ की घटा घिरआई होय फिर श्रीकृष्णचन्द्र गौ चराने को हाँक भाई के साथ छाक खाय कदम्बकी छाँह में एक सखा की जाँघ पर शिर धर सो गये जो जागे तो बलरामजी से कहा—

चौपाई—दाऊ सुनों खेल यह करें। न्यारा कटक बाँध के लरें॥

इतनी कह आधी २ गायें और ग्वाल बाँट अपने फल फूल तोड़, झोलियों में भर२लगे तुरही, भेरी, भोंपू, ढप, ढोल दमामे, सींग मुख से ही बजाय २ लड़ने और मार २ पुकारने, ऐसे कितनी एक बेर तक लड़े, फिर अपनी टोली निराली निराली ले गायें चरावने लगे इस बीच बल्देव जी से किसी सखाने कहा महाराज!

यहाँ थोड़ी ही दूर एक ताल बन है जिसमें अमृत समान फल लगेहैं, वहाँ गधे के रूप में एक राक्षस रखवाली करता है यह सुनते ही बलरामजी ग्वालों समेत बन में गये और लगे ईंट पत्थर ढेला लाठियाँ मार मार फल झाड़ने, तिसका शब्द सुन कर धेनुका नाम खर रेंगता आया और उसने आते ही फिर बलदेव जी की छाती में एक दुलत्ती मारी तब उन्होंने उसे उठाय कर दे पटका फिर वह लोट पोट के उठा और धरती खूँद खूँद कान दबाय हट हट दुलत्तियाँ झाड़ने लगा इस तरह बड़ी देर तक लड़ता रहा निदान बलराम जी ने उस की दोनों पिछली टाँगें पकड़ फिरायकर एक ऊँचे पेड़ पर ऐसा फेंका कि गिरते ही वह मर गया और उसके साथ वह रूख भी टूट पड़ा दोनों के गिरने से अति भारी शब्द हुआ और सारे बन के वृक्ष हिल उठे।

चौपाई—देख दूर से कहत मुरारी। हाल्यों रूख शब्द भयौ भारी।
तबहि सखा हलधर के आए। चलहु कृष्ण तुम वेगि बुलाए॥

एक असुर मारा है बलराम! सो पड़ा है वाही ठाम। इतनी बात के सुनते ही कृष्ण भी बलरामजी के पास पहुँचे तब धेनुक के साथी जितने राक्षस थे सो सब चढ़ आये तिन्हें श्रीकृष्णचन्द्रजो ने सहज ही में मार गिराये, तब तो सब ग्वाल-वालां प्रसन्न हो निधड़क फल तोड़ फूल तोड़े मन मानती झोलियाँ भरलीं और गायें घेर श्रीकृष्णजी ने बलदेवजी से कहा महाराज! बड़ी देर से आये हैं अब घर को चलिये। इनका बचन सुनते ही दोनों भाई गायें लिये ग्वालवालों समेत हँसते साँझ को घर आये और फल लाये थे सो सारे वृन्द्रावन में बँटवाये सब को बिदादे आय सोये फिर भोर के तड़के उठते ही श्रीकृष्ण ग्वालोंवालों को बुलाय कलेऊ कर गायें ले बन को गये और गौ चराते कालीदह पै जा पहुँचे यहाँ ग्वालों ने गायों को पानी पिलाया और आप भी पिया जो जल पी वहाँ से उठे तो गायों समेत मारे बिष के सब लोट गए तब श्रीकृष्णचन्द्र ने सबों को जिलाया।

इति श्री लल्लूलाल कृते प्रेमसागरे धेनुकासुर बधो नाम षोडसो अध्याय॥ १६।

अध्याय-१७

❀ अथ नाग लीला प्रारम्भ ❀

श्रीशुकदेवजी बोले महाराज! ऐसे सबन की रक्षाकर श्रीकृष्ण ग्वाल वालों

के साथ गेंद खेलने लगे, और जहाँ कालिया नाग था तहाँ चार कोस तक यमुना का जल उसके विषसे ऐसा खौलता था कि कोई पशु पक्षी तहाँ न जा सकता और जो भूल कर जाता सो लपट से झुलस दह में गिर पड़ता और तीर पर कोई रूख

(काली-मर्दन)

भी न उपजता। एक अविनाशी कदम्ब तट पर था सो उस पर एक समय अमृत चोंच में लिये गरुड़ आ बैठा था उसके मुखसे एक बूँद अमृत की उस पर गिर पड़ी थी इस लिये वह रूख बच रहा।

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी ने राजा परीक्षित से कहा महाराज! श्रीकृष्णचन्द्रजी कालिया का मारना जो में ठान गेंद खेलते२कदम्ब परजा चढ़े और नीचे से सखा ने गेंद चलाई तो यमुना में गिरी उसके साथ श्रीकृष्ण भी कूदे इतने में कूदने का शब्द कान से सुन कर वह कालिया विष उगलने लगा और अग्निसम फुङ्कार मार-मार कहने लगा कि ऐसा कौन है जो अब लग दह में जीता है। कहीं अक्षय बृक्ष तो मेरा तेज न सहकर टूट पड़ा कि कोई पशु पक्षी आया है जो अब तक जल में आहट होता है यों कह वह एक सौ दस फणों से विष उगलने लगा और श्रीकृष्ण फिरते फिरते थे तिस समय सखा रो रो हाथ पसार२पुकारते थे गायें मुँह बाए चारों ओर रँभाती हूकती फिरती थीं। ग्वालबाल न्यारे ही कहते थे श्याम बेग निकल आइये नहीं तो तुम बिन घर जाय हम क्या उत्तर देंगे। ये तो यहाँ दुखित हो यों कह रहे थे। इतने में किसी ने बृन्दावन में जा

सुनाया कि श्रीकृष्ण कालीदहमें कूद पड़े यह सुन रोहिणी यशोदा और नन्दगोपी गोप समेत रोते पीटते उठ धाये और गिरते परते कालीदह तट पर आये तहाँ श्रीकृष्ण को न देख व्याकुल हो नन्दरानी दौड़ कर पानी में गिरने चलीं तब गोपियोंने बीच ही में हाथ पकड़ा और ग्वालों ने नन्दजीकोथाम ऐसे समझाकरकहा-

चौपाई-छाँड़ि महावन या बन आये। तोहू दैत्यन अधिक सताये ।
बहुत कुशल असुरन ते करी। अब क्यों न दह से निकसतहरी ॥

कि इतने में पीछे से बल्देव जी भी वहाँ आये और सब ब्रजवासियों को समझाकर बोले अभी आवेंगे अविनाशी तुम काहे को होत हो उदासी।

चौपाई-आज साथ आयो मैं नाहीं। मो बिन हरि पैठे दह माहीं ॥

इतनी कथा कह श्री शुकदेव जी राजा परीक्षित से बोले कि महाराज! इधरतो बलरामजी सबको यों आशाभरोसा देतेथे और उधर श्रीकृष्णजी तैर कर कालीके पास गये तौ वह आ इनके सारे शरीर से लिपट गया तब श्री कृष्ण ऐसे मोटे हुए कि उसे छोड़ते हो बना फिर ज्यों २ वह फुङ्कार मार २ इन पर फन चलाता था त्यों२ ये अपने को बचाते थे निदान ब्रजवासियों को अति दुःखित जान श्रीकृष्ण यकायक उचक उसके शिर पर आ चढ़े।

तबतो मारे बोझके कालीमरने लगा और फण पटक २ उसने जीभें निकाल दीं, तिनसे रुधिरकीधार वह निकली जब बिष और बल का गर्व गया तब उसने मन में जानाकि आदि पुरुषने अवतारलिया, नहीं इतनी किसमें सामर्थ है जो मेरे विष से बचे यह समझ जीव की आशा तज शिथिल होरहा तब नागपत्नियों ने आय हाथ जोड़ शिर नवाय बिनती कर कहा महाराज! आपने अच्छा किया इस दुखदाई अति अभिमानी का गर्व दूर किया अब इसके भाग जागे जो तुम्हारा दर्शन पाया, जिन चरणों को ब्रह्मादिक सब देवता जपतप कर ध्यावते हैं सोई पद कालीके शीश पर बिराजते हैं इतना कह फिर कही कि महाराज! हम पर दया कर इसे छोड़ दीजे नहीं तो इसके साथ हमें भी बध कीजै, क्योंकि स्वामी बिन स्त्री का मरना ही अच्छा है और जो बिचारिये तो उसका भी कुछ दोष नहीं, यह तो जाति का स्वभाव है कि दूध पिवाये विष बढ़ै—

इतनी प्रार्थना नागपत्नी से सुन श्री कृष्णचन्द्र उस परसे उतर पड़े तब प्रणाम कर हाथ जोड़ काली ने कहा नाथ ! मेरा अपराध क्षमा कीजै मैंने अनजाने आप पर फन चलाये, हम अधम जाति सर्प हमें इतना ज्ञान कहाँ जो तुम्हें पहचानें। श्रीकृष्ण बोले अच्छा जो हुआ सो हुआ पर अब तुम यहाँ न रहो कुटुम्ब समेत रमणक द्वीप में जा बसो। यह सुन काली नै डरते काँपते कहा कृपानाथ ! वहाँ जाऊँ तो गरुड़ मुझे खा जायगा उसी के भय से मैं यहाँ भाग आया हूँ। श्रीकृष्ण बोले अब तू निर्भय चलाजा हमारे पद के चिन्ह तेरे सिर पर देख तुझ से कोई न बोलेगा ऐसे कह श्री कृष्णचन्द्र ने उसी समय गरुड़ को बुलाय काली के मन का भय मिटाय दिया तब काली धूप दीप नैवेद्य समेत बिधि से पूजाकर बहुत सी भेंट श्री कृष्णचन्द्र के आगे धर हाथ जोड़ विनतीकर सकुटुम्ब रमणक द्वीप गया और श्री कृष्णचन्द्र जल से बाहर आये।

इति श्री लल्लूलाल कृते प्रेमसागरे कालीमर्दन नाम सप्तदसोऽध्यायः ॥ १७ ॥

अध्याय–१८

इतनी कथा सुन राजा परीक्षित नै श्री शुकदेव जी से काली के रमणक द्वीप छाड़कर यमुना में रहने का कारण विस्तार पूर्वक पूछा। तब श्री शुकदेव जी बोले राजा ! रमणक द्वीप में हरि का वाहक गरुड़ रहता है सो अति बलवान है तिससे वहाँ बड़े २ सापों ने हार मान उसे एक साँप नित देना कहा सोई नित एक २ रूख पर धर आवै वह आवै और खाजाय एक दिन कद्रू का पुत्र काली अपने विषका घमंडकर गरुड़ का भक्ष्य खाने गया इतने में वहाँ गरुड़ आया और दोनों में अति युद्ध हुआ, निदान हारमान काली अपने मन में कहने लगा कि अब इसके हाथ से कैसे बचूँ और कहाँ जाऊँ। इतना कह साचा कि बृन्द्रावन में यमुना तीर जा रहूँ तो बचूँ क्योंकि यह वहाँ नहीं जा सकता ऐसे बिचार काली वहाँ गया फिर राजा परीक्षित नै शुकदेव मुनि से पूछा कि महाराज ! वह गरुड़ वहाँ क्यों नहीं जा सकता था। सो भेद कहो श्रीशुकदेवजी बोले हे राजा ! किसी समय वहाँ यमुना के तट पर लोमषऋषि बैठे तप करते थे। वहाँ गरुड़ नै जाय एक मछली मार खाई तब ऋषि ने क्रोध कर उसे शाप दिया कि तू इस ठौर फिर आवेगा तो जीता न

जावेगा। इस कारण वह वहाँ न जा सकता था, और जब काली वहाँ गया तभी से उस थल का नाम काली दह हो गया।

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी बोले हे राजा! जब श्रीकृष्णचन्द्र निकले तब नन्द यशोदा ने आनन्द कर बहुत सा दान पुण्य किया पुत्र का मुख देख नयनों को सुख दिया और ब्रजबासियों के भी जी में जी आया, इस बीच साँझ हुई तो आपस में कहने लगे कि अब दिन भर के हारे थके प्यासे घर कहाँ जाँयेगे, रातकी रात यहीं काटें भोर भये वृन्द्राबन चलेंगे यह कह सब सोय रहे।

चौ०-आधी रात बीत गई। भारी कारी आँधी तब भई॥
दावा अग्नि लगी चहुँ ओर। अति झर बरै वृक्ष बिन ठौर॥

आग लगते ही सब चौंक पड़े और घबरा कर चारों ओर देख हाथ पसार पसार लगे पुकारने कि हे कृष्ण! हे कृष्ण! इस आग से बेगि बचाओ नहीं तो

॥ दावाग्नि- पान ॥

क्षण भर में हम सब को जलाय भस्म करती हैं तब नन्द यशोदा सहित सब ब्रज-बासियों ने ऐसा आरत हो पुकारा श्री कृष्ण जी ने उठते ही आग पल में पी सब के मन की चिन्ता दूर की भोर के होते ही बृन्दावन आये घर घर आनन्द मङ्गल हुए बधाये।

इति श्रीलल्लूलाल कृते प्रेमसागरे दावा अग्निमोचन नाम अष्टदशोऽध्यायः ॥१८॥

अध्याय-१९

इतनी कथा कह शुकदेव जी बोले महाराज! अब मैं ऋतु वर्णन करता हूँ

जिसमें श्री कृष्णचन्द्र जी ने लीला करी सो चित्त दे सुनो। प्रथम ग्रीषम ऋतु ने आते ही सब संसार का सुख ले लिया और धरती आकाश को तपाय अग्नि सम किया पर श्रीकृष्ण के प्रताप से वृन्दावन में सदा बसंत ही रहे, जहाँ घने घने कुंजों पर बेलें लहलहा रहीं बर्ण २ के फूल फूले हुए तिन पर भौंरों के झुंड के झुंड गुंजे, आमों की डालियों पर कोयल कूक रही ठंडी २ छाया में मोर नाच रहे, सुगन्ध लिये मीठी २ पवन बह रही, और बन के एक ओर यमुना न्यारी ही शोभा दे रही थी तहाँ कृष्ण बलराम गायें छोड़ सब सखा समेत आपस के अनूठे खेल खेल रहे थे, इतने में कंस का पठाया ग्वाल का रूप बनाया हुआ प्रलम्ब नाम का राक्षस आया उसे देखते ही श्रीकृष्णचन्द्र ने बलदेवजी से सैन में कहा—

चौ०—अपनों सखा नहीं बलवीर। कपटरूप यह असुर शरीर॥
याके बल कौ करौ उपाय। ग्वाल रूप मारौ नहिं जाय॥
जब यह रूप धरै सुर अपनो। तब तुम याहि ततक्षण हनौ॥

इतनी बात बलदेव जी को चिताय श्री कृष्ण जी ने प्रलम्ब को हँसाकर पास बुलाय हाथ पकड़ के कहा—

चौ०—सबसे नीकौ भेस तिहारौ। भलो कपट बन मित्र हमारौ॥

॥ प्रलम्बासुर- बध॥

यों कह उसे साथ ले धाये ग्वालबाल बाँट आधे बलरामजी को दिये। लड़कों को बैठाय लगे फल फूल के नाम पूछने और बताने, इतनेमें बताते २ श्रीकृष्णहारे बल्देवजी जीते तब श्रीकृष्णजी की ओर के ग्वाल बलदेवजी के साथियों को काँधे

पर चढ़ाय चढ़ाय ले चले तहाँ प्रलम्ब बलराम जी को सबसे आगे ले भागा और बन में जाय उसने अपनी देह बड़ाई तिस समय उस काले २ पहाड़ पर बल्देव जी ऐसे शोभायमान होते थे जैसे श्याम घटा पर चन्द्रमा और कुण्डलकी दमक बिजली सी दमकती थी, पसीना मेह सा बरसता था इतने ही में ज्यों ही अकेले में बलराम जी को पाय वह मारने को हुआ त्यों ही उन्होंने मारे घूसों के उसे मार गिराया और प्राण हर लिये।

इति श्रीलल्लूलाल कृते प्रेमसागरे वत्सासुर वधो नाम इक्कोनविंशोऽध्याय ॥१९॥

अध्याय- २०

श्रीशुकदेव जी बोले हे राजा ! प्रलम्ब को मार के चले बलरामजी तभी सोंही सखाओ समेत आन मिले घनश्याम, त्यों ही जो ग्वाल बाल बन में गाय चराते थे वे भी असुर मरा सुन गायें छोड़ उधर देखने को चले तो लों गायें चरतो दाव काँस बन से निकल मूँज बन में बढ़ गईं।

चौ०-बिछुरी गैया बिछुरे ग्वाल, भूले फिरें मूँज बन हाल। रूखन चढ़ो परस्पर टेरे, लेले नाम पिछोराफेरें ॥

इतने में किसी ने आय हाथ जोड़ श्रीकृष्ण से कहा कि महाराज ! गायें सब

॥ दावाग्नि मोचन ॥

मूँज बन में पैठ गईं तिन के पीछे ग्वालबाल न्यारे ढूँढ़ते भटकते फिरते हैं इतनी बात के सुनते ही श्रीकृष्ण ने कदम्ब पर चढ़ ऊँचे स्वर से जो बंशी बजाई तो सुन ग्वालबाल और सब गायें मूँज बन को छोड़कर ऐसे आन मिलीं जैसे सावन भादों की नदी तुङ्ग तुरङ्ग को चोर समुद्र में जा मिले इस बीच देखते हैं, चारों ओर से बन

दहड़ दहड़ जलता चला आता है, यह देख ग्वालवाल और सखा अति घबड़ाय भय खाय कर पुकारे हे कृष्ण ! इस आग से बेग बचाओ, नहीं तो अभी च्चण एक में सब जले मरते हैं कृष्ण बोले तुम अपनी आँखें मूँदो । तब श्रीकृष्णजी ने पल में आग पीली तब कहा कि आंखें खोल दो ।

चौपाई--ग्वाल खोल दृग कहत निहारी । कहाँ गई वह आग मुरारी ॥
कब फिर आये बन भण्डीर । होत अचम्भा यह बलवीर ॥

ऐसे कह गायें ले कृष्ण बलराम के साथ बृन्दावन में आये और सबों ने अपने अपने घर जाय कहा कि आज बन में बलराम जी ने प्रलम्ब नाम दैत्य को मारा, और मूँज वन में आग लगी थी सो भी हरि के प्रताप से बुझ गई ।

ग्वालवालों के मुख से यह बात सुन ब्रजबासी उसे देखने गये, परन्तु उन्होंने श्रीकृष्ण की माया का कुछ भी भेद न पाया ।

इति श्री लल्लूलाल कृते प्रेमसागरे दावाग्निविमोचनो नाम विंशोऽध्यायः ॥ २० ॥

अध्याय--२१

❀ वर्षा ऋतु वर्णन प्रारम्भ ❀

श्रीशुकदेव मुनि बोले कि महाराज ! ग्रीष्म की अति अनीति देख पावसप्रचंड नृप मेघ पृथ्वी के जीव जन्तुओं पर दयाकर चारों ओर से दल बादल समेत लड़ने को चढ़ आया तिस समय घन जो गरजता था सोई धोंसा बजाता था ।

दोहा--गरजत घन धोंसा बजत, विरति घटा मतु वोर । ध्वजा बनी बक पंक्ति हैं, बुंद बाण भये तीर ॥
सोरठा--लखि वायस को वेष, बचा जान मोसम भगी । पति लौटयौ परदेश, आठ मास पियके निकट ॥

कुछ गिरि शीतल हुए और गर्भ रहा उसमें अठारह भार पुत्र उपजे सो भी फूल भेंट ले २ पिता को प्रणाम करने लगे, उस कालसे बृन्दावन की भूमि ऐसी सुहावनी लगती थी जैसे श्रृङ्गार किये कामिनी, जहाँ तहाँ नदी नाले सरोवर भरे हुए तिन पर हंस, सारस, मोर शोभा दे रहे थे वृक्षों की डालियाँ झूम रही उन पर पक्षी कलोलें कर रहे थे, सूहेकुसुम्मे जोड़े पहिरे गोपी ग्वाल झूलों पर झूल २ ऊँचे २ स्वरों से मल्हार गाते थे । तहाँ श्रीकृष्ण बलराम बाल लीला, कर २ अधिक सुख दिखाते थे । इसी तरह वर्षा ऋतु बीती श्रीकृष्ण ग्वालवालों से कहने लगे कि भैया ! अब तो सुखदाई शरद ऋतु आई है ।

चौ०–सब से सुख भारी अब जानों। स्वाद सुगन्ध रूप पहचानों ॥
निशि नक्षत्र उज्वल आकाशी। मानहुँ निर्गुन ब्रह्म प्रकाशी ॥
चार मास जा विरमे गेह। भये शरद नित बजे सनेह ॥
अपने अपने काज सिधाये। भूप बड़े लखि देश पराये ॥

इति श्री लल्लूलाल कृते प्रेमसागरे वर्षाऋतु वर्णनो नाम एकाविंशोऽध्यायः ॥२१॥

अध्याय–२२

श्रीशुकदेवजी बोले कि हे राजा ! इतनी बात कह श्री कृष्णचन्द्र फिर ग्वाल बाल साथ ले लीला करने लगे। और जबलग श्रीकृष्ण वन में धेनुचरावें तब तक सब गोपी घर में बैठी हरि का यश गावें, एक दिन श्री कृष्ण ने बनमें वेणु बजाई तो बन्शी की ध्वनि सुन सारी ब्रजयुवतियाँ हड़बड़ाय उठि धाईं और एक ठौर मिलकर बाट में आ बैठीं तहाँ आपस में कहने लगीं कि हमारे लोचन तब सफल होंगे जब श्रीकृष्ण के दर्शन पावेंगी। अभी तो कान्ह गौवों के साथ बनमें नाचते गाते फिरते हैं साँझ समय इधर आवेंगे तब दर्शन मिलेंगे। यह सुनकर तब एक गोपी बोली—

चौ०–सुनो सखी वह वेणु बजाई। वाँस वंश देखी अधिकाई ॥

बन्शी में इतना क्या गुण है जो दिन भर श्रीकृष्ण के मुँह से लगी रहती है। अधरामृत पी आनन्द की वर्षा वर्षाती है, क्या हमसे भी यह प्यारी ! जो निशि दिन लिये रहते हैं बिहारी।

चौपाई–मेरे आगे तौ वह गढ़ी। अब भई सौत बदन पर चढ़ी ॥

जब श्रीकृष्ण इसे पीताम्बर से पोंछे बजाते हैं तब सुर किन्नर मुनि और गंधर्व अपनी २ स्त्रियों को साथ ले बिमानों पर बैठ २ हाँसकर सुनने को आते हैं और सुनकर मोहित हो जहाँ के तहाँ चित्र से रह जाते हैं, ऐसा इसने क्या तप किया है जो सब इसके आधीन होते हैं। इतनी बात सुनकर एक गोपीने उत्तर दिया कि पहले तो इसने बाँस के वंश में उपज हरिका सुमिरण किया पीछे घाम शीत जल ऊपर लिया, निदान टूँक २ हो देह जलाय धुआँ पिया।

यह सुन कोई ब्रजनारी बोली कि हमको वेणु क्यों न रची ब्रजनाथ जोनिश दिन रहतीं हरिके साथ। इतना कथा कह श्री शुकदेव जो बोले महाराज !

॥ गोपियों का बाँसुरी वर्णन ॥

चौपाई–इसने तप कीन्हौ कैसा । सिद्धि हुई पाया फल ऐसा ॥

जबतक श्रीकृष्ण धेनु चराय बन से न आवें तबतक गोपी नित्य हरिके गुणगावें

इति श्री लल्लूलाल कृत प्रेमसागरे गोपी वेणु गीत नाम द्वादिशोअध्याय ॥२२॥

अध्याय–२३

॥ अथ चीर हरण लीला ॥

श्रीशुकदेव मुनि बोले, शरदऋतु के जाते ही हेमन्त ऋतु आई तिस काल ब्रजवाला आपस में कहने लगीं सुनों सहेली अगहन के न्हान से मन के सब पातक जाते हैं और मन की आशा पूजती हैं यह सुन सब के मन में आई कि अगहन नहाये तो श्रीकृष्ण वर पाइये, ऐसा बिचार होते ही भोर उठ वस्त्र आभूषण पहन सब ब्रजवाला मिल यमुना नहाने आईं स्नान कर सूर्य को अर्घ धूप दीप नैवेद्य आगे धर, पूजा कर, हाथ जोड़ शिर नवाय, गौरी को मनाय के बोली, हे देवी ! हम तुम से बराबर यही बर माँगतीं हैं कि श्रीकृष्ण हमारे पति होंय । इसी विधि से गोपी नित नहावैं और दिन भर वृत कर सांझ को दही भात खा भूमि पर सोवें ।

ऐसा मन में बिचार के कि हमारे व्रत का फल शीघ्र मिले । एक दिन जब सब ब्रजवाला मिल स्नान को औघट घाट गईं और वहाँ जाय चीर उतार तीरपर धर नग्न हो नीर में पैठने लगीं हरि के गुण गाय २ जल क्रीड़ा करने उस काल श्रीकृष्ण भी बंशीवट की छाँह में बैठे धेनु चरावते थे । इनके गाने का शब्द सुन के चुपचाप चले आये और लगे छिप कर देखने । निदान देखते २ जो इनके जी में

आई तो सब वस्त्र चुराय कदम्ब पर जा चढ़े और गठरी बाँध आगे धरली इतने में ही गोपिका जो देखें तो तीर पर चीर नहीं, तब घबराय कर चारों ओर उठउठ

गोपियों का जल में नगन न रहने का उपदेश करना

लगीं देखने और आपस में कहने लगीं कि अभी तो यहाँ एक चिड़िया भी नहीं आई, बसन कौन हर लेगया भाई।इस बीच एक गोपी ने देखा कि शिर पर मुकुट हाथ में लकुट, केशर तिलक दिये, बनमाल दिये पीताम्बर पहरे कपड़ों की गठरी बाँधे, मौन साधे श्रीकृष्ण कदम्ब पर चढ़े छिपे हुए बैठे हैं, वह देखते ही पुकारी सखो! वह देखो हमारे चितचोर कदम्ब पर पट लिये विराजते हैं। यह बचन सुन और सब युवतियाँ कृष्ण को देख लजा पानी में पैठ हाथ जोड़ शिर नबाय बिनती कर हा हा खाय बोलीं।

चौपाई—दीनदयाल हरण दुख पियारे। दीजे मोहन चीर हमारे॥
ऐसे सुन के कहै कन्हाई। यों नहिं दूँगा नन्द दुहाई॥
एक २ चलिके बाहर आवो। तब तुम अपने कपड़े पावो॥

ब्रजबाला रिसाय के बोलीं, यह तुम भली सीख सीखे हो जो हमसे कहते हो कि नङ्गी बाहर आओ। अभी अपने पिता बन्धुओं से जाय कहैं तो वे तुम्हें चोर२ कह आ पकड़ें और नन्दयशोदा को जो सुनावें तो वे भी सीख भली भाँति से सिखावें, हम करती हैं किसी की कान, तुमने मेटी सब पहिचान।

इतनी बात के सुनते ही क्राध कर श्रीकृष्णजी ने कहा कि अब चीर तभी

पाओगी जब उनको बुला लाओगी, नहीं तो नहीं, तब गोपी बोली दीनदयाल ! हमारे सुख के दिवैया, पतिके रखैया तो आपही हैं,हम किसे लावेंगी तुम्हारे हेतु नेम कर मार्गशीर्ष माम नहाती है, श्रीकृष्ण बोले जो तुम मन लगाय मेरे लिए अगहन नहाती हो तो लाज और कपट त्याग तट आय अपने अपने चीर लो जब श्रीकृष्णचन्द्रने ऐसा कहा तब सब गोपी आपसमें बिचार करने लगी कि चलो सखी जो मोहन कहते हैं सोई मानें क्योंकि ये हमारे तन मन का सब जानते हैं, इनसे लाज क्या!यों आपस में ठान श्रीकृष्ण की बातमान, हाथ से कुच देह दुराय सब युवती नीरसे निकल शिर नवाय जब सन्मुख तीरपर जाके खड़ीहुईं तब श्री कृष्ण हँसके बोलेअबतुम हाथजोड़ आगे आओ तो ये वस्त्र दूँ गोपी तब बोलीं–

चौपाई-काहे कपट करत नन्दलाल । हम सुधी भारी ब्रजबाल ॥
परी ठगौरी सुधि बुधि गई । ऐसी तुम हरि लीला ठई ॥
मन सँभारि के करिहैं लाज । अब तुम कछू करो ब्रजराज ॥

इतनी बात कह गोपियोंने हाथ जोड़े तो श्रीकृष्णचन्द्र ने वस्त्र दे उनके पास आय कहा कि तुम अपने मनमें कुछ इस बात का गुस्सा मत मानो यह मैंने तुम्हें सीखदी है क्योंकि जलमें वरुण देवताका वास है इससे जो कोई नग्न होय जल में नहाता है, उसका सब धर्म बह जाता है,तुम्हारे मनकी लगन देख मगनहो मैंने यह भेद तुमसे कहा अब अपने२घरजाओ फिर महीने में आय मेरेसाथ रास कीजिये ।

श्रीशुकदेव मुनि बोले कि महाराज!इतना बचन सुन प्रसन्न हो सन्तोष कर गोपियाँ अपने२घरों को गईं,और श्रीकृष्ण बंशीवटपैआय गोप ग्वालबाल सखाओं को सङ्ग ले आगे चले तिस समय चारों ओर सघन बन देख२बृक्षों की बड़ाई करने लगे कि देखौ ये संसार में आ अपने ऊपर कितने दुःख सह लोगों को सुख देते हैं जगत में ऐसे ही परकाजियों का आना सफल है । ऐसे कह आगे बढ़ यमुना के निकट जाय पहुँचे ।

इति श्री लल्लूलाल कृत प्रेमसागरे चीर हरणो नाम त्रयोविंशो अध्यायः ॥२३॥

अध्याय–२४

श्रीशुकदेवजी बोले कि,जब श्रीकृष्ण यमुनाके पास पहुँचे रूख तले लाठी टेक खड़े हुए तब सब ग्वाल और सखाओं ने आय कर जोर कहा कि महाराज ! हमें

इस समय बड़ी भूख लगी है जो कुछ छाक लाये थे सो खाई पर भूख न गई, कृष्ण बोले देखो वह जो धुआँ दिखाई देता है तहाँ मथुरिये कंस के डर से छिप के यज्ञ करतेहैं उनके पास जा हमारा नाम ले दण्डवत कर हाथ बाँध खड़े हो दूरसे भोजन माँगलो ऐसे दीन हो मागियो जैसे भिखारी अधीन हो माँगते हैं, यह बात सुन ग्वाल चले २ वहाँ गये जहाँ मथुरिये बैठे यज्ञ करते थे जाते ही उन्होंने प्रणाम कर निपट अधीनता से कर जोर के कहा महाराज ! आपको दण्डवत् कर हमारे द्वारा श्रीकृष्णचन्द्रजी ने यह कहलाया है कि हम को अति भूख लगी हैं, कुछ कृपा कर

चौबों का यज्ञ करना उसी समय उनकी पत्नियों से श्रीकृष्ण का भोजन माँगना

भोजन भेज दीजिये इतनी बातें ग्वालों के मुख से सुन मथुरिये क्रोधकर बोले बड़े मूर्ख हो जो हम से अभी यह बात कहते हो, बिना होम समाप्त हुए किसी को कुछ न देंगे। सुनों जब यज्ञ कर लेंगे तब जो कुछ बचेगा बाँट देंगे फिर ग्वालों ने गिड़-गिड़ा के बहुतेरा कहा कि महाराज ! घर आये भूखों को भोजन करवाने से बड़ा पुण्य होता है, पर वे इनके कहने को वे कुछ ध्यान में न लाये वरन मुँह फेर आपस में कहने लगे ।

चौपाई–बड़े मूढ़ पशु पालक नीच। माँगत भात होम के बीच ॥

तब तो ये वहाँ से निराश हो पछताय श्रीकृष्ण के पास आय बोले महाराज ! भीख माँग मान सहज गमाया, तो भी खाने को कुछ हाथ न आया अब क्या करें ! श्रीकृष्ण जी ने कहा कि अब तुम उनकी स्त्रियों से जा माँगो, वे बड़ी

दयावन्त धर्मात्मा हैं उनकी प्रीति भक्ति देखियो वे तुम्हें देखते ही आदर मान से भोजन देंगी यों सुन वे फिर वहाँ गये जहाँ वे बैठी रसोई करती थीं, जाते उन से कहा कि बनमें श्रीकृष्ण को धेनु चराते क्षुधा लगी है, सो हमें तुम्हारे पास पठाया है, कुछ खाने को होय तो बता दो, इतना बचन ग्वालों के मुख से सुनते ही वे सब प्रसन्न हो कंचन थालों में षटरस भोजन भर ले २ उठ धाईं और किसी के रोके न रुकी एक मथुरनी के पति ने तो जाने न दिया तो वह ध्यान कर देह छोड़ सब से पहिले ऐसे जा मिलीकि जैसे जलमें जल जा मिले और पीछे से सब चलीं २ वहाँ आईं जहाँ श्रीकृष्णचन्द्र ग्वालबालों समेत बृक्ष की छाँह में सखा के काँधे पर हाथ दिये त्रिभंगी छवि किये कमल का फूल कर में लिये खड़े थे, आते ही थाल आगे धर दण्डवत् कर हरि मुख देख देख आपस में कहने लगीं कि सखी! येही हैं नन्द-किशोर, जिनका नाम सुन सुन ध्यान धरतीं थी, अब चन्द्रमुख देख लोचन सफल कीजै, और जोबन का फल लीजै ऐसे बतराय हाथ जोर बिनती कर श्रीकृष्ण से कहने लगीं, कि कृपा नाथ! आपकी कृपा बिन तुम्हारा दर्शन कब किसी को होता है। आज धन्य भाग्य हमारा जो दर्शन पाया, और जन्म का पाप गमाया।

मूरख विप्र कृष्ण अभिमानी, श्री मद लोभ मोह मति मानी।
ईश्वर को मानुष कर मानें, माया अन्ध कहाँ पहिचानें॥
जप तप यज्ञ जासु हित कीजै, ताको कहा न भोजन दीजै।

महाराज! वही धन्य है धन, जन, लाज, जो आवे तुम्हारे काज और सोई है तप ज्ञान तिस में आवे तुम्हारा ध्यान, इतनी बात सुन श्रीकृष्णचन्द्र उन की क्षेम कुशल पूछ कहने लगे कि—

माता जनि मोहि करो प्रणाम। मैं हूँ नन्द महर को श्याम॥

जो ब्राह्मण की स्त्री से पाँव पुजवाते हैं सो क्या संसार में कुछ बड़ाई पाते हैं। तुम ने हम को भूखे जान दया कर बन में आन सुधि ली, अब हम यहाँ तुम्हारी क्या पहुनाई करें।

चौ०- वृन्दावन घर दूर हमारा। किस विधि आदर करें तुम्हारा॥

जो वहाँ होते कुछ फल फूल ला आगे धरते, तुम हमारे कारण दुःख पाय जङ्गल में आईं और यहाँ हम से तुम्हारी टहल कुछ न बन आई, इस बात का पछ-

तावा ही रहा शिष्टाचार कर फिर बोले तुम्हें आये बड़ी देर हुई अब घरको सिधारिये, क्यों कि ब्राह्मण तुम्हारी बाट देखते होंगे, इस लिये कि स्त्री बिन यज्ञ सफल नहीं होता,यह बचन श्रीकृष्ण के सुनते ही हाथ जोर बोली महाराज ! हमने आप के चरण कमल सेवन कर कुटुम्ब की माया सब छोड़ी,क्योंकि जिनका कहा न मान हम उठ धाईं, तिनके यहाँ अब कैसे जाँय । जो वे घर में न आने दें तो फिर कहाँ बसें । इससे आपकी शरण में रहें सो भला और नाथ ! एक नारी हमारे साथ तुम्हारे दर्शन की अभिलाषा किये आवती थी उसके पति ने रोक रक्खा तब स्त्री ने अकुला कर अपना प्राण त्याग दिया, इस बात के सुनते ही हँस कर श्रीकृष्णचन्द्र ने उसे दिखाया जो देह छोड़ आई थी, और कहाकि सुनो, जो हरि से हित करता तिसका विनाश कभी नहीं होता यह तुम से पहले आ मिली है ।

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज ! उसको देखते ही एक बार तो अब अचम्भे में रहीं पीछे ज्ञान हुआ,तब हरिगुण गाने लगीं इसीबीच श्रीकृष्णचन्द्र ने भोजन कर उन से कहाकि अब अपने स्थान को प्रस्थान कीजै,तुम्हारे पति कुछ न कहेंगे जब श्रीकृष्ण ने उन्हें समझाय बुझाय के कहा तब वे विदा हो दण्डवत् कर अपने घर गईं और उनके स्वामी सोच विचार कर पछताव कह रहे थे कि हमने कथा पुराण में सुना है कि किसी समय नन्द यशोदा ने पुत्र के निमित्त बड़ी तपस्या की थी, तहाँ भगवान ने आय उन्हें बर दिया था कि हम यदुकुल में अवतार ले तुम्हारे यहाँ जन्मेंगे वे ही जन्मले आयेहैं उन्होंने ग्वालवालों के हाथ भोजनमँगवाय भेजाथा सोहमने यह क्याकियाजोआदिपुरुषने भोजनमाँगानदिया ।

यज्ञ धरम जा कारण ठये । तिनके सन्मुख आज भये ॥
आदि पुरुष हम मानुष जान्यो । नाहिं बचन ग्वालन को मान्यो ॥
हम मूरख पापी अभिमानी । कीन्हीं दया न हरि गति जानी ॥

ऐसे पछिताय मथुरियों ने अपनी स्त्री के सन्मुख होय कहा कि धन्य भाग्य तुम्हारा जो हरि दर्शन कर आईं तुम्हारा ही जीवन सफल है ।

इति श्री लल्लूलाल कृत प्रेमसागर द्विज पत्नी याचन नाम चतुर्विंशो अध्याय ॥ २४ ॥

अध्याय—२५

❀ अथ गोवर्धन पूजन लीला ❀

श्रीशुकदेवजी बोले जैसे श्रीकृष्णचन्द्रने गिरि गोवर्धन उठाया और इन्द्रका गर्व

हरा सोई कथा अब कहता हूँ तुम चित्त दे सुनो सब ब्रजबासी वर्षवें दिन कार्तिक बदी चौदस को नहाय धोय केसर चन्दन से चौक पुराय भाँति भाँति की मिठाई और पकवान धर धूप दीप कर इन्द्रकी पूजा किया करें। यह रीति उनके यहाँ परम्परा से चली आवती थी एक दिन वही दिवस आया तब नन्दजी ने बहुत सी खाने की सामिग्री बनवाई और ब्रजबासियों के भी घर घर भोजन की सामिग्री हो रही थी तहाँ श्रीकृष्णने आय अपनी माँ से पूछाकि माँ! आज घरमें पकवान मिठाई जो हुई हैं सो क्या है। इसका भेद मुझे समझाय कहो तो मेरे मनकी दुविधा जाय यशोदा बोली कि बेटा! इस समय मुझे बात कहने का अवकाश नहीं, तुम अपने पितासे जा पूछो वे सुझाय कर कहेंगे यहसुन नन्द उपनन्द के पास आय श्री कृष्ण ने कहा कि पिता आज किस देवता के पूजन की ऐसी धूम धाम है जिसके लिये घर २ पकवान और मिठाई हो रही हैं वे कैसे भुक्ति मुक्ति बर के दाता हैं। उनका नाम और गुण कहो तब नन्दमहर बोले कि पुत्र!यह भेद तूने अबतक नहीं समझा कि मेघों के पति जो हैं सुरपति तिनकी पूजा है जिनकी कृपासे इस संसार में ऋद्धिसिद्ध मिलती है और तृण अन्न होता है वन उपवन फलते फूलते हैं, इससे सब जीव जन्तु, पशु, पक्षी आनन्दमें रहते हैं,यह इन्द्रपूजा की रीति हमारे यहाँ पुरखाओं के आगे से चली आती है, कुछ आज नई नहीं निकली। नन्दजीसे इतनी बात सुन श्रीकृष्णचन्द्रबोले हे पिता! जो हमारे बड़ोंने अनजाने इन्द्रकी पूजा की तो की पर अब तुम जानबूझ कर धर्म का पन्थ छोड़ औघट घाट क्यों चलते हो। इन्द्र के माननेसे कुछ नहीं होता क्योंकि वह भुक्ति मुक्ति का दाता नहीं और उससे ऋद्धिसिद्ध किसने पाई है। यह तुम ही कहो उसने किसे बर दिया है। हाँ एक बात यह है यज्ञ करने से देवताओं ने अपना राजा बना इन्द्रासन दे रखा है इससे कुछ परमेश्वर नहीं हो सकता सुनो! जब असुरों से बार बार हारता है तब भाग के कहीं जा छिप कर अपने दिन काटता है ऐसे कायर को क्यों मानों, अपना धर्म किस लिए नहीं पहचानो। इन्द्रका किया कुछ नहीं होसकता। जो कर्मलिखा है सोई होता है सुख सम्पति द्वारा, भाई बन्धु भी सब अपने धर्म कर्म से मिलते हैं और आठ मास जो सूर्य जल सोखता है सो चार महीने बरसता है तिसी से तृण

जल अन्न होता है और जो ब्रह्मा ने जो चार वर्ण बनाये हैं, ब्राह्मण क्षत्रिय, वैश्य शूद्र तिनके पीछे भी एक २ काम लगा दिया है कि ब्राह्मण तो वेद विद्या पढ़े क्षत्रिय सब की रक्षा करे, वैश्य खेती वाणिज्य करें शूद्र इन तीनों की सेवा में रहै पिता! हम वैश्य हैं गायें बढ़ी इससे गोकुल हुआ तिससे नाम गोप पड़गया हमारा यह कर्म है कि खेती वाणिज्य करें और गौ ब्राह्मण की सेवा में रहें वेदकी आज्ञा है कि अपनी कुल रीति न छोड़िये जो लोग अपना धर्म तज औरका धर्म पालते हैं सो ऐसे हैं जैसे कुल बधू हो पर पुरुष से प्रीति करै इससे अब इन्द्र की पूजा छोड़ दीजे और बन पर्वत की पूजा कीजे क्योंकि हम बनवासी हैं और हमारे राजा यही हैं जिनके राज्य में हम सुख से रहते हैं तिन्हें छोड़ और को पूजनाहमें उचित नहीं इससे अबसब पकवान मिठाई और अन्नले चलो और गोवरधनकीपूजा करो।

इतनी बात के सुनते ही नन्द उपनन्द उठ कर वहाँ गये जहाँ बड़े बड़े गोप अथाई पर बैठे थे। उन्होंने जोते ही सब कृष्ण की कही बातें उन्हें सुनाई वे सुन ते ही बोले कि कृष्ण सच्चो कहता है, तुम बालक जान उसकी बात मत टालो भला तुम ही बिचारो कि इन्द्र कौन है। और हम किस लिये उसे मानते हैं उस की पूजा ही छोड़ देना चाहिये।

हमें कहा सुरपति सों काजू। पूजें बन सरिता गिरराजू॥

ऐसे कह सब गोपों ने कहा—

दोहा—भलो मतो कान्हा दियो, तजिके सिगरे देवा। गोवरधन पर्वत बड़ो ताकी कीजे सेवा॥

यह बचन सुनते ही नन्दजी ने प्रसन्न हो गोपों में ढिंढोरा फिरवा दिया कि कल हम सारे ब्रजवासी चलकर गोवरधन की पूजा करेंगे! जिसके घर इन्द्र की पूजा के लिए पकवान मिठाई बनी है सो सब ले २ भोर ही गोवरधन पर जाइयो, इतनी बात सुन सकल ब्रजवासी दूसरे दिन भोर तड़के ही स्नान ध्यान कर सब सामिग्री थालों, परातों डला डलियाँ हाड़ी, चरुओं में भर कर गाड़ी बहँगियों पर रखवाय गोवरधन को चले तिस समय नन्द उपनन्द जी कुटुम्ब समेत सामिग्री ले सब के साथ हो लिए और बाजे गाजेसे चले सब मिल गोवरधन पहुँचे वहाँ जाय पर्वत को चारों ओर से झाड़ बुहार जल छिड़क घेवर, पापर, जलेबी, लाडू खुरमे, इमरती फेनी, पेड़े, बरफी, खाजे, गूँजे, मठुलिया। सीरा पूरी कचोरी,

सेव, पापड़, पकौड़े आदि पकवान और भाँति२ के भोजन व्यञ्जन, सन्धान चुन चुन रखदिए, इतने कि जिनसे पर्वत छिप गया और ऊपर फूलों की माला पहनाय वर्ण२ के पाटम्बर तान दिये तिस समय की शोभा वर्णी नहीं जाती। गिरि ऐसा सुहावना लगता था कि जैसे किसी की गहने कपड़े पहनाय नख शिख से श्रङ्गार होय नन्दजी ने पुरोहित बुलाय सब ग्वालों को साथ ले रोली अक्षत पुष्प, चढ़ाय धूप दीप नैवैद्य कर पान सुपारी दक्षिणा धर वेदकी बिधि से पूजा की तब श्रीकृष्ण ने कहा कि अब तुम शुद्ध मनसे गिरराज का ध्यान धरोतो वे आय दर्शन दे भोजन करें श्रीकृष्णसे यों सुनते ही नन्द यशोदा समेत सब गोप गोपी करजोर नयन मूँद ध्यान लगाय खड़े हुए तिस काल नन्दलाल उधर तो अति मोटी भारी दूसरी देह धर बड़े२हाथ पाँव कर कमलनयन चन्द्रमुख हो मुकुट धरे,बनमाला गेरे पीत बसन और रत्न जड़ित आभूषण पहर मुँह पसारे चुपचाप पर्वत के बीच से निकले और इधर आपही ने दूसरे रूपको देख सब से पुकार के कहा देखो गिरराज ने प्रगट हो दर्शन दिया जिनकी पूजा तुमने जो लगाय कीनी है।

गोप ग्वालों से श्रीकृष्ण का उपदेश करना और गोवर्धन पर्वत की पूजा ग्रहण करना

इतना वचन सुनाय श्रीकृष्णचन्द्रजी ने गिरिराजको दण्डवत की उनकी देखा देखी सब गोप प्रणाम कर आपस में कहने लगे कि इस भाँति इन्द्र ने कब दर्शन दिया था। हमने बृथा उसकी पूजा की, और क्या जानिये,पुरुखाओंने ऐसे प्रत्यक्ष

देवताको छोड़ क्यों इन्द्रको माना। यह बात समझमें नहीं आती यों सब बतराय रहे थे कि श्रीकृष्ण बोले अब देखते क्या हो। जो भोजन लाये हो सो खिलाओ इतना बचन सुनते ही गोपी गोप षटरस भोजन थाल परातों में भर उठाय लगे देने और गोवरधननाथ हाथ बढ़ाये २ लेले भोजन लगे करने निदान जितनी सामिग्री नन्द समेत ब्रजबासी ले गये थे सो खाई तब वह सूरत पर्वत में समाई फिर पर्वत को परिक्रमा दे दूसरे दिन गोवर्धन से चले हँसते२ बृन्दावन आये तिसकाल घर२ मङ्गल बधाये होने लगे और ग्वालबाल सब गाय बछड़ों को सङ्ग ले उनके गले में घण्टी घण्टालियाँ घुँघरू बाँध बाँध न्यारे ही कुतूहल कर रहे थे।

इति श्री लल्लूलाल कृते प्रेमसागरे गोवर्धन पूजा नाम पंचविंशो अध्यायः ॥२५॥

अध्याय २६

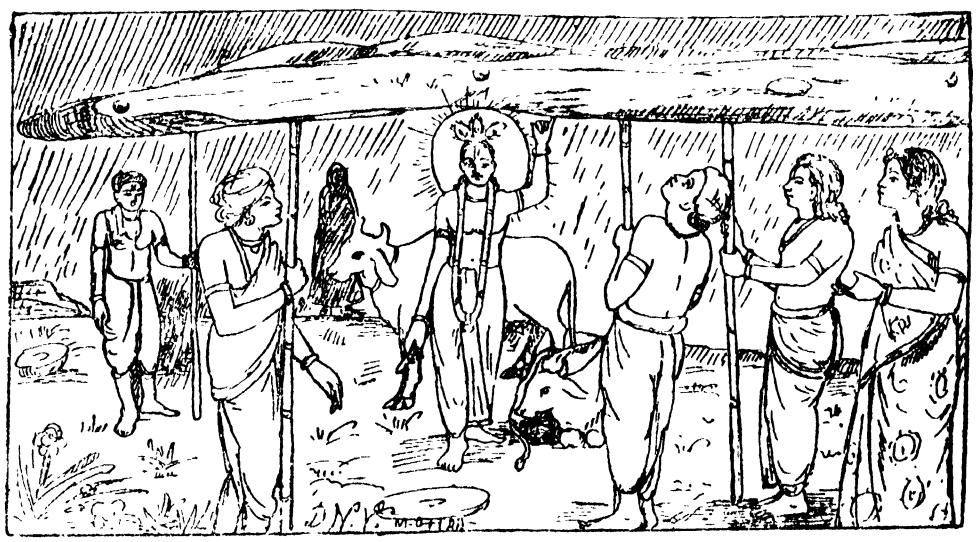

इन्द्र का व्रज पर कोप करके अति वृष्टि करना उसी समय श्रीकृष्ण का छिगुनीं अंगुली पर गोवर्धन धारण करना और इन्द्र का मान मर्दन करना

दोहा—सुरपति की पूजा तजी करि पर्वत की सेव। तबहि इन्द्र मन कोप के सबै बुलाये देव ॥

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेव मुनि बोले हे महाराज!जब सारे देवता इन्द्र के पास गये तब उनसे पूछने लगा कि तुम मुझे समझा कर कहो कल ब्रजमें किस की पूजा थी!इस बीच में नारदजी भी आय पहुँचे तो इन्द्र से कहने लगे कि सुनो महाराज ! तुम्हें सब कोई मानते हैं, पर एक ब्रजवासी नहीं मानते क्यों कि नन्द के एक बेटा हुआ है तिसी का कहा सब करते हैं उन्होंने तुम्हारी पूजा मेट कर

सबसे पर्वत पुजवाया इतनी बात के सुनते ही इन्द्रक्रोध कर बोला कि ब्रजवासियों के धन बढ़ा है इसी से उन्हें गर्व हुआ है।

चौपाई-कर तप यज्ञ तज्यो वृत मेरौ। काल दरिद्र बुलायौ नेरो ॥
इष्ट कृष्ण देव करि माने। ताकी बातें साँची जाने ॥
यह बालक मूरख अज्ञानी। बहुवादी राखे अभिमानी ॥
उनका अबहिं गर्व परि हरौ। पशू खोइ लक्ष्मी बिन करौ ॥

ऐसे बक झक खिजलाय कर सुरपति ने मेघपति को बुलाय भेजा वह स्वयं ही डरता काँपता आ हाथ जोड़ खड़ा हुआ तिसे देखते ही स्नेह कर बोला कि तुम अभी अपना दल साथ ले जाओ और गोवर्द्धन पर्वत समेत ब्रजमंडल को बरस कर ऐसा बहाओ कि कहीं गिरि का चिन्ह और ब्रजवासियों का नाम न रहे यह आज्ञा पाय मेघपति दण्डवत् कर राजा इन्द्र से बिदा हुआ और उसने अपने स्थान पर आय बड़े बड़े मेघों को बुलाय के कहा कि सुनों महाराज की आज्ञा है कि तुम अभी जाय ब्रज मण्डल को बरसा से बहा दो यह बचन सुन सब मेघ अपने दल बादल से मेघपति के साथ हो लिए उसने आते ही ब्रज मण्डल को घेर लिया और गर्ज २ बड़ी२बूँदों से लगा मूसलाधार बरसावने और अँगुली से गिरि को बतावने इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी ने राजा परीक्षित से कहा कि महाराज ! जब ऐसे चहुँओरसे घनघोर घटा घिर आई और अखंड जल बहने लगा नन्द यशोदा समेत सब गोपी ग्वालबाल भय खाय भीगते थर थर काँपते श्रीकृष्ण के पास जाय पुकारे कि हे कृष्ण ! इस महा प्रलय के जल से कैसे बचेंगे तब तो तुमने इन्द्र की पूजा मेट पर्वत पुजवाया अब उनको बेगि बुलाइये जो आय रक्षा करें नहीं तो क्षण भर में नगर समेत सब डूबे मरते हैं। इतनी बात सुन और सब को भयातुर देख श्रीकृष्णचन्द्र बोले कि तुम अपने मन में किसी बात की चिन्ता मत करो। गिरिराज अभी आ तुम्हारी रक्षा करते हैं। यों कह गोवर्द्धन को तेज से तपाय अग्नि सम कर बाये हाथ की उँगली पर उठा लिया। तिस काल सब ब्रजवासी डेरों समेत आ उसके नीचे खड़े हुए और श्रीकृष्णचन्द्र को देख देख अचरज कर आपस में कहने लगे कि--

चौपाई—हैकोऊ आदि पुरुष औतारी। दीखत है कोई देव मुरारी ॥

मोहन मानुष कैसा भाई । अँगुरी पर क्यों गिरि ठहराई ॥

इतनी कथा कह श्रीशुकदेव मुनि राजा परीक्षित से कहने लगे कि उधर तो मेघपति अपना दल लिये क्रोध कर मूसलाधार जल बरसाता था, इधर पर्वत पै गिरते ही छनाका दे तवे की सी बूँद हो जाती थी यह समाचार सुन इन्द्र भी कोप कर आप चढ़ आया और लगातार इस भाँति सात दिन बरसा की बृज में हरि प्रताप से बूँद भी न पड़ी, जब सब जल निबटा तब मेघों ने हाथ जोड़ कहा हे नाथ ! जितना महाप्रलय का जल था सब का सब समाप्त हो चुका,अब क्या करें । यह सुन इन्द्र ने अपने ज्ञान ध्यान से विचारा कि, आदि पुरुष ने अवतार लिया है नहीं तो किस में इतनी सामर्थ्य थी जो गिरि धारण कर ब्रज की रक्षा करता ऐसे सोच सोच अछता पछता मेघों समेत इन्द्र अपने स्थान को गया, और बादल उघड़े प्रकाश हुआ,तब सब ब्रजवासियों ने प्रसन्न हो श्रीकृष्ण से कहा महाराज ! अब गिरि उतार धरिये मेघ जाते रहे, यह बचन सुनते ही श्रीकृष्ण ने पर्वत जहाँ का तहाँ रख दिया ।

इति श्री लल्लूलाल कृते प्रेमसागरे ब्रजरक्षण नाम षडविंशो अध्यायः ॥ २६ ॥

अध्याय-२७

श्री शुकदेव मुनि बोले कि जब हरि ने गिरि कर से उतार धरा तिस समय

गोवर्द्धन धारण करने पर श्रीकृष्ण का मर्यादा पुरुषोत्तम होने का ज्ञान होना

सब बड़े गोप तो अद्भुतचरित को देख यही कह रहे थे कि जिसकी शक्ति ने महा प्रलय से आज ब्रजमंडल को बचाया तिसे हम सुत कैसे कहेंगे। हाँ किसी समय नन्द यशोदा ने महा तप किया था इसी से भगवान ने आ इनके घर जन्म लिया है और ग्वालबाल आय २ श्री कृष्ण के गले मिल पूछने लगे कि भैया! तूने इस कमल से कोमल हाथ पर कैसे ऐसे भारी पर्वत का बोझ सँभाला, और नन्द यशोदा ने करुणा कर पुत्र को हृदय से लगाय, हाथ दबाय अँगुली चटका चटका कहने लगे कि सात दिन गिरि को कर पर रक्खा हाथ दुखता होयगा, और गोपियाँ यशोदा के पास आय पिछली सब कृष्ण की लीला गाय कहने लगीं।

चौपाई—यह जो है बल पूत तिहारो। चिरजीवौ ब्रज को रखवारो॥
दानव दैत्य असुर संहारे। कहाँ कहाँ ब्रज जनन उबारे॥
वैसा कही गर्ग ऋषि आई। सोई सोई बात होत है भाई॥

इति श्री लल्लूलाल कृते प्रेमसागरे श्रीकृष्ण लीला नाम सप्तविंशोऽध्यायः॥ २७॥

अध्याय—२८

इन्द्र का जब गर्व नष्ट हुआ तब कृष्ण और बलराम के पास आकर उनकी स्तुति करना

श्रीशुकदेव मुनि बोले कि महाराज! भोर होते ही सब गायें और ग्वालवालों को सङ्ग लेकर अपनी २ छाक ले कृष्ण और बलराम बेणु बजाते और मधुर मधुर स्वर से गाते जो धेनु चरावन बन को चले तो राजा इन्द्र समस्त देवताओं को साथ लिये कामधेनु को आगे किये ऐरावति हाथी पर चढ़ सुरलोक से चला २ बृन्दावन में आया वन की बाट रोक खड़ा हुआ, जब श्री कृष्णचन्द्र उसे दूर से दिखाई दिये तब गज से उतर नंगे पाँवां गले में कपड़ा डाले थर २ काँपता दौड़कर श्रीकृष्ण के चरणों पर गिर पड़ा और पछताय २ रो रो कहने लगा कि हे ब्रजराज मुझ पर दया करो।

चौ०—मैं अभिमान गर्व अति किया। राजस तामस में मन दिया॥
धन बढ़कर सम्पति सुख माना। भेद न कछू तुम्हारो जाना॥
तुम परमेश्वर सब के ईश। और दूसरा को जगदीश॥
ब्रह्मा रुद्र आदि बलदाई। तुम्हारी दई सम्पदा हाई॥
जगत पिता तुम निगम निवासी। सेवत नित कमला भई दासी॥
जग के हेत लेत अवतारा। तब तब हरत भूमि को भारा॥

दूर करो सब चूक हमारी। अभिमानी मूरख हम भारी॥

जब ऐसे दीन हो इन्द्र ने स्तुति करी तब श्रीकृष्ण दयालु हो बोले कि अब जो तू कामधेनु के साथ आया इससे तेरा अपराध क्षमा किया, पर गर्व मत कीजो क्योंकि गर्व से ज्ञान जाता है और कुमति बढ़ती है इससे अपमान होता है इतनी बात श्री कृष्ण के मुख से सुनते ही इन्द्र ने उठकर वेद की विधि से पूजा की गोविन्द नाम धरि चरणामृत ले परिक्रमा करी तिस समय पर गन्धर्व भांति २ के बाजे बजाय २ श्री कृष्ण का यश गाने लगे, और देवता अपने २ विमानों में बैठ आकाश से फूल बरसाने लगे, उस काल ऐसी शोभा हुई कि मानों फेर श्री कृष्ण ने जन्म लिया हो जब निश्चिन्त हो इन्द्र हाथ जोड़ सन्मुख खड़ा हुआ तब श्रीकृष्ण ने आज्ञा दी कि अब तुम कामधेनु समेत अपने पुर को जावो, आज्ञा पाते ही कामधेनु और इन्द्र विदा हो दंडवत कर इन्द्रलोक को गये और श्रीकृष्ण गौ चराय साँझ हुए ग्वाल बालों सहित घर आये वहाँ ग्वाल बालों ने इन्द्र की बात अपने अपने घर कहीं।

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी बोले यह जो श्रीगोविन्दकी कथा मैंने कही है इसके सुनने और सुनाने से संसारमें धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष चारों पदार्थ मिलते हैं॥

इति श्रीलल्लूलाल कृते प्रेमसागरे इन्द्रस्तुति वरणो नाम अष्टाविंशतमऽध्यायः॥२८॥

अध्याय—२९

श्रीशुकदेवजी बोले महाराज! एक दिन नंदजी ने संयम कर एकादशी व्रत किया, दिन तो स्नान ध्यान भजन जप, पूजा में कटा और रात्रि जागरण में बिताई, जब छः घड़ी रैन रही और द्वादशी भई तब उठ के देह शुद्ध कर भोर हुआ जान धोती अँगोछा झारी ले यमुना नहाने चले तिनके पीछे कई ग्वाल भी हो लिये तब तीर पर जाय प्रणाम कर कपड़े उतार नन्दजी ज्यों ही नीर में बैठे त्यों वरुण के सेवक, जो जल की चौकी देते थे कि कोई रातको नहाने न पावे उन्होंने जा वरुण से कहा कि महाराज! कोई इस समय यमुना में नहाय रहा है सो हमें क्या आज्ञा होती है। वरुण बोले उसे अभी पकड़ लावो, आज्ञा पाते ही सेवक फिर वहाँ आये जहाँ नन्द जी नहा कर जल में खड़े जप करते थे आते ही अचानक नाग पाश

डाल नन्द जी को वरुण के धाम ले गये तब नन्द जी के साथ जो ग्वालबाल गये थे उन्होंने आय श्री कृष्ण से कहा कि महाराज ! नन्दराय जी को वरुण के गण यमुना तीर से पकड़ वरुण लोक को ले गये इतनी बात के सुनते ही गोविन्द

रात्रि में यमुना स्नान करत समय नन्द को वरुण के दूतो द्वारा पकड़ ले जाना ।

क्रोध कर उठ धाये और पल भर में बरुण के पास जा पहुँचे इन्हें देखते ही वरुण उठ खड़ा हुआ और हाथ जाड़ विनती कर बोला—

चौ०—सफल जन्म है आज हमारौ । पावौ यदुपति दरश तुम्हारौ ॥
कीजै दोष दूर सब मेरे । नन्द पिता बस कारण घेरे ॥
तुमको सबके पिता बखाने । तुम्हरे पिता नहीं हम जाने ॥

ऐसे आके बिनती कर बहुत सी भेंट लाय श्री कृष्ण के आगे धर जब वरुण हाथ जार शिर नवाय सम्मुख खड़ा हुआ तब श्री कृष्ण भेंट ले पिता को साथ लेकर यहाँ से चल बृन्दावन आये, इनको देखते ही सब ब्रजवासी आय मिले जिस समय बड़े २ गोपों ने नन्दराय से पूछा कि तुम्हें वरुण के सेवक कहाँ ले गये थे नन्द बोले सुनो वे पकड़ मुझे वरुण के पास ले गये त्यों ही पीछे से कृष्ण पहुँचे इन्हें देखते ही वह सिंहासन से उतर पावां पर गिर अति विनती कर कहने लगा नाथ ! मेरा अपराध क्षमा कीजै मुझ से अनजाने यह दोष हुआ सो चित्त में न लीजे, इतनी बात नन्द जा के मुख से सुनते ही गोप आपस में कहने लगे कि भाई ! हमने तो यह तभी जाना था जब श्रीकृष्णचन्द्र ने गोवरधन धारण कर बृज

की रक्षा की, कि नन्द महर के घर में आदि पुरुष ने आय अवतार लिया है ऐसे आपसमें बतराय फिर सब गोपोंने हाथ जोड़ श्रीकृष्णजी से कहा महाराज! आपने हमें बहुत दिन भरमाया, पर अब सब भेद तुम्हारा पाया तुम्हीं जगत के कर्ता दुक्ख हर्ता हो दया कर हमें बैकुण्ठ दिखाइये इतने बचन सुन श्रीकृष्ण ने क्षण भर में बैकुण्ठ रच उन्हें ब्रज ही में दिखाया, देखते ही ब्रजवासियों को ज्ञान हुआ तो कर जोर शिर झुकाय बोले, हे नाथ! तुम्हारी महिमा अपरम्पार है हम कुछ नहीं कह सकते पर आपकी कृपा से हमने यह जाना कि तुम नारायण हो भूमि का भार उतारने संसार में जन्मे हो।

श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! जब ब्रजवासियों ने इतनी बात कही तब श्रीकृष्णचन्द्रजी ने सब को मोहित कर जो बैकुण्ठ की रचना रची थी सो उठायलो और अपनी माया फैलादी तब तो सब गोपियों ने स्वप्न सा जाना और नन्दजी ने माया के वश हो श्रीकृष्ण को अपना पुत्र कर माना।

दूसरे दिन बन में जाय श्रीकृष्णचन्द्रजी ने गोपियों को घेर कर कहा कि तुम नित्य मथुरा में गोरस माखन इत्यादि बेचने को जाती हो इस लिये हम को गोरस का दान दो, श्रीराधाजी ने कहा कि मैं यहाँ की रानी हूँ तुम दान नहीं ले सकते, दोनों पक्षों में झगड़ा हुआ। तो मोहन ने सब ग्वालिनों की मटकियाँ फोड़ दीं, दही मही बहा दिया तो उन्होंने नन्दरानी से आ कहा कि पहले चोरी की और अब वर जोरी हुवा। तो मोहन ने सब ग्वालिनों को कहला भेजा फिर ऐसा ही होगा दूसरे दिन उन की मटुकियाँ फोड़ दीं दही मही बहा दिया गोपियों ने आय नन्दरानी को कहा।

इति श्री लल्लूलाल कृते प्रेमसागरे बैकुण्ठ चरित्र नाम नवविंशोऽध्यायः ॥ २९ ॥

अध्याय- ३०

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी महाराज बोले कि महाराज!

दो०—जैसे हरि गोपिन सहित, कीन्ही रास विलास। सो साँचो ध्यायो कहीं, जैसी बुद्धि प्रकाश॥

जब श्रीकृष्णने चीर हरे थे सब गोपियोंको बचन दिया था कि हम कार्तिकके महीनेमें तुम्हारे साथ रास करेंगे। तभीसे गोपियाँ रासकी आस किये मनमेंउदासहो नित उठकार्तिक मासहीको मनाया करें उनके मनाते मनातेसुखदाईशरदऋतुआई।

श्रीकृष्ण द्वारा भक्त गोपी को मुक्ति की प्राप्त होना

चौपाई—लाग्यौ जब से कातिक मास, घाम शीत वर्षा को नाश ॥
निर्मल जल सरवर भर रहे, फूले कमल होय डह डहे ॥
कुसुम चकोर कन्त कामिनी, फूलहिं देख चन्द मुस्कानी ॥

ऐसे कह फिर शुकदेव मुनि बोले कि पृथ्वीनाथ ! एक दिन श्रीकृष्णचन्द्र कार्तिक पूनों की रात्रि को घर से निकल बाहर आय देखें तो निर्मल आकाश में तारे छिटक रहे हैं चाँदनी दशों दिशान में फैल रही है शीतल सुगंधि सहित मंदगति से पवन बह रही है, और एक ओर सघन वन की छवि अधिक ही शोभा दे रही है। उनके मन में आया कि हमने गोपियों को यह बचन दिया था कि शरदऋतु में तुम्हारे साथ रास करेंगे सो पूरा किया चाहिये, यह बिचार कर बन में आय श्रीकृष्ण ने बाँसुरी बजाई बंशी की ध्वनि सुन सब ब्रजयुवती कुल काम पटक गृह काज तज उलटा पुलटा श्रृङ्गार कर उठ धाई एक गोपी जो अपने पति के पास से उठ चलीं तो उसके पति ने बाट में जा रोका और जाने न दिया, तब तो वह हरि का ध्यान कर देह छोड़ सब से आगे जा मिली उसके चित्त की प्रीति देख श्री कृष्णचन्द्र ने तुरत ही उसे मुक्ती दी।

जा पीछे परीक्षित ने श्रीशुकदेवजी से पूछा कि कृपानाथ ! गोपी ने श्रीकृष्ण जी को ईश्वर जान के तो नहीं माना केवल प्रेमकी वासना से भजा वह मुक्त कैसे हुई। सो समझाय के कहो श्रीशुकदेव मुनि बोले धर्मावतार। जो जन श्री कृष्ण-

चन्द्रकी महिमा को अनजाने भी गुण गातेहैं सो भी निःसन्देह मुक्ति पातेहैं,जैसे कोई बिना जाने यह सब जानतेहैं कि, पदार्थ का गुण और फल बिना हुए रहता नहीं ऐसे ही हरभजन का प्रतापहै कोई किसी भावसे भजे मुक्ति होयगी अवश्य-

दो०—जप माला छापा तिलक, सरै न एकौ काम ।
मनकाचें नाँचे वृथ, साँचे राचे राम ॥

और सुनो जिन२ ने जिस भाव से श्रीकृष्ण को मान के मुक्ति पाई सो कहता हूँ कि नन्द यशोदा ने इनको तो पुत्र कर बूझा, गोपियां ने प्रीतम कर समझा कंस ने भय कर भजा ग्वालबालों ने सखा कर जपा, पाण्डवों ने परम मित्र कर जाना, शिशुपाल ने शत्रु कर माना, पर अन्त में मुक्ति पदार्थ सब हीं ने पाया जो एक गोपी प्रभु का ध्यान कर तरी तो क्या अचरज हुआ ।

यह सुन राजा परीक्षित ने शुकदेव मुनि से कहा कि हे कृपा नाथ मेरे महाराज तिसकाल सब गोपियाँ अपने२झुण्ड लिये श्रीकृष्णचन्द्र के रूप सागर में धाय कर यों जाय मिलीं जैसे पानी में पानी जाय मिले उस समय के बनाव की शोभा कुछ बर्णी नहीं जाती कि सब श्रृङ्गार कर नटवर वेष धरे, सुन्दर लगते थे कि ब्रजयुवतियाँ हरि छबि देखते ही छकि रहीं,तब मोहन उनकी क्षेम कुशलता पूछ रूखे हो बोले कहो रात समय बाल काढ़ उलटे पलटे वस्त्र आभूषण पहने अति घबराई कुटुम्ब की माया तज इस महावन में कैसे आई ऐसा साहस करना नारियों को उचित नहीं,स्त्री को कहा हैकि कायर कुमति कपटी कोढ़ी,काना अन्धा लूला लँगड़ा दरिद्री कैसा भी पति हो पर उसकी सेवा करना योग्यहै इसी में उनका कल्याण है कुलवंती पतिव्रता का धर्महै कि पति को क्षण भर न छोड़े और जो स्त्री अपने पुरुषको छोड़ पर पुरुष के पास जातीहै सो जन्म जन्म नरक बास पाती है ऐसे कह फिर बोले कि—सुनो तुमने आय सघन बन निर्मल चाँदनी और तीर की शोभा देखी अब घर जा मन लगाय कन्त की सेवा करो इसमें तुम्हारा सब का भला है इतना बचन श्रीकृष्णके मुखसे सुनते ही सब,गोपियाँ एकबार तो अचेतहो अपार सोचमें पड़ीं पीछे-

चौ०—नीचे चित्त उसासें लाईं । पद नख ते भू खोदत भाईं ॥
यों दृग से छूटी जल धारा । मानो टूटे मोती हारा ॥

निदान दुःख से अति घबराय रोरो कहने लगीं कि-अहो कृष्ण तुम बड़े ठग

हो पहले तो बंशी बजाय हमारा ज्ञान ध्यान तन मन हर लिया अब निर्दयी हो कपट बचन कह प्राण लिया चाहते हो। यों कह पुनि बोली।

दो०—लोग कुटुम्ब घर पति तजे, तजी लोक की लाज।
है अनाथ कोऊ नहीं, राखि शरण ब्रजराज॥

और जो जन तुम्हारे चरणों में रहते हैं सो धन लाज बड़ाई नहीं चाहते उनके तो तुम्हीं जन्म जन्म के कन्त हो।

चौपाई—करिहैं कहा जाय हम गेह। उरझीं प्रीति तुम्हारे नेह॥

इतनी बात के सुनते ही श्रीकृष्णचन्द्रने मुसकराय सब गोपियों को निकट बुलाय के कहा, जो तुम राजी होता खेलो रास हमारे सङ्ग यह बचन सुनदुख तज गोपियाँ प्रसन्नता से चारों ओर घिर आईं और हरि मुख निरखि लोचन सफलकरनेलगीं—

दोहा-ठाढ़े बीचजु श्याम घन, इहि छवि कामिन केलि। मनहु नील गिरिके तरे, उलटी कंचन बेलि।

आगे श्रीकृष्ण ने अपनी माया को आज्ञा दी कि हम रास करेंगे उसके लिये तू एक अच्छा स्थान रच और वहीं रह जो जो जिस वस्तु की इच्छा करे सो सो ला दीजो उसने सुनते ही यमुना के तीर जाय एक कंचनका मण्डलाकार चबूतरा बनाय मोती हीरे जड़ उसके चारों ओर सपल्लव केले के खम्भ लगाये तिनमें बन्दन बार और भाँति भाँति के फूलों की माला बाँध आय श्रीकृष्णचन्द्र से कहा ये सुनते ही प्रसन्न हो सब ब्रजबासियों को साथ ले जमुना तीर को चले वहाँ जाय देखें तो चन्द्रमण्डल मे रासमण्डली की चौगुनी शोभा हो रही है उसके चारों ओर चाँदनी सी खिल रही है सुगन्धित शीतल मीठी मीठी पवन चल रही है एक ओर सघन बन की हरियाली उजाली रात में अधिक ही छबि दे रही है। मानसरोवर नाम एक सरोवरथा तिसके तीरजाय मन मानते सुथरे वस्त्र आभूषण पहर नखसिखसे श्रृङ्गार कर अच्छे बाजे बीण पखावज आदि सुर बाँध बाँध ले आईं और लगीं प्रेम मद माती हो सोच संकोच तज श्रीकृष्ण के साथ मिल बजानै गाने नाचनै उस समय श्री गोविंद गोपियों की मण्डलीके मध्य ऐसे सुहावने लगते थे जैसे तारों के मंडल में चन्द्रमा शोभा देता है इतनी कथा कह श्रीशुकदेव जी बोले सुनों महाराज! जब गोपियों नै ज्ञान बिवेक छोड़ रास में हरि को विषयी पति कर माना और अपने आधीन जाना, तब श्रीकृष्णचन्द्रजी ने मन में ऐसे बिचारा कि—

चौपाई–अब मोहि इन अपने वश मान्यो, पति विषयों सम मन आन्यो।
भई अज्ञान लाज तजि देह, कुलहिं पकरहिं कन्त सनेह॥
ज्ञान ध्यान मिलके बिसरायो, छोड़ लाज इन गर्व बढ़ायो॥

देखूँ मुझ बिन पीछे ये क्या करती हैं और कैसे रहती हैं ऐसे बिचार श्री राधिका जी को साथ ले श्रीकृष्णचन्द्र अन्तरध्यान हुये॥

इति श्री लल्लूलाल कृत प्रेमसागरे रास क्रीड़ा रम्भोत्रिंशतितमोऽध्यायः॥३०॥

अध्याय–३१

❀ अथ रास मण्डल लीला प्रारम्भः ❀

श्रीशुकदेव मुनि बोले कि महाराज। एकाएकी श्रीकृष्णको न देखते ही गोपियां की आँखों के आगे अँधेरा हो गया, वे ऐसे घबराई जैसे मणि खोय सर्प घबराता है। इतने में एक गोपी कहने लगी–

दोहा—कहो सखी मोहन कहाँ, गये हमें छिटकाय। मेरे धोरे, भुजा धरे, रहे हुए उर लाय॥

रास मण्डल से कृष्ण के अन्तर्ध्यान हो जाने पर गोपियों की विरह दशा।

अभी तो हमारे सङ्ग हिल मिल रास बिलास कर रहे थे इतने ही में कहाँ गये? तुम में से किसी ने भी जाते न देखा। यह बचन सुन गोपियाँ बिरह की मारी निपट उदास हो हाथ मार बोलीं–

दोहा–कहाँ जाँय कैसी करें, कासों कहैं पुकारि। मैं कित कहूं न जानिये, क्यों कर मिले मुरारि॥

ऐसे कह हरि मदमाती हो सब गोपी लगीं चारों ओर ढूँढ़ २ गुण गाय गाय रो २ यों पुकारने–

हम को क्यों छोड़ी ब्रजनाथ । सर्वस दिया तुम्हारे हाथ ॥

जब वहाँ न पाया तब आगे जाय आपसमें बोलीं सखी ! यहाँ तो हम किसी का नहीं देखनीं, किसी से पूछें कि हरि किधर गए । यों सुन एक गोपी ने कहा सुनो आली । एक बात मेरे जी में आई है कि यह जितने इस बन में पशू पक्षी और वृक्ष हैं सब ऋषि मुनि हैं, ये कृष्ण लीला देखने को अवतार ले यहाँ आये हैं, इन्हींसे पूछें ये यहाँ खड़े देखतेहैं जिधर गये होंगे उधर बता दें गे इतना बचन सुनते ही सब गोपियाँ बिरहसे व्याकुल होक्या जड़ क्या चेतनलगीं एक२सेपूछने–

हे बड़ पीपल पाकर बीर । लह्यौ पुन्य कर उच्च शरीर ॥
बकला फूल फूल फल डार । हिन सी करत पराई सार ॥
सबका मन धन हर नन्दलाल । गये किधर को कहो दयाल ॥
अहो कदम्ब अम्ब कचनारी । तुम कहुँ देखे जात मुरारी ॥
हे अशोक चम्पा कर चीर । जात लखे तुमने बलबीर ॥
हे तुलसी अति हरिकी प्यारी । तुझको कबहू न राखत न्यारी ॥
फूली आज मिले हरि आय । हमहूँ सो किन देति बताय ॥
जुही जुही मालती भाई । इत से निकसे कुँवर कन्हाई ॥
मगहि पुकारि कहै ब्रज नारी । इत उत जात लखे बनवारी ॥

फिर शुकदेवजी बोले कि महाराज!सब गोपी पशु,पक्षी द्रुम, बेल से पूछती श्रीकृष्ण प्रेममें होलगीं पूतना, दावा आदि सब श्रीकृष्ण की की हुई बाललीला करने और ढूँढने, निदान ढूँढ़ते२ कितनी एक दूर जाय,देखेंतो श्रीकृष्ण के चिन्ह कमल यव ध्वजा अंकुश समेत रेत पर जगमगा रहे हैं, देखते ही ब्रज युवतियाँ जिस रज को सुर नर मुनि खोजते हैं तिस रजको दण्डवत कर शिर चढ़ाय हरि के मिलनकी आशा कर वहाँसे बढ़ीं तो देखाकि उन चरण चिन्हों के आस पास एक नारी के भी पाँव उपड़े हुए देख अचरज कर आगे जाय देखें तो एक ठौर कमल पत्ता के बिछौना पर सुन्दर जड़ाऊ दर्पण पड़ा उससे लगीं पूछने जब बिरह भरा वह भी न बोला तब उन्हों ने आपस में पूछा कहो आली यह क्यों कर लिया उसी समय जो पिया प्यारे के मन की जानती थीं, उसने उत्तर दिया कि सखी ! जब प्रीतम प्यारी की चोटी गुथन बैठे और सुन्दर बदन बिलोकने में अन्तर हुआ तिस बिरियाँ प्यारी ने दर्पण पिया का दिखाया तब श्री मुखका प्रतिबिंब सन्मुख

आया यह बात सुन गोपियाँ कुब्जन बोलीं बरन कहने लगीं कि उसने शिव पार्वती को अच्छी रीति से पूजा है और बड़ा तप किया है, प्राणपति के साथ एकान्त में निधरक बिहार करती है महाराज ! सब गोपियाँ तो इधर बिरह मदमाती बक २ झक२ढूँढ़ती थों कि उधर श्रीराधिकाजी हरि के साथ अधिक सुख मान प्रीतम को अपने वशजान अपनेको सबसे बड़ा जी में ठान अभिमान में आन बोलीं प्यारे ! अब मुझसे चला नहीं जाता काँधे चढ़ाय ले चलिये इतनी बात के सुनते ही गर्व प्रहरी अन्तर्यामी श्रीकृष्णचन्द्रजी नै मुसकराय बैठकर कहा कि आइये हमारे काँधे पर चढ़ लीजिये जब वह हाथ बढ़ाय चढ़ने को तैयार हुई तब श्रीकृष्ण अन्तर्ध्यान हुए जो हाथ बढ़ाये सो हाथ पसारे खड़ी रह गई गोरे तन की ज्योति छूटि छति छाय यों छवि देरही थी मानों सुन्दर कंचन की मूर्ति भूमिपै खड़ी है नयनों में जल की धार बह रही थी और जो सुवास के वश मुख पास भँवर आय२ बैठतेथे तिन्हें भी उड़ाय न सकती थी और हाय२कर बनके बिरह को मारी इस भाँति रो रहीथी अकेली कि जिसके रोने की धुनि सुनि सब रोते थे पशु पक्षी और द्रुम बेली सब से यों कह रही थीं—

चौपाई–हा हा नाथ परम हितकारी, कहाँ गये स्वच्छन्द बिहारी ।
चरण शरण दासी मैं तेरी, कृपा सिन्धु लीजै सुधि मेरी॥

इतने में सब गोपियाँ भी ढूँढ़ती २ उसके पास जा पहुँची और उसके गले लग सबों ने मिल२ ऐसा सुख माना कि जैसे कोई महा धन खोय आध धन पाय सुख माने निदान सब गोपियाँ भी उसे दुखित जान साथ२ले महाबन में पैठीं जब सघन बन के अँधेरे में बाट न पाई तब वे सब वहाँ से धीरजधर मिलनेकी आशा कर यमुनाके उसी तीरपर आय बैठीं जहाँ श्रीकृष्णचंद्रजीने अधिक सुखदियाथा।

इति श्री लल्लूलाल कृते प्रेमसागरे गोपी विरह नाम एकत्रिंशोऽध्यायः ॥३१॥

अध्याय–३२

श्रीशुकदेवजी बोलेकि महाराज!सब गोपियाँ यमुना तीर बैठ प्रेम मदमाती हरि के चरित्र और गुण गाने लगीं कि प्रीतम जब से तुम ब्रजमें आये, तब से नये २ सुख आकर छाय,लक्ष्मीने करी तुम्हारे चरण की आशा, अचल आय के किया है बासा गोपी हैं दासी तुम्हारी,सुध लीजिये दया कर हमारी, जब से सुन्दर साँवली

सलौनी मूर्ति देखी है तेरी तबसे हुई हैं बिन मोलकी चेरी, अब करुणा कीजै बेग दर्शन दीजै जो तुम्हें मारना ही था तो हमको विषधर आग और जल से किस लिए बचाया ! तभी मरने क्यों न दिया । तुम केवल यशोदा सुत नहीं हो तुम्हें तो ब्रह्मा, रुद्र, इन्द्रादि, सब देवता विनती कर लाये हैं संसार की रक्षा के लिए, हे प्राण नाथ ! हमें एक अचरज बड़ा है कि जो अपने ही को मारोगे तो करोगे

श्रीकृष्ण के अन्तर ध्यान हो जाने पर गोपियों का कृष्ण गुन गाना

किसकी रखवाली प्रीतम तुम अन्तर्यामी हो हमारे दुःखहर मनकी आशा पूरी क्यों नहीं करते।हम दुख पाती हैं, और जिस समय तुम बन गौ चरावन जाते थे बन में हमें चार प्रहर चार युग से जाते थे जब सम्मुख बैठ सुन्दर बदन निहारती थीं तब अपने जीमें बिचारती थीं कि ब्रह्मा बड़ा मूर्ख है जो पलकें हैं हमारे इकटक देखने में बाधा डालने को बनादी इतनी कथा कह श्रीशुकदेव जी बोले कि महाराज इसी रीति से सब गोपी बिरह की मारी श्रीकृष्णचन्द्र के गुण और चरित्र गाय २ हारी तिस परभी न आये बन बिहारी तब ता निपट निराश हो अति आधी रात में अचेतहो गिर गिर ऐसे रोय पुकारीं कि सुनकर चर अचर भी दुखित भये भारी।

इति श्री लल्लूलाल कृते प्रेमसागरे गोपी बिरह नाम कथन द्वित्रिंशोऽध्यायः ॥३२॥

अध्याय ३३

श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज ! श्रीकृष्णचन्द्र अन्तर्यामी ने जाना कि अब ये गोपियाँ हम बिना जीती न बचेंगी।

श्रीकृष्ण का गोपियों को दर्शन देना और उनका दुख हरण ॥

छं०—तब तिनही में प्रगट भये नन्द नन्दन यों। दृष्टि बन्द कर छिपे, फेर प्रगटे नटवर ज्यों ॥
आये हरि देखे जबै, हठो सबै यों चेत। प्राण परे त्यों मृतक के, इंद्री जगे अचेत ॥
बिन देखे सबको मन व्याकुल होत भयौ। मानों मनभव भुजङ्ग, स्वामिन डसके गयौ ॥
पीर खरीपिय जान, पहुँचे हैं फिर। अमृत बेलिन सींच, लई पुनि जियाइ के ॥

दोहा—मनहुँ कमल निशि, कमल ऐसे हो बृजबाल। कुण्डल रबि देखिके, फूले नयन विशाल ॥

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजो बोलेकि महाराज! श्रीकृष्णचन्द्र आनन्दकंदको देखते ही सब गोपियाँ एकाएको बिरह सागर से निकल उनके पास जाय बड़ी प्रसन्न हुईं घेरकर खड़ी भईं। तब श्रीकृष्ण उन्हें साथ लिये वहाँ आये जहाँ पहले रास बिलास किया था जाते ही एक एक गोपी ने अपनी ओढ़नी उतारके श्रीकृष्ण के बैठने को बिछादी जब इस पर बैठे तो कई एक गोपी क्रोधकर बोलीं कि महाराज! तुम बड़ेकपटीहो बिराना तन, धन लेनाजानते होपरकिसोकागुण नहीं मानते!

दो०—गुण छाँड़ि अवगुण गहे, कपट ही मन भाया। देखौ सखी विचार के, तासों कहा बसाय ॥

वह बोली कि सखी! तुम अलग ही रहो मैं कृष्ण ही से कहावती हूँ, तब मुसकराय के श्रीकृष्ण से पूछा कि महाराज एक बिन अवगुण किये गुण मान ले दूसरा किये उसका पलटा दे तीसरा गुणके पलटे अवगुण करे, चौथा किसी के किये गुण को भी मन में न धरे इन चारों में कौन भला है और कौन बुरा यह समझा के कहो श्रीकृष्णचन्द्र बोले कि भला और बुरा मैं बुझा कर कहता हूँ उत्तम तो वह है

जो बिन किये करैं तैसे पिता पुत्र को चाहता है और किये पर करने से कुछ पुण्य नहीं सो ऐसे हैं जैसे बेटा के हेतु गौ दूध देती है गुण को अवगुण मानें तिसे शत्रु जानिये उससे बुरा कृतघ्नी जो कियेको मेटे इतना बचन सुनते ही सब गोपियाँ आपस में एक एक का मुँह देख देख हँसने लगीं तब तो श्रीकृष्णचन्द्र घबरा के बोले कि सुनो मैं इन चारों की गिनती में नहीं जो तुम जान के हँसती हो वरन् मेरी तौ यह रीति है कि जो मुझ से जिस बात की इच्छा रखता है तिसके मन की बाँछा पूरी करता हूँ मैंने तुम्हारी प्रीति परीक्षाके लिये छोड़ी इस बात का बुरा मत मानो सुनो सच्चा ही जानो यों कह कर फिर इस प्रकार से बोले—

चौपाई—अब हम परचौ लियौ तिहारौ। कीन्हों सुमिरण ध्यान हमारौ ॥
मुझको सों तुम ने प्रीति बढ़ाई। निर्धन बनों सम्पदा पाई ॥
ऐसे आई मेरे काज। छाँड़े लोक वेद की लाज।

जो ब्रह्मा के सौ वर्ष जिये तौ भी हम तुम्हारे ऋण से उऋण न होंयगे।

इति श्रीलल्लूलाल कृते प्रेमसागरे गोपी कृष्ण सम्बाद नाम त्रयविंशोऽध्यायः ॥ ३३ ॥

अध्याय-३४

श्रीकृष्ण का अनेक रूप धारण करके गोपियों के साथ रास लीला करना।

श्रीशुकदेव मुनि बोले राजा! जब श्रीकृष्णचन्द्र ने इस ढब से रस के बचन कहे तब तो सब गोपियाँ रिस छोड़ प्रसन्न हो उठ हरिसे मिल भाँति भाँति के सुख मान आनन्द में मग्न हो कौतूहल करने लगीं तिस समय—

दोहा—कृष्ण अंश माया ठई, गये अंश बहु देह। सब को सुख चाहत दियो, लीला परम सनेह ॥

महाराज ! जितनी गोपियाँ थीं तितने ही शरीर श्रीकृष्णचन्द्र ने धर उसी रास मण्डल के चौतरे पर सब को साथ ले रासबिलास को आरम्भ किया।

दुइ २ गोपी जोरें हाथ । तिनके बीच बीच हरि साथ ॥
अपने अपने ढिंग सब जानें । नहीं दूसरे को पहिचानें ॥
अँगुरिन में अँगुरी कर दिये । प्रफुल्लित फिरें सङ्ग हरि लिये ॥
बिच गोरी बिच नन्द किशोर । सघन घटा दामिन चहुँ ओर ॥
श्याम कृष्ण गोरी ब्रजबाला । मानहु कनक नील मणिमाला ॥

महाराज ! उसी रीति से खड़े हो गोपी और कृष्ण लगे अनेक अनेक प्रकार के यन्त्रों के स्वर मिलाय २ कठिन २ राग अलाप२ बजाय गाने और तीखो चोटी ओढ़ी ड्यौढ़ी दुगुन की तानें लेले उपजबाल बजा २ नाचने और आनन्दमें मग्न ऐसे हुये कि उन गोपियों को तन मन की भी सुधि न थी इधर मोतियों के हार टूट२ गिरते उधर बन माल पसीने की बूदें माथों पर मोतियों की लड़सी चमकती थीं और गोपियों के गोरे २ मुखड़ों पर अलकें बिखर रही थीं कभी कोई गोपी आ कृष्ण की मुरलीके साथ मिलकर राग को गाती थी कभी कोई अपनी तान अलग ही ले जाती थी और वंशी को छेक उसकी तान समझ ज्यों की त्यों गले से निकालती थीं, तब हरि ऐसे भूले रहते कि ज्यों बालक दर्पण में अपना प्रतिबिम्ब देख भूल रहे और परस्पर रीझ रीझ हँस २ कंठ लगाय २ वस्त्र आभूषण निछावर कर रहे थे तिसकाल ब्रह्मा रुद्र इन्द्र आदि सब देवता गन्धर्व सहित अपनी २ स्त्रियों समेत विमानों में बैठ रास मण्डली का सुख देख आनन्दसे फूल बरसाने लगे और उनकी स्त्रियाँ वह सुख लख हाँस कर मनमें कहतीं कि जो जन्म ले ब्रजमें जातीं तो हम भी हरिके साथ रास विलास करतीं । वह रात इतनी बड़ी हुई कि छः महीने बीत गये और किसी नै न जाना तभी से उस रैन का नाम ब्रह्म रात्रि हुआ ।

फिर शुकदेवजी बोले पृथ्वीनाथ ! रासलीला करते यों श्रीकृष्णचन्द्र के मन में तरङ्ग आई तो गोपिकाओं को ले यमुना तीर पर जाय नीर में पैठ जल क्रीड़ा कर श्रम मिटाय बाहर आय सब के मनोरथ पूरे कर बोले कि अब चार घड़ी रात बाकी रही है तुम सब अपने २ घर जाओ । इतना बचन सुन उदास हो गोपियों ने कहा नाथ आपके चरण कमल छोड़के घर कैसे जावें तब श्रीकृष्ण बोलेकि सुनो !

जैसे योगीजन मेरा ध्यान धरते हैं तैसे तुम भी ध्यान कीजिया मैं तुम्हारे पास जहाँ रहोगी तहाँ रहूँगा, इतनी बात के सुनते ही सन्तोष कर सब बिदा हो अपने२घर गईं और यह भेद उनके घर वालों में से किसी ने न जाना कि ये यहाँ न थीं।

तब राजा ने मुनि से पूछा कि–दीनदयाल यह तुम मुझे समझा कर कहो कि, श्रीकृष्णचन्द्र तो असुरों को मार पृथ्वी का भार उतारने और साधु सन्तों को सुख दे धर्म का पंथ चलाने के लिये अवतार ले आये थे उन्होंने परा स्त्रियों के साथ रास बिलास क्यों किया यह तो कुछ लंपट का जैसा कर्म है, जो बिरानी नारि से भोग करे, श्रीशुकदेवजी बोले—

चौपाई—सुन राजा यह भेद न जान्यो । मानुषसम परमेश्वर मान्यो ॥
जिनके सुमिरे पातक जात । तेजवन्त पावन सो गात ॥
जैसे अग्नि माँझ कछु परै । सोऊ अग्नि होम के जरै ॥

जैसे शिवजी ने विष पिया और उससे कंठ को भूषण दिया, और काले साँप का किया हार कौन जाने उनका व्यवहार। वे तो अपने लिए कुछ भी नहीं करते जो उनका भजन सुमिरन कर कोई वर माँगता है, तैसा ही तिसको देते हैं उनकी तो यह रीति है कि सबसे मिले दृष्टि आते हैं और ध्यान कर देखिये तो सबसे ऐसे अलग जानते हैं जैसे कमल का पत्ता और गोपियों की उत्पत्ति तो मैं पहले ही सुना चुका हूँ कि वेद और वेद की ऋचायें हरि दरश परश करने को ब्रज में जन्म ले आई हैं और इसी भाँति श्रीराधिका भी ब्रह्मा से वर पाय श्रीकृष्णचन्द्रजोकी सेवा करने को जन्म ले आईं और प्रभु की सेवा में रही हरि का चरित्र मान लीजे,पर उनकी करनी में मन न दीजे, जा कोई गोपीनाथ का यश गाता है तो निश्चय परमपद पाता है, और जैसा फल होता है अरसठ तीर्थ के न्हान में तैसा ही फल मिलता है श्रीकृष्ण यश गान में।

इति श्री लल्लूलाल कृत प्रेमसागरे चौतीसवाँ अध्याय ॥३४॥

अध्याय–३५

श्रीशुकदेव मुनि कहने लगे कि राजा ! जैसे श्रीकृष्णजी ने विद्याधरको तारा, और शंखचूड़ को मारा सो प्रसङ्ग कहता हूँ तुम ध्यान लगाय सुनो एक दिन नंदजो ने सब ग्वालवालों को बुलाय के कहाकि भाइयो ! जब श्रीकृष्ण का जन्म हुआ

था, तब मैंने कुलदेवी अम्बिका की मानता करी थी जिस दिन श्रीकृष्ण बारह वर्ष का होगा तिस दिन नगर समेत बाजे से जाकर पूजा करूँगा सो दिन उनकी कृपा ते आज देखा, अब चलकर पूजा करनी चाहिए इतना बचन सुनते ही सब गोप ग्वाल झटपट अपने २ घरों से पूजा की सामिग्री ले आये तब तो नन्दराय कुटुम्ब समेत उनके साथ हो लिये और चले २ अम्बिका के स्थान पर पहुँचे वहाँ जाय सरस्वती नदी में नहाय नन्दजी ने पुरोहित बुलाय सब को साथ ले देवी के

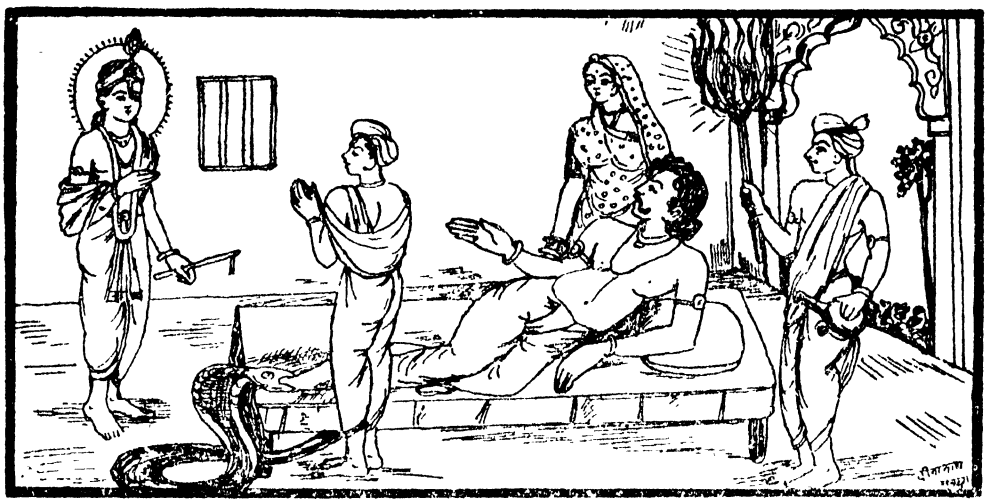

अजगर रूपी विद्याधर की श्रीकृष्ण द्वारा मुक्ति होना

मन्दिर में जाय शास्त्र की रीति से पूजा की परिक्रमा दे हाथ जाड़ विनती कर कहा कि माँ ! आपकी कृपा से कान्हा बारह वर्ष का हुआ ऐसे कह दण्डवत् कर मन्दिर के बाहर आय सहस्रों ब्राह्मण जिमाये इसमें अवेर जो हुई तो सब ब्रज-वासियों समेत नन्दजी तीर्थ व्रत कर वहाँ ही रहे रात को सोते थे कि अक्समात अजगर ने आय नन्दराय का पाँव पकड़ा और लगा निगलने तब तो वे दखते भय खाय घबराय के लगे पुकारने, हे कृष्ण बेग सुधि लो नहीं तो यह मुझे निगले जाता है, उनका शब्द सुनते ही सारे ब्रजबासी स्त्रियाँ पुरुष नींद से चौंक नन्दजी के निकट जाय उजाला कर देखें तो एक अजगर उनका पाँव पकड़े खड़ा है इतने में श्रीकृष्णजी भी पहुँचे सब के देखते ही ज्यों ही उसकी पाठ में चरण लगाया, त्यों ही वह अपनी देह छोड़ सुन्दर पुरुष हो प्रणाम कर सम्मुख हाथ जोड़े खड़ा हुआ तब श्रीकृष्णने उससे पूछा कि तू कौन है और किस पाप से अजगर हुआ था सो

कह। वह बोला अन्तर्यामी! तुम सब जानते हो मेरी उत्पत्ति कि मैं सुदर्शन नाम विद्याधर हूँ, सुरपुर में रहता था और अपने गुण के आगे गर्व से किसी को कुछ न गिनता था एक दिन विमान में बैठ फिरने को निकला तो जहाँ अङ्गिरा ऋषि बैठे तप करते थे तिनके ऊपर ही सौ बेर आया गया,जैसे ही उन्होंने विमानकी परछाही देख ऊपर देखा तो क्रोध कर मुझे शाप दिया कि अभिमानी!तू अजगर हो।इतना बचन उनके मुख से निकला कि मैं अजगर हो नीचे गिरा,तिस समय ऋषि ने कहा कि तेरी मुक्ति श्रीकृष्णचन्द्र के हाथ से होगी, इसलिये मैंने नन्दरायजी के चरण आन पकड़े थे, कि आप आय के मुझे मुक्त करें सो हे कृपानाथ!आपने आय कृपा कर मुक्ति दी! ऐसे कह विद्याधर तो परिक्रमा दे हरि से आज्ञा ले दण्डवत कर विदा हो विमान पर चढ़ सुरलोक को गया और यह चरित्र देखसब ब्रजबासियोंको अचरज हुआ, निदान भोर होते ही देवीके दर्शन कर सबमिल बृन्दावनको आये।

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेव मुनि बोले कि पृथ्वीनाथ! एक दिन हलधर और गोविन्द गोपियों समेत चाँदनी रात में आनन्द से बनमें गाय रहे थे कि इस बीच कुबेर का सेवक शङ्खचूड़ नाम यक्ष जिसके शीश में मणि थी और अति बलवान था,सो आ निकला। देखे तो एक ओर सब गोपी यूथ कुतूहल कर रहा है व एक ओर कृष्ण बलदेव मग्न हो दत्तचित्त गाय रहे हैं। इसके जी में जो कुछ आई तो सब ब्रजयुबतियों को घेर आगे कर ले चला। तिस समय सब गोपियों के मुख से निकलते ही सुनकर दोनों भाई रूख उखाड़ हाथों में ले यों दौड़ेआये कि मानोंसिंह माते गजपर उठ धाये और वहाँ जाय गोपियों से कहाकि तुम किसी भाँति मतडरो हम आन पहुँचे। इनको काल समान देखते ही यक्ष भय मान वा गोपियों को छोड़ अपने प्राण ले भागा। उस काल नन्दलाल ने बलदेवजी को तो गोपियों के पास छोड़ा और आप जाय उसके झोंटे पकड़ पछाड़ा, निदान तिरछा हाथ कर उसका शिर काट मणि ले बलराम जी को दी।

इति श्री लल्लूलाल कृते प्रेमसागरे पैंतीसवाँ अध्याय ॥ ३५ ॥

अध्याय–३६

श्रीशुकदेव मुनि बोले–राजा! जब तक हरि बनमें धेनु चरावें तब तक सब ब्रजयुवतियाँ नन्द जी के पास आय बैठ कर प्रभु का यश गावें। जो लीला श्रीकृष्ण बन में करें सो ही गोपियाँ घर बठीं उच्चारें:—

नन्द रानी के सामने गोपियों द्वारा श्रीकृष्ण का यश गान

चौपाई-सुनो सखी बाजत हैं बैन। पशु पक्षी पावत हैं चैन॥
पति संग देवी गयी विमान। मगन भईहैं धुनि सुन कान॥
प्रिय संग मृगी थकी सुनि बेनु। यमुना फिरी तँ जैसे धेनु॥
मोहे बादर छाँया करै। मानो छत्र कृष्ण पर धरै॥
सब हरि सहित कुञ्ज को धाये। पुनि सब बंशीबटतर आये॥
साँझ भई अब उलटे हरी। राँभति गाय बेणु धुन करी॥

इतनी कथा सुनाय श्री शुकदेवजी मुनि ने राजा परीक्षित से कहा कि महाराज! इसी रीति से नित गोपियाँ दिन भर हरिके गुण गावें और साँझ समय आगेजाय श्रीकृष्ण आनन्द कन्द से मिल सुख मान ले आवें और तिस समय यशोदा रानी भी रजमण्डित पुत्रका मुख प्यार से पोंछ कण्ठ से लगाय सुख मानें!

अध्याय-३७

श्रीशुकदेवजी बोले महाराज! एक दिन श्रीकृष्णचन्द्र बलराम साँझसमयधेनु गायों के साथ बनसेघरको आते थे, उस बीचमें एक दैत्य बलवान आयगायोंमें घुस आया।

तब आकाश लों देही धरी। पीठ कड़ी पाथर सी करी॥
बड़े सींग तीक्ष्ण दोऊ खुरे। रक्त नयन प्रति ही रिस भूरे॥
पूँछ उठाय फुँकारत फिरै। रहि रहि मूतत गोवर करै॥
पटकै कन्ध हिलावै कान। गये देव सब छोड़ विमान॥
खुर सों खोदे नदी करारे। पर्वत उलट पींठ सों डारे॥
पृथ्वी हलै शेष हू थरहरे। तिय ओ धेनु गर्भ भू परे॥

उसे देखते ही सब गाय तो जिधर-तिधर फैल गईं और ब्रजवासी दौड़े वहाँ आये जहाँ सब के पीछे कृष्ण बलराम चले आते थे। प्रणाम कर बोले महाराज! आगे एक अति, बलवान बैल खड़ा है उससे हमें बचावो। इतनी बात के सुनते ही श्रीकृष्णचन्द्र बोले कि तुम कुछ मत डरो, वह राक्षस बृषभ का रूप धर के आया है निकट जायके बोले हरी 'हमारे पास आया कपट-तनुधारी, तू और किसी को क्यों डराता है, मेरे निकट किस लिये नहीं आता' यों कह फिर ताल ठोक ललकारा, आ मुझसे संग्राम कर, यह बचन सुनते ही असुर ऐसे क्रोध कर धाया कि मानों इन्द्र का बज्र आया, ज्यों २ हरि उसे हटाते थे त्यों त्यों वह सँभल २ कर बढ़ा आता था। एक बार ज्योंही उन्होंने उसे दे पटका त्यों ही खिजला कर उठा और दौनों सींगों से उसने हरि को दबाया तो श्रीकृष्णजी नै भी फुरती से निकट झट पाँव पर पाँव दे उसके सींग पकड़ कर मरोड़ा कि जैसे कोई भीगे चीर को निचोड़े, निदान वह पछाड़ खाय गिरा और उसका जी निकल गया। इस बीचश्रीराधिकाजी ने आ हरि से कहा कि महाराज बृषभ रूप जो तुमनै मारा इसका पाप हुआ, इससे अब तुम तीर्थ न्हाय आवो तब किसी को हाथ लगावो, इतनी बात के सुनते ही प्रभु बोले कि सब तीर्थों को मैं ब्रज में ही बुलाये लेता हूँ यों कह गोवर्धनके निकट जाय दो ओड़े कुण्ड खुदवाये तहाँ ही सब तीर्थ देह धर आये और अपना अपना नाम व धाम कह कर उनमें जल डाल २ चले गये तब श्री कृष्णचन्द्र उन में स्नान कर बाहर आये अनेक गौ दान दे बहुतसे ब्राह्मण जिमाय शुद्ध भये और उसी दिन से कृष्णकुण्ड राधाकुण्डके नामसे प्रसिद्ध हुए, यह प्रसंग सुनाय श्रीशुकदेव मुनिबोले कि महाराज! एकदिन नारदजी कंसके पास आये और उसका कोप बढ़ानेको उन्होंने बलराम और श्याम के होने, माया के आने और कृष्णके जीनेका भेद समझा कर कहा तब कंस क्रोध कर बोला नारदजी! तुम सच कहते हो—

दो०—प्रथम दिया सुत आनि के, मन परतीत बढ़ाय ।
ज्यों ठग कछु दिखाय के, सर्वस्व ले भजि जाय ॥

इतना कह बसुदेव जी को बुलाय पकड़ बाँध, और काँधे पर हाथ धर अकुला कर कंस यों बोला।

चौपाई-मिला रहा कपटी तू मुझे। भला साधु जाना मैं तुझे॥
दिया नन्द के कृष्ण पठाय। देवी हमें दिखाई आय॥
मन में कछु करै कछु और। मारूँ अवशि तुझे यह ठौर॥
मित्र सखा सेवक हितकारी। तासों करै कपट सो भारी॥

ऐसे बक झक कर नारदजी से कहने लगा कि महाराज! हमने कुछ इसके मन का भेद न पाया, हुआ लड़का और कन्या को ला दिया जिसे कहा अधूरा गया सोई जा गोकुल में बलदेव भया इतना कह क्रोध कर होठ चबाय खड़ग उठाय ज्यों चाहा कि बसुदेव को मारूँ त्योंहीं नारद मुनि ने हाथ पकड़ कहा राजा! बसुदेवको तू रख आज, और जिसमें कृष्ण बलराम आवें सो कर काज, ऐसे समझाय बुझाय जब नारदमुनि चलेगये तब कंसने बसुदेव देवकीको किसी एक कोठरी में मूँद दिया और आपने भयातुर हो केशी नामक राक्षस को बुलाय के कहा।

चौ०-महाबली तू साथी मेरा। बड़ा भरोसा मुझको तेरा॥
एक बार तू व्रज में जा। राम कृष्ण हत मुझे दिखा॥

इतना बचन सुनतेही केशी तो आज्ञा पाय बिदा हो दण्डवत कर बृन्दावन को गया और कंस ने शलतोष चाणूर, अरिष्ट, व्यौमासुर आदि जितने मन्त्री थे सब को बुला भेजा वे आये तिन्हें समझा कर कहने लगा कि मेरा बैरी पास बसै है तुम अपने जी सोच विचार कर के मेरे मन का जो शूल खटकता है सो निकालो मन्त्री बोले पृथ्वीनाथ। आप महाबली हो किससे डरते हो राम कृष्ण का मारना क्या बड़ी बात है कुछ चिंता मत करो जिस छल बल से यहाँ कोई आवें सोई हम पता बतावें पहले तो यहाँ भली भाँति से एक ऐसी सुन्दर रङ्ग भूमि बनवावें कि जिसकी शोभा सुनते ही देखने को नगर नगर गाँव के लोग उठ धावें पीछे महादेव का यज्ञ करवावो और होम के लिये बकरे भैंसे मँगवावो, यह समाचार सुन सब ब्रजवासी भेंट लावेंगे जिसके साथ राम कृष्ण भी आवेंगे उन्हें तभी कोई सहज में पछाड़ेगा या कोई और ही बली पौर में मार डालैगा इतनी बात के सुनते ही--

सो०-कहै कन्स मन लाय, भलौ मतौ मन्त्री दियौ।
लीने मल्ल बुलाय, आदर कर बीरा दियौ॥

फिर सभा में आय अपने २ बड़े २ राक्षसों से कहने लगा कि जब हमारेभानजे रामकृष्ण यहाँ आवें तब तुममेंसे कोई उन्हें मार डालियो तो मेरे जीका खटका जाय, यों समझाय पुनः महावत को बुलाकर बोला कि तेरा जो सब से मतवाला हाथी है उसे द्वार पर खड़ा करियो जब वे दोनों आवें और द्वारमें पाव दें तब तू हाथी से चिथा डालियो किसी भाँति भागने न पावें जो उन दोनों को मारेगा सो मुँह माँगा इनाम पावेगा ऐसा सबको समझाया। कार्तिक बदी चौदस को शिव का यज्ञ ठहरा कंस ने साँझ समय अक्रूर को बुलाया अति भाव भक्ति कर घर भीतर ले जाय सिंहासन पर अपने पास बैठाय पकड़ अति प्यार से कहा कि तुम यदुकुल में सब से बड़े ज्ञानी धर्मात्मा धीर हो इसलिए तुम्हें सब जानते हैं मानते हैं ऐसा कोई नहीं जो तुम्हें देख सुखी न होय इससे हमारा काम करो कि एक बेर बृन्दाबन जाओ और देवकी के दोनों लड़कों को जैसे बने तैसे यहाँ ले आवो मेरा मन देखना चाहता है।तुम्हें तो हमारी बात की लाज है अधिक क्या कहैंगे? जो तुम राम कृष्ण को ले आवौ, इतनी बात कहकर कंस फिर अक्रूर को समझाने लगा कि तुम बृन्दाबन में जाय नंद के यहाँ कहियो कि यज्ञ है, धनुष यज्ञ है और अनेक २ प्रकार के कौतूहल वहाँ होंगे, यह सुन नंद उपनंद गोपों समेत बकरे भैंसे ले भेंट देने आवेंगे तिनके साथ देखने को कृष्ण बलदेव भी आवेंगे यह तो मैंने तुम्हें उनके लाने का उपाय बताय दिया तुम सुज्ञान हो जो युक्ति बन आवे सो करियो अधिक तुम से क्या कहें।

अक्रूर ने अपने जी में बिचारा कि जो मैं अब भली बात कहूँगा तो यह न मानेगा इससे मनकी भावती बात कहूँ, कीजिये जो जिसे सुहाय, यों सोच बिचार अक्रूर हाथ जोड़ शिर झुका बोला महाराज ! तुमने भला मत किया यह बचन हमने शिर चढ़ाय मान लिया। कल भोर को जाऊँगा और रामकृष्ण को ले आऊँगा ऐसे कह कंस से बिदा माँग अक्रूर अपने घर आया।

इति श्री लल्लूलाल कृत प्रेमसागरे कन्सासुर सम्बादो नाम सप्तत्रिंशोऽध्यायः ॥३७॥

अध्याय–३८

शुकदेव जी बोले कि महाराज ! ज्यों श्रीकृष्णचन्द्र ने केशी को मारा और

नारदमुनि की स्तुतिकी हरिने ब्यौमासुर को हना वही सब चरित्र कहता हूँ तुम चित्त दे सुनो कि भोर होते ही केशी अति ऊँचा भयानक घोड़ा बन वृन्दाबन में आया और लगा लाल २ आँखें कर नयन चढ़ाय कान पूँछ उठाय टापों से भूमि खोदने और हींस २ कर कंधा कँपाय २ लात चलाने इसे देखते ही ग्वाल-वालों ने भय खाय भाग श्रीकृष्ण से जा कहा ये सुनके वहाँ आये और उसे देख लड़ने को फेंट बाँध ताल ठोक गर्जकर बोले अरे तू कंस का भेजा हुआ है और घोड़ा बन आया है तो और के पीछे क्यों फिरता है आ मुझसे लड़ जो तेरा बल देखूँ तेरी मृत्यु तो निकट आन पहुँची है यह बचन सुन केशी कोप कर अपने मन में कहने लगा कि आज इसका बल देखूँगा और पकड़ कर ईख की भाँति चबाय कंस का कार्य कर आऊँगा और मुँह को ऐसे करके दौड़ा कि मानों सारे संसार को खा जायगा आते ही पहले जो उसने श्रीकृष्ण पर मुँह चलाया, तो उन्होंने एक बेर तो ढकेल कर पीछे को हटाया जब दूसरी बेर वह फिर सम्हल के मुख फैलाय धाया तब श्रीकृष्ण ने अपना हाथ उसके मुँह में डाल लोह लाट-सा कर ऐसा बढ़ाया कि जिससे उसके दसों द्वार जा रुके, तब तो केशी घबड़ाकर जी में कहने लगा कि अब देह फटती है।

कन्स के भेजे हुए केशी दैत्य का श्रीकृष्ण द्वारा वध

उसने बहुतेरे उपाय हाथ निकालने को किये, पर एक भी काम न आया निदान स्वाँस रुक कर पेट फट गया तो पछाड़ खाय कर गिरा तब उसके शरीर से

लोहू नदी की भाँति बह निकला, तिस समय ग्वालबाल आय आय देखने लगे, और श्रीकृष्णचन्द्र आगे जाय बनमें एक कदम्ब की छाँहतले खड़े हुए। इस बीच बीणा हाथ में लिये नारद मुनि भी आन पहुँचे प्रणाम कर खड़े हो बीणा बजाय श्रीकृष्णचन्द्र की भूत भविष्य की सब लीला और चरित्र गायकर बोले कि कृपानाथ! तुम्हारी लीला अपरम्पार है इतनी किस में सामर्थ्य है, जो आपके चरित्रों को बखाने पर तुम्हारी दया से मैं इतना जानता हूँ कि आप भक्तों को सुख देने के अर्थ और साधुओं की रक्षा के निमित्त दुष्ट असुरों के नाश करने के हेतु बारम्बार अवतार ले संसार में प्रगट हो भूमि का भार उतारते हैं। प्रभु ने नारद मुनि को तो बिदा दी, आप सब ग्वालबाल सखाओं को साथ ले एक बड़के तले बैठ पहले तो किसी को मंत्री, किसी का प्रधान, किसी को सैनापति बनाया आप राजा हो राजनीति के खेल खेलने लगे और पीछे से आँख मिचौनी! इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले कि—पृथ्वीनाथ!

दोहा—मार्‌यौ केशी ज्यों हरि, सुनो कन्स यह बात।
व्योमासुर से कहत हैं, व्याकुल कम्पति गात॥

चौपाई—अरि क्रन्दन व्योमासुर बली। तेरी जग में कीरति भली।
ज्यों राम के पवन को पूत। त्यौही तू मेरौ यह दूत॥
वासुदेव के सुत हरि ल्याबे। आजु काज मेरौ करि आवे॥

यह सुनकर जोड़ व्योमासुर बोला महाराज! जो बसावैगौ सो करूँगा आज मेरी देह है आपही के काज, जो जी के लोभ हैं स्वामी के अर्थ जी देते हैं आती है लाज, ऐसे कह कृष्णबलदेव पर बीड़ा उठाय कंस को प्रणाम कर व्योमासुर बृन्दावन को चला बाट में जाय ग्वाल का वेष बनाय चला २ वहाँ पहुँचा जहाँ हरि ग्वालबाल सखाओं के साथ आँख मिचौनी खेल रहे थे, जाते ही दूर से जब उसने हाथ जोड़ श्रीकृष्णचन्द्र से कहा महाराज! मुझे भी अपने साथ खिलाओ तब हरिने उसे पास बुला कर कहा तू अपने जी में किसी बात की होंस मत रख, जो तेरा मन माने उससे हमारे संग खेल। यों सुन वह प्रसन्न हो बोला कि बूक मेंढ़े का खेल भला है श्रीकृष्णचन्द्र ने कहा बहुत अच्छा तू बन भेड़िया और सब ग्वालबाल बनें मेंढ़े। सब मिलकर खेलने लगे तिस समय वह असुर एक को उठा

ले जाय और पर्वत की गुफा में रख उसके मुँह पर आड़ो शिला धर बन्द कर चला आवै ऐसे जब सबको वहाँ रख आया और अकेले श्रीकृष्ण रहे तब ललकार कर बोला कि आज कंस का काज सारूँगा और यदुवंशियों को मारूँगा यों कह ग्वालबाल का वेष छोड़ सचमुच भेड़िया बन ज्यों हरि पर झपटा त्यों उन्होंने पकड़ गला घोंट मारे घूसों के मार पटका ! ग्वालबाल छुड़ाय घर आय सुख लिया ।

इति श्री लल्लूलाल कृत प्रेमसागरेव्योमासुरवध नामअष्टत्रिंशोऽध्याय ॥ ३८ ॥

अध्याय–३९

श्रीशुकदेव मुनि बोले कि महाराज ! कार्तिक बदी द्वादशी को तो केशी और व्योमासुर मारा गया और त्रयोदशी को भोर के तड़के ही अक्रूर कंस के पास से आय बिदा हो रथ पर चढ़ अपने मन में यों बिचारता बृन्दावन को चला कि ऐसा मैंने क्या जप, तप, यज्ञ, दान, तीर्थ ब्रत किया है जिसके पुण्य से यह फल पाऊँगा ? अपनी जाने तो इस जन्म भर कभी हरि का नाम नहीं लिया सदा उसकी सङ्गत में रहा, भजन का भेद कहाँ पाऊँगा । हाँ अगले जन्म कोई बड़ा पुण्य किया उसी धर्म के प्रताप से यह होता हो जो कंस ने मुझे श्रीकृष्णचन्द्र आनन्दकन्दके लेनेको भेजा है । अब जायउनका दर्शन पाय जन्म सफल करूँगा ।

महाराज ऐसे बिचार अक्रूर अपने मन में कहने लगे कि कहीं मुझे वे कंस का दूत तो न समझेंगे । फिर आपही सोचा कि जिनका नाम अन्तर्यामी है वे तो मन की प्रीति मानते हैं और सब मित्र शत्रु को पहिचानते हैं ऐसा कभी न समझेंगे, वरन् मुझे देखते ही गले लगाय दयाकर अपना कोमल कमल सा कर मेरे सिर पर धरेंगे तब मैं उस चन्द बदन की शोभा इक टक निरख अपने नयन चकोरों को सुख दूँगा कि जिसका ध्यान ब्रह्मा रुद्र आदि सब देवता सदा करते हैं ।

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी ने राजा परीक्षित से कहा कि महाराज ! इस भाँति सोच बिचार करते रथ हाँक इधर से तो अक्रूर गये और उधर बन से गौ चराय ग्वालबाल समेत श्रीकृष्ण बलराम भी आये तो इनसे बृन्दावन के बाहर ही भेंट हुई, हरि छबि दूरसे देखते ही अक्रूर रथ से उतर अति अकुलाय दौड़ उनके पाँवों पर जा गिरा और ऐसा मग्न हुआ कि मुँह से बोल न आया, महा

आनन्द कर नयनोंसे जल बरसाने लगा तब श्रीकृष्णजी उसे उठाय अति प्यार से मिल हाथ पकड़ कर लिवाय लेगये वहाँ नंदराय अक्रूरजी को देखते ही प्रसन्न हो उठकर मिले और बहुत सा आदर किया, पाँव धुलवाय आसन दिया जब न्हाय धोय भोजन खाय बीड़ा चबाय बैठे।

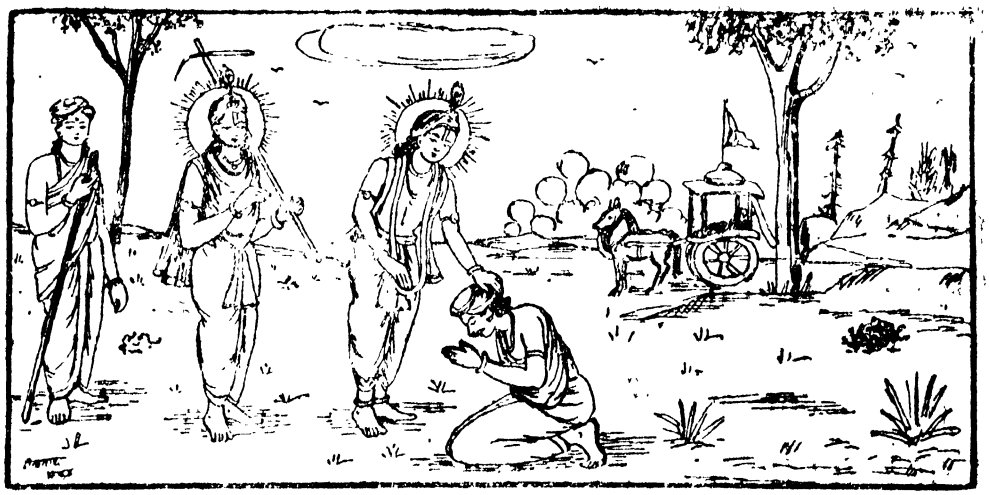

वृन्दावन के बाहर श्री अक्रूरजी से भेंट

तब नन्दजी उनसे कुशल क्षेम पूछ बोले कि तुम यदुवंशियों में बड़े हो सदा से रहे हो कहो कंस दुष्ट के पास वहाँ के लोगों की क्या गति है, सो भेद समझा के कहो! तब अक्रूर जी बोले—

चौ०—जब से कंस मधुपुरी भयो। तब से सबही को दुख दयो॥
पूछो सदा नगर कुशलात। परजा दुखी रहत दिन रात॥
जौलों है मथुरा में कन्स। तौलों कहाँ बचे यदुबंस॥

दोहा—पशु मैंड़े छेरीन का, ज्यों खटकी रिपु होय।
त्यों परजा का कंस है, दुख पावे सब कोय॥

इतना कह बोले कि तुम कंस का ब्यौहार जानते हो हम अधिक क्या कहैं।

अध्याय—४०

श्रीशुकदेवजी बोले कि, पृथ्वीनाथ! जब नन्दजी बातें कर चुके तब अक्रूर को कृष्ण बलराम सैन से बुलाय अलग ले गये।

चौ०—आदर कर पूछी कुशलात। कहो कका मथुरा की बात।
है बसुदेव देवकी नीके। राजा बैर परो तिनही के॥
अति पापी मामा है कन्स। जिन खोयो सिगरो यदुवंश॥

कोई यदुकुल का महा रोग जन्म ले आया है तिसी ने सब यदुबंशियों को सताया है और सच पूछो तो बसुदेव देवकी हमारे लिये इतना दुःखपाते हैं जो हमें न बिधाते तो वे इतना दुःख न पाते। यों कह श्रीकृष्ण फिर बोले।

चौ०-तुम सौं कहा चलत उन कहौ। तिनको सदा ऋणी हौं रहौ॥
करते होंगे सुरत हमारी। संकट सह पावत दुख भारी॥

यह सुन अक्रूरजी बोले, कि कृपानाथ तुम सब जानते हो मैं क्या कहूँगा कंस की अनीति उसकी किसी में नहीं प्रीति, बसुदेव और उग्रसेन के मारने को नित बिचार किया करता है पर वे आज तक अपने प्रारब्ध से बचे रहे हैं और जब से नारद मुनि आय आपके होने का समाचार बुझाय के कह गये हैं तब से बसुदेबजी को बेड़ी हथकड़ी दे महा दुःख में रक्खा है और कल उसके यहाँ महादेव का यज्ञ है धनुष धरा है सब कोई देखने को आवेंगे तुम्हारे बुलाने को मुझे भेजा है यह कह कर कि तुम जाय रामकृष्ण समेत नन्द को भेंट सहित लिवाय लाओ सो मैं लेने का आया हूँ इतना बात अक्रूरजो से सुन रामकृष्ण ने आय नन्दराय से कहा।

कृष्ण बलराम को मथुरा ले जाने के लिए नन्दजी से अक्रूर का कहना

चौ०-कंस बुलाते हैं सुत तात। कही अक्रूरजी यह बात। गोरस मेंढ़े छेरा लेहु। धनुष यज्ञ है ताको देहु॥ सब मिल चलो साथ आपने। राजा बोले रहत न बने॥

जब ऐसे समझाय बुझाय कर श्री कृष्णचन्द्रजी ने नन्द जी से कहा तब नंदरायजी ने उसी समय ढिंढोरिये को बुलाय सारे नगर में यों कह ड्योढ़ी फिरवायदो

कि कल सबेरे ही सब मिल मथुरा को जाँयगे राजाने बुलाया है इस बात के सुनने से भोर होते ही भेंट ले ले सकल ब्रजवासी आन पहुँचे और नन्दजी भी दूध, दही, माखन, मेंढ़ें, बकरे भैंसे ले शकट जुतवाय उनके साथ हो लिये और कृष्ण बलदेव भी ग्वालबाल सखाओं को साथ ले रथ पर चढ़े।

श्रीशुकदेवजी बोले पृथ्वीनाथ! एकाएकी श्रीकृष्ण का चलना सुन सब ब्रज की गोपियाँ अति घबराय ब्याकुल हो घर छोड़ हड़बड़ाय उठ धाईं और उठती भगती गिरतीं पड़ती वहाँ आईं जहाँ श्रीकृष्णचंद्र का रथ था। आते ही रथ के चारों ओर खड़ी हो हाथ जोड़ बिनती कर कहने लगीं, हमें किसलिये छोड़ते हो ब्रजनाथ! सर्वस्व दिया है तुम्हारे हाथ ऐसा तुम्हारा क्या अपराध किया है? जो हमें पीठ दिये जाते हो यों श्रीकृष्णचन्द्र को सुनाय फिर गोपियाँ अक्रूर की ओर देख बोलीं।

चौ०—यह अक्रूर क्रूर है भारी। जानी कछू न पीर हमारी॥
जा बिन हम सब होत अनाथ। ताहि चल्यौ लै अपने साथ॥
कपटी क्रूर कठिन मन भयो। नाम अक्रूर वृथा किनकरयो॥
हेरे अक्रूर कुटिल मति हीन। क्यों दाहत अबला आधीन॥

ऐसी कड़ी बातें सुनाय सोच संकोच छोड़ हरि का रथ पकड़ आपस में कहने लगीं मथुरा की नारियाँ अति चंचल चतुर रूप गुण युक्त हैं उनसे प्रीति कर गुण और रस के बस हो वहाँ ही रहेंगे बिहारी, तब काहे को करेंगे सुरत हमारी हमारे जप तप करने में ऐसी क्या चूक पड़ी थी जिससे श्रीकृष्णचन्द्र बिछुरते हैं यों आपस में कह फिर से कहने लगीं कि तुम्हारा तो नाम है गोपीनाथ किस लिये नहीं ले चलते हमें अपने साथ।

चौ०-तुम बिन छिन २ कैसे कटे। पलक ओट में छाती फटै॥
हित लगाय क्यों करत बिछोह। निठुर निर्दई धरत न मोह॥
चाहि रहौ इकटक हरि ओर। ठगी मृगी सी चन्द चकोर॥
परहि बदन ते आँसु टूट। रही बिखर लट मुख पै छूट॥

श्रीशुकदेवजी बोले कि राजा! उस समय गोपियों की तो यह दशा थी जो मैंने कही और यशोदा रानी ममता कर पुत्र को कंठ लगाय रो२ अति प्यार से कहती थी बेटा जै दिन में तुम वहाँ से फिर आवो तै दिन के लिये कलेऊ लै जावो वहाँ

जाय किसी से प्रीति मत कीजो बेग अपनी जननी को दर्शन दीजो, इतनी बात सुन श्रीकृष्ण रथ से उतर सबको समझाय बुझाय माँ से बिदा हो दन्डवत कर अशीषले फिर रथपर चढ़चले तिसकाल इधरसे तो गोपियों समेत यशोदाजी अति अकुलाय रो२ कृष्ण २ कर पुकारती थीं,और उधर श्रीकृष्ण रथ पर खड़े२ कहते जाते थे कि तुम घर जाओ किसी बात की चिन्ता मत करो, हम चार पाँचदिन में ही फिर कर आते हैं ऐसे कहते २ और देखते२जब रथ दूर निकल गया और धूल आकाश तक छाई, तिस रथ की ध्वजा भी नहीं दिखाई, तब निराश हो एक बेरतो सब की सब नीर बिन मीन की भाँति तड़फड़ाय मूर्छा खाय गिरी, पीछे धीर धर इधर यशोदा जी तो सब गोपियों को ले बृन्दावन को गईं और उधर श्रीकृष्ण चन्द्र समेत सब चले२यमुना तीर आ पहुँचे तहाँ ग्वालवालों ने जल पिया और हरिने भी एक बड़ की छाँह में रथ खड़ा किया इधर अक्रूरजी नहाने का बिचार कर रथ से उतरे तब श्री कृष्णचन्दजी ने नन्दराय से कहाकि आप सब ग्वालवालों को ले आगे चलिये चचा अक्रूर स्नान करलें तो हम भी मिलते हैं, यह सुन सब को ले नन्दजी आगे बढ़े और अक्रूर जो कपड़े खोल हाथ पाँव धोय आचमन कर तीर पर जाय नीर में पैठ डुबकीले पूजा तर्पण जप ध्यानकर फिर डुबकी मार आँखें खोल देखें तो वहाँ पर रथ समेत श्रीकृष्ण दृष्टि आये।

चौपाई—पुनि उन देख्यो शीश उठाय। तरु ठिय बैठे हैं यदुराय।
करैं अचम्भो हिये बिचारि। वे रथ ऊपर दूरि मुरारि॥
बैठे दोऊ बड़ की छाँह। तिन्ह को मैं देखौ जल माँह॥
बाहर भीतर भेद न लहों। साँचो रूप कौन सो कहों॥

महाराज अक्रूर जी तो एक सी ही सूरत बाहर भीतर देख सोचते ही थे इस बीच पहले तो श्री कृष्णचन्द्रजी ने चतुर्भुज हो शंख, चक्र, गदा, पद्म, धारण कर सुर, मुनि, किन्नर गन्धर्व आदि सब भक्तों समेत जल में दर्शन दिया और पीछे शेषशायी, तो अक्रूर देख और भी भूल रहा।

अध्याय—४१

श्रीशुकदेवजी बोले, कि हे महाराज! पानी में खड़े अक्रूर को कितनी एक देर में प्रभु का ध्यान करने से ज्ञान हुआ तो हाथ जोड़ प्रणामकर कहने लगा, कि

कर्ता तुम्ही हो भगवान भक्तों के हेतु संसार में आप जन्म धरते हो वेद अनन्त और सुर नर तुम्हारे ही अंश हैं तुम्हीं से प्रगट हो तुम में ऐसे समाते हैं जैसे जल सागर से निकल सागर में समाता है तुम्हारी महिमा अनूप कौन पार पावे सदा रहते हो विराट स्वरूप सिर स्वर्ग, पृथ्वी पाँव समुद्र पेट, नाभि आकाश, बादल केश, वृक्ष रोम, अग्नि मुख, दसो बचन प्राण, पवन जलवीर्य, पलक लगाना रात दिन इस रूप से सदा बिराजते हो तुम्हें कौन पहिचान सके इस भाँति स्तुति कर अक्रूर जी ने प्रभु के चरणों का ध्यान कर कहा कृपा नाथ! मुझे अपने चरणों में रक्खो।

—❀❀—

अध्याय—४२

श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! जब श्रीकृष्णचन्द्र ने नट माया की भाँति जल में अनेक रूप दिखाय अक्रूर जी को ज्ञान कराया तथा नीर से निकल तीर पर आ हरि को प्रणाम किया तिस काल नन्दलालने अक्रूर जी से पूछा काका शीत समय जल के बीच इतनी देर क्यों लगी? हमें यह अति चिन्ता थी तुम्हारी कि चाचा ने किस लिये बाट चलने की सुधि बिसारी। कुछ अचरज तो जाकर नहीं देखा यह समझाय के कहो जो हमारे मन की दुबिधा जाय।

चौपाई—सुनि अक्रूर कह जोरे हाथ। तुम सब जानत हो ब्रजनाथ॥
भलो दरश दीनों जल माहीं। कृष्ण चरित्र ये अचरज नाहीं॥
मोय भरोसा भयो तिहारो। बेगि नाथ मथुरा पग धारो॥
अब तो यहाँ बिलम्ब न करिये। शीघ्र चलो कारज चित धरिये॥

इतनी बात के सुनते ही हरि उठ रथ पर बैठ अक्रूर को साथ ले चल खड़े हुए, और नन्द आदि जो सब गोप ग्वाल आगये थे उन्होंने जा मथुरा के बाहर डेरे किये और कृष्ण बलदेव की बाट देख देख अति चिन्ता कर अपने मनमें कहने लगे कि इतनी अबेर नहाते में क्यों लगी और किस लिये अब तक हरि नहीं आये? कि इस बीच चले आनन्दकन्द श्री कृष्णचन्द्र भी आय मिले उस समय हाथ जोड़ कर शिर झुकाय बिनती कर अक्रूर जी बोले कि ब्रजनाथ! अब चल के मेरा घर

पवित्र कीजै और अपने भक्तों को दर्शन दे सुख दीजै इतनी बात के सुनते ही हरि ने अक्रूर से कहा।

पहले शोच कंस के देहू। तब अपनो दिखरावो गेहू॥
सबकी बिनती कही सुनाय। तब अक्रूर चल्यौ सिर नाय॥

चले चले कितनी एक बेर में रथ से उतर कर वहाँ पहुँचे जहाँ कंस सभा किये बैठा था इनका देखते ही सिंहासन से उठ नीचे आय अति हित कर मिला और बड़े आदर मान से हाथ पकड़ ले जाय सिंहासन पर अपने पास बैठाय इनकी कुशल क्षेम पूछ बोला, जहाँ गये थे वहाँ की बात कहो।

अक्रूर जी की कन्स से भेंट

चौपाई—सुन अक्रूर कहै समुझाय। बृज की महिमा कही न जाय॥
कहा नन्द की करौं बड़ाई। बात तुम्हारी शीश चढ़ाई॥
रामकृष्ण दोऊ हैं आये। भेंट सबै ब्रजवासी लाये॥
डेरा किये नदी के तीर। उतरे गाढ़ा भारी भीर॥

यह सुन कंस प्रसन्न हो बोला अक्रूरजी आज तुमने हमारा बड़ा काम किया जो रामकृष्ण को ले आये, अब घर जाय विश्राम करो इतनी कथा कह श्रीशुकदेव जी ने राजा परीक्षत से कहा कि महाराज! कंस की आज्ञा पाय के अक्रूर जी तो अपने घर गये और वह सोच बिचार करने लगा। जहाँ नन्द उपनन्द बैठे थे तहाँ उनसे हलधर और गोविन्द ने पूछा जो हम आपकी आज्ञा पावें तो नगर देख आवें यह सुन पहले तो नन्दरायजी ने कुछ खाने को मिठाई निकाल दी उन दोनों

भाइयों ने मिलकर खायली पांछे बोले अच्छा जावो पर बिलम्ब मत कीजो, इतना बचन नन्द महर के मुख से निकलते ही आनन्दकन्द दोनों भाई अपने ग्वालवाल सखाओं को साथ ले नगर देखने चले आगे बढ़ देखें तो नगर के बाहर चारों ओर बन उपवन फूल रहे हैं बड़े बड़े सरोबर निर्मल जल से भरे हैं, उन में कमल खिले हुए हैं जिन पर भौरों के झुण्ड के झुण्ड गूँज रहे और तीर में हंस सारस आदि पच्छी किलोलें कर रहेहैं शीतल सुगन्ध समीर मन्द २ बह रही, और बड़ी२बाबरियों पर पनबाड़ियाँ लगी हुई, बीच २ वर्ण २ के फूलों की क्यारियाँ कोसों तक फूली हुई ठौर ठौर ईदारों बाबड़ियों पर रहट परी चल रहीहैं माली मीठे२सुर सों गाय गाय जल साच रहे हैं।

यह शोभा बन उपवन की निरख हर्ष समेत प्रभु मथुरापुरी में पैठे वह पुरी कैसीहै जिसके चहुँ ओर ताँबे का कोट और पक्की चुआन चढ़ी खाई स्फुटिक के चार फाटक तिनमें अष्टधाता किवाड़ कंचन संचित लगे हुए, और नगर में वर्ण २ के राते पीले हरे धौले अठ खाने सतखाने मन्दिर ऊँचे ऐसे कि घटा से बातें कर रहे हों, जिसके सौने के कलश कुलसियों की ज्योति बिजलीसी चमक रही ध्वजा पता का फहराय रही जाला झरोखों मारखों से धूप की सुगन्ध आय रही द्वार २ पर केले के खंभ और सुवर्ण कलश सपल्लव भरे धरे हुए तोरण बन्दर वान बाँधी हुई घर घर बाजन बज रहे और एक ओर भाँति भाँतिके मणिमय कंचनके मन्दिर राजा के न्यारे ही जगमगाय रहे तिन की शोभा कुछ वर्णी नहीं जाती ऐसी जो सुहावनी मथुरापुरी तिसे श्रीकृष्ण बलदेव ग्वालवालों को साथ लिये देखते चले।

चौपाई—नील बसन गोरे बलराम। पीताम्बर ओढ़े घनश्याम॥
यह मानजे कन्स के दोऊ। इनते असुर बचौ ना कोऊ॥
सुनत हतो पुरुषारथ जिनको। देखह रूप नैन भर तिनको॥
पूरब जन्म सुकृत कछुकीना। सो विधियहदरशनफलदीना॥

दो०—पड़ी धूम मथुरा नगर, आवत नन्दकुमार। सुनि धाये पुर लोग सब गृहका काज बिसार॥

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेव मुनि बोले कि महाराज! इसी रीति से सब पुरवासी क्या स्त्री क्या पुरुष अनेक प्रकार की बातें कह कर दर्शन कर मग्न होते थे और हाट बाट चौहटे में हो सब समेत कृष्ण बलराम निकलते थे तहीं अपने

अपने कोठे पर खड़े इन पर चोआ चन्दन छिड़क आनन्द से फूल बरसाते थे--और यह नगर की शोभा देख २ ग्वालवालोंसे कहे जाते थे भैया कोई भूलियो मत और जो कोई भूले तो पिछले डेरों पर जाइयो इसमें कितनी एक दूर जाय देखें तो क्या है कि कंस का धोबी धुले कपड़ों की लादियाँ लादे मोटे पोट लिये मद पिये रङ्ग-राते कंस के यश गाते नगर के बाहर से चले आतेहैं,उन्हें देख श्रीष्णचन्द्र ने बल-देवजी से कहाकि भैया ! इनके सब चीरछीन लीजिये,और आपपहर,ग्वालवालोंको पहरायबचैसोलुटायदीजियेऐसेभाईको सुनायसबसमेतधोबियों केपासजायहरिबोले ।

चौ०-हमको उजला कपड़ा देहु । राजहिं मिलि आवैं फिरि लेहु ॥
जो पहिरावन नृप सों पैहैं । माँगे ते कछु तुम को दैहैं ॥

इतनी बात के सुनते ही उनमें जो बड़ा धोबी था हँसकर कहने लगा ।

सो०—राखी घरी बनाय, का जैहों नृप द्वार लो ।
तब लीला पट आय, जो चाहो सो दीजियो ॥

चौपाई—बन बन फिरत चरावत गैया, अहिर जात कामरी चढ़ैया ।
नट कौ भेष बनाकर आये, नृप अम्बर पहरन मन भाए ॥
जुरिके चले नृपति के पास, पहिरावन लेबे की आस ।
नेक आस जीवन की लेऊ, जीवन बहत अवनि पुनि सोऊ ॥

यह बात धोबी की सुनकर हरि ने फिर मुस्कराय कहा कि हम तो सूधा बात से माँगतेहैं तुम उलटा क्यों समझते हो कपड़े देने से कुछ तुम्हारा न बिगड़ेगा, वरन यश लाभ होगा, यह बचन सुन रजक झुँझलाय कर बोला कि राजाके बागे पहरने का मुँह तो देख, मेरे आगे से जा नहीं तो अभी मार डालता हूँ इतनी बात के सुनते ही क्रोध कर श्रीकृष्णचन्द्र ने तिरछा कर एक हाथ ऐसा मारा कि शिर भुट्टा सा उड़ गया तब जितने उसके साथ टहलुये थे सब छोटे मोटे लादियाँ छोड़ अपना जीव ले भागे और कंस के पास जा पुकारे यहाँ श्रीकृष्णचन्द्र ने सब कपड़े ले लिये और आप पहन भाई को पहरा ग्वालबालों को बाँट बचे सो लुटाय दिये, तिस समय ग्वालबाल अति प्रसन्न हो लगे उलटे पुलटे वस्त्र पहनने ।

दोहा—कटिपटि पग पहरें झगा, सूथन गेलें बाँह ।
सरस भेद जाने नहीं, हँसता कृष्ण मन माँह ॥

जो वहाँ से आगे बढ़े जाते तो एक दर्जी ने आय दण्डवत् कर खड़े हो कर

जोड़ के कहा महाराज ! मैं कहने को कंस का सेवक कहलाता हूँ पर मन से सदा आपका ही गुण गाता हूँ दया कर कहिये तो बागे पहराऊँ जिससे तुम्हारा दास कहाऊँगा, इतनो उसके मुख से निकलते ही अन्तर्यामी श्रीकृष्णचन्द्र ने उसे अपना भक्त जान निकट बुलाय के कहा तू भले समय आया पहरायदे तब तो उसने झटपट ही खोल उधेड़े कतर छाँट सोंकर ठीक ठीक बनाय चुने २ रामकृष्ण समेत सब को बागे पहराय दियेउस काल भगवान उसको भक्ति देसाथ लेआगे चले।

चोपाई–तहाँ सुदामा माली आयौ। आदर कर अपने घर लायौ॥
सब ही को माला पहिराई। माली के घर भई वधाई॥

अध्याय–४३

श्रीशुकदेवजी बोलेकि–पृथ्वीनाथ ! माली की लग्नदेख मग्न हो श्रीकृष्ण चन्द्र उसे भक्ति पद्रार्थ दे वहाँ से आगे जाय देखें तो पास गली में एक कुवड़ी केसर चन्दन से कटोरियाँ भर थाली के बीच धर हाथ में लिये खड़ी है, उससे हरिने पूछा तू कौन है ? और यह कहाँ ले चली वह बोली दीनदयाल मैं कंस की दासी हूँ मेरा नाम कुब्जा है नित चन्दन घिस कंस को लगाती और मनसे तुम्हारे ही गुण गाती हूँ जिसके प्रताप से आज आपका दर्शन पाया जन्म सफल किया और नयनों का फल लिया अब दासी का मनोरथ यह है कि जो प्रभु का आज्ञा पाऊँ तो चन्दन अपने हाथों चढ़ाऊँ उसकी अति भक्ति देख कहा जो तेरी इसमें प्रसन्नता है तो लगाय, इतना बचन सुनते कुब्जा ने बड़े राव चाव से चित्त लगाय जब रामकृष्ण को चन्दन अरचा तब श्रीकृष्णचन्द्र ने उसके मन की लाग देख दया कर पाँव धर दो अँगुली ठोड़ी के तले लगाय उचकाय उसे सोधी किया हरी का हाथ लगते ही वह सुन्दरी हुई, और निपट बिनती कर प्रभु से कहने लगी, कि कृपानाथ जो आपने कृपा कर इस दासी की देह सूधी की दया कर चल कर घर पवित्र कीजै, और विश्राम से दासी को सुख दीजै, यह सुन हरि उसका हाथ पकड़ मुसकराय के कहने लगे।

तें श्रम दूर हमारौ कियो, तिलक सुशीतल चन्दन दियौ॥
रूप शीलगुण सुन्दर नीकौ, तेरी प्रीत निरन्तर जीकौ॥
आय मिलेंगे कंसहिं मारी, यों कहि आगे चले मुरारी॥

श्रीकृष्ण की कुब्जा से भेंट

और कुब्जा अपने घर जाय केशर चन्दन चौक पुराय हरि के मिलने की आश मन में रख मङ्गलाचार करने लगी।

आवें तहँ मथुरा की नारी, करैं अचम्भो कहैं निहारी ॥
धन धन कुबजा तेरो भाग, जाको बिधना दियौ सुहाग ॥
ऐसे कहा कठिन तप कियौ, गोपीनाथ भेंट भुज लियौ ॥
हम नीके नहिं देखे हरी, तोको मिले प्रीति अति करी।
ऐसे तहाँ कहत सब नारी, मथुरा देखत फिरत मुरारी ॥

इसी बीच नगर देखते २ सब समेत प्रभु धनुष पौर पर जा पहुँचे इन्हें देखते ही अपने रङ्ग में राते माते पौरिये रिसाय के बोले इधर किधर चले आते हो गँवार दूर खड़े रहौ यह है राजद्वार, द्वारपाल की बात सुनी-अन-सुनो कर हरि सब समेत अर्राते वहाँ चले गये जहाँ तीन ताड़ लम्बा अति मोटा भारो महादेव का धनुष धरा था जाते ही झट उठाय चढ़ाय सहज स्वभाव ही खेंच के तोड़ डाला कि ज्यों हाथी पोदना को तोड़ता है, इतने सब रखवारे जो कंस के बिठाये धनुष की चौकी देते थे सो चढ़ आये प्रभु ने उन्हें भी मार गिराया तिस समय पुरवासी तो यह चारत्र देख बिचार कर निःशंक हो आपस में यों कहने लगे कि देखो राजा ने घर बैठे अपनी मृत्यु आप बुलाई इन दोनों भाईयों के हाथों से अब जीता न बचेगा और धनुष टूटने का अति शब्द सुन कंस भय खाय अपने लोगों से पूछने लगा कि यह महा शब्द काहे का हुआ। इस बीच में कितने एक लोग राज के जो खड़े दूर

से देखते थे वे मूढ़ उधर यों जा पुकारे कि महाराज की दुहाई रामकृष्ण ने आय नगर में में बड़ी धूम मचाई शिव का धनुष तोड़ सब रखवालों को मार डाला यह सुनते ही कंस ने बहुत से योधाओं को बुलाय के कहा तुम इनके साथ जाओ और कृष्ण को छलबल कर अभी मार कर आवो इतना बचन कंस के मुख से निकलते ही ये अपने अस्त्र शस्त्र ले वहाँ गये जहाँ दोनों भाई खड़े थे उन्होंने उन्हें ज्यों ललकारा त्यों उन्होंने इन का भी आय मारडाला जब हरि ने देखा कि अब यहाँ कंस का सेवक कोई नहीं रहा तब बलराम जी से कहा कि भाई आये बड़ी देर भई अब डेरे पर चलना चाहिये । बाबा नन्द हमारी बाट देख भय करते होयगे यों सब ग्वालवालों को साथ लें प्रभु बलराम समेत चलकर डेरे पर आये थे आते ही नन्द महर से यों कहा कि पिता हम नगर में जाय भला कुतूहल देख आये और गोप ग्वालों ने अपने बागे दिखलाये ।

तब लखि नन्द कहैं समुझाय । कान्ह तुम्हारी टेव न जाय ॥
ब्रज बन नहीं हमारा गाँव । यह है कंसराय का ठाँव ॥
यहँ जनि कछू उपद्रव करौ । मेरी सीख पूत मन धरौ ॥

जब ऐसे समझाय चुके तब नन्दलाल बड़े लाड़ से बोले कि पिता भूख लगी है तब उन्होंने जो पदार्थ खाने को साथ लाये थे सो निकाल के दिये कृष्ण बलराम ने ले ग्वालवालों के साथ मिल कर खाय लिया । इतनी कथा कह श्रीशुकदेव मुनि बोले कि महाराज ! इधर तो आय परमानन्द से ब्यालू कर सोये और उधर श्री कृष्ण की बात सुन कंस के चित्त में अति चिंता हुई खड़े २ मन ही मन कुढ़ता था अपनी पीर किसी से न कहता था, जैसे कि—

दोहा—ज्यों काटहि घुन काठ है, कोऊ न जाने पीर ।
त्यों चिन्ता चित में भई, बुधि बल घटत शरीर ॥

निदान अति घबराय मन्दिर में जाय सेज पर सोया उसे मारे डर के नींद न आई ।

तीन पहर निशि जागत गई । लागी पलक नींद क्षण गई ॥
तब सपनों देखौ मन माँहि । फिरे शीश बिनधर बिनछाहिं ॥
कबहु न रान रेत में न्हाय । धाये गदहा चढ़ विष खाय ॥
बसै मसान भूत संग लिये । रक्त फूल की माला हिये ॥

धरत रूख देखे चहुँ ओर। तिन पर बैठे बाल किशोर॥

महाराज! जब कंस ने ऐसे स्वप्न देखा तब तो वह अति व्याकुल हो चौंक पड़ा और सोच बिचार करता बाहर आय व अपने मन्त्रियों को बुलाय बोला। अभी रङ्गभूमि को झड़वाय छिड़कवाय सँवारो, सब ब्रज वासियों, वसुदेव आदि यदुवंशियों, और जो सब देश के राजा आये तिन्हें रङ्ग भूमि आय उसे झड़वाय छिड़कवाय तहाँ पाटम्बर बिछवाय ध्वजा पताका तोरण बन्दनावार बँधवाय अनेक अनेक भाँति के बाजे बजाय सबको बुलाय भेजा, वे आए और अपने अपने मंच पर जाय बैठे इस बीच राजा कंस अति अभिमान भरा अपने मचान पर आन बैठा उस काल देवता विमानों में बैठ आकाश में देखने लगे।

इति श्री लल्लूलाल कृते प्रेमसागरे मथुरीपुरी प्रवेश नाम तेतालीसवाँऽध्यायः॥४३।

अध्याय--४४

कुबलिया-बध

श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! भोर ही जब नन्द उपनन्द आदि सब बड़े २ गोप रङ्गभूमि की सभा में गये तब श्रीकृष्णचन्द्रजीने बलदेवजीसे कहा कि भाई! सब गोप आगे आये, अब बिलम्ब न कीजिये शीघ्र ग्वालबाल सखाओं को

श्रीकृष्ण द्वारा कुबलिया गज का बध

साथ ले रङ्ग भूमि देखने को चलिये, इतनी बात के सुनते ही बलराम जी उठ खड़े हुये और सब ग्वालबाल सखाओं से कहा कि भाइयो! चलो रङ्गभूमि की रचना

देख आवें, यह सुनते ही तुरत सब सङ्ग हो लिये निदान श्रीकृष्णचन्द्र बलराम नटवर भेष किये ग्वालबालों को साथ लिये चले रंगभूमि की पौर पर आ खड़े हुए जहाँ दस सहस हाथियों का बल बाला गज कुबलिया झूमता था।

देख मतङ्ग द्वार मतवारी । गजपालहिं बलराम पुकारी ॥
सुनों महावत बात हमारी । लेहु द्वार ते गज को टारी ॥
जान देहु हमको नृप पासा । नातर हू है गज का नासा ॥
कहै देत नहिं दोष हमारो । मत जानो हरि को तुम बारो ॥

यह सुन महावत क्रोध कर बोला मैं जानता हूँ गौ चराय के इतराय गये हैं इसी से यहाँ आय बड़े शूरवीरों की भाँति खड़े हैं धनुष का तोड़ना न समझियो मेरा हाथी दश सहस्र हाथियों का बल रखता है जब तक इससे न लड़ेंगे तब तक भीतर न जाने पावोगे, तुमने तो बहुत बली मारे हैं पर आज इसके हाथ से बचोगे तो मैं जानूँगा कि तुम बड़े बली हो।

दोहा—तबहि कोप हलधर कह्यो, सुनरे मूढ़ कुजात।
गज समेत पटकों अबहिं, मुख सँभारि कर बात ॥
सोरठा—नेक न लगि है बार, हाथी गरजै है अबहि।
तासों कहत पुकार, अबहुँ मान मेरो कह्यो ॥

इतनी बात के सुनते ही झुँझला कर गजपाल ने गज पेला ज्यों ही वह बलदेव जो पर टूटा त्योंही उन्होंनेने हाथ घुमायएक थपेड़ा ऐसा मारा,कि वह सूँड़ सिकोड़ चिंघाड़कर पीछे हटा यह चरित्र देख कंस के बड़े जो योद्धा देखते थे, सो अपने जियों से हार मान मन हो मन कहने लगे कि इन बलवानों से कौन जीत सकेगा! और महावत भी हाथी को पीछे हटा जान अति भयमान मन में बिचार करने लगा कि ये बालक न मारे जाँय तो कंस भी मुझे जीता न छोड़ेगा यों सोच समझ उसने फिर अंकुश मार हाथी को ताता किया, और इन दोनों भाइयों पर हूला दिया उसने आते ही सूँड़ से पकड़ खुन्स खायकर ज्यों दाँतों से दबाया त्यों प्रभु सूक्ष्म शरीर बनाय दाँतों के बीच में बच रहे।

दो०—डरपि उठे तिहिकाल सब, सुरमुनि अरु नर नारि।
दहूँ दशन बिच ह्वै खड़े, बल निधि हरि कै तारि ॥
हाँक सुनत अति कोप बढ़ायो। झटकि सूँड बहरो गज घायो ॥

रहे उदर तर दबकि मुरारी। भाजे जनि गज रह्यौ निहारी॥
पीछे प्रगट फेर हरि टेरो। बलदाऊ आगे ते घेरो॥
लागे गजहिं खिलावन दोऊ। भौंचकि रहे देख सब कोऊ॥

महाराज! उसे कभी बलराम सूँड़ पकड़ खेंचते थे, कभी श्याम पूँछ पकड़ और वह उन्हें पकड़ने को आता था तब वे अलग हो जाते थे कितनी एक देर तक उससे ऐसे खेलते रहे जैसे बछड़ों के साथ बालकपन में खेलते थे, निदान हरि ने पूँछ पकड़ फिराय उसे दे पटका और मारे घूसों से मार डाला, हाथी के मरते ही महावत ललकार कर आया प्रभु ने उसे हाथी के पाँव तले झट मार गिराया और हँसते २ दोनों भाई नटवर वेष किये एक दाँत हाथों में लिये रंग भूमि के बीच जा खड़े हुए उस काल नन्दलाल को जिन जिनने जिस जिस भाव से देखा बस उसको उसी भाव से दृष्टि आये मल्लों ने मल्ल माना, राजाओं ने राजा जाना, देवताओं ने अपना प्रभु माना, ग्वालवालों ने सखा माना, नन्द उपनन्द ने बालक समझा और पुर की युवतियों ने रूप निधान, कंसादिक राक्षसों ने काल समान देखा महाराज! इनको निहारते ही कंस अति भय मान हो पुकारा अरे मल्लो इन्हें पछाड़ मारो, कै मेरे आगे से टालो, इतनी बात जो कंस के मुँह से निकली तो सब मल्ल अति शीघ्रता से शस्त्र संग लिये वर्ण २ के वेष किये ताल ठोक ठोक भिड़ने को कृष्ण बलराम के चारों ओर घिर आये जैसे वे आये तैसे ही सँभल खड़े भये तब उनमें से इनकी ओर देख चतुराई कर चाणूर बोला सुनो हमारे राजा कुछ उदास हैं इससे जीव हँसाने को तुम्हारा युद्ध देखा चाहते हैं क्योंकि तुमने बन में रह सब विद्या सीखी हैं और किसी बात का मन में शोच न कीजै, हमारे साथ मल्लयुद्ध कर अपने राजाकोसुख दीजै श्रीकृष्ण बोले राजाजी ने बड़ी दया कर हमें बुलाया है आज, हम से क्या सरेगा इनका काज, तुम अति बली गुणवान हो, बालक अनजान, पर राजाजी से कुछ हमारा वश नहीं चलता इससे तुम्हारा कहा मानते हैं, हमें बचा लीजो बल कर पटक न दीजो अब हमें तुम्हें उचित है जिससे धर्म रहे सो कीजै, मिल कर अपने राजा को सुख दीजै।

इति श्री लल्लूलाल कृत प्रेमसागरे कबुलिया बध वर्णना नाम चवालीसवाँ अध्यायः॥४४॥

अध्याय–४५

श्रीशुकदेवजी बोले–पृथ्वीनाथ! ऐसे बात कर चाणूर तो श्रीकृष्ण के सों ही हुआ मुष्टिक बलरामजी से आय भिड़ा और आपसमें मलयुद्ध होने लगा।

दोहा—शिरसों भुजसों भुजा, दृष्टि दृष्टि सों जोर।
चरण चरण नहिं झपट के, लपट २ झकझोर॥

उस काल सब लोग इन्हें देख देख आपस में कहने लगे कि भाइयो इससभा में अति अनीति होती है। देखो कहाँ ये बालक रूप नादान कहाँ वे मल्ल बज्र समान जो बरजें तो कन्स रिसाय न बरजतो धर्म नसाय, इससे यहाँ रहना उचित

नहीं क्योंकि हमारा कुछ बश नहीं चलता। तब श्रीकृष्ण बलराम मल्लों से मल्ल युद्ध करते थे निदान इन दोनों भाइयों ने मल्लों को पछाड़ मारा उनके मरते ही सब मल्ल आ टूटे प्रभु ने पल भरमें तिन्हें भी मार गिराया तिस समय हरि भक्त तो प्रसन्न हो बाजा बजा जय जयकार करने लगे और देवता आकाश से अपने बिमानों में बैठ श्रीकृष्ण का यश गाय फूल बरसाने लगे और कंस अति दुःख पाय ब्याकुलहो रिसाय अपने लोगों से कहने लगे अरे! तुम बाजा क्यों बजातेहो तुम्हें कृष्ण की जीत भाती है यों कह बोला ये दोनों बालक बड़े चंचल हैं इन्हें पकड़ बाँध सभा से बाहर ले जाओ और देवकी समेत वसुदेव कपटी को पकड़ लावा, पहले उसे मार पीछे से इन दोनों को भी मार डालो। इतना वचन कंस के मुख से निकलते ही भक्तों के हितकारी मुरारी सब असुरों को क्षण भर में मार

उछल के वहाँ जाय चढ़े जहाँ अति ऊँचे मंच पर झिलम टोप पहने हाथ में फरी खाँड़ा लिये बड़े अभिमान से कंस बैठा था। वह उनको काल समान निकट देखते ही भय खाय उठ खड़ा हुआ और थर थर काँपने लगा, मनमें चाहा कि भागूँ पर मारे लाजके भाग न सका। फरी खाँड़ सँभार चोट करने लगा, उधर कान्ह नन्द-लाल अपनी घात लगाये उसकी चोट बचाते थे और सुर,नर, मुनि, गन्धर्व यह महायुद्ध देख २ भयभीत हो यों पुकारते थे-हे नाथ इस दुष्टको बेग मारो। कितनी एक देर तक मंच पर युद्ध होता रहा। निदान प्रभु ने सबको दुखित जान उसके केश पकड़ मंच से नीचे पटका, तब सब सभा के लोग पुकारे, श्रीकृष्णचन्द ने कंस को मारा। यह शब्द सुन, सुर नर, मुनि सबको अति आनन्द हुआ।

दो०—करि अस्तुति पुनि पुनि हरष, बरष सुमन सुर वृन्द ।
मुदित बजावत दुन्दभी, कवि जय जय नद नन्द ॥
सोरठा—मथुरा पुर नर नारि, अति प्रफुल्लित सब को हियो ।
मनहु कुमुद बनचारि, बिकसित हरि शशि मुख निरखि ॥

इतनो कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी ने राजा परीक्षित से कहाकि धर्मावतार! कन्स के मरते हीं जो बलवान आठ भाई उसके थे सो लड़ने को चढ़ आए, प्रभु ने उन्हें भी मार गिराया जब हरि ने देखा कि अब यहाँ राक्षस कोई नहीं रहा, तब कंस की लोथ को घसीट यमुना तीर पर ले आये और दोनों भाइयों ने बैठ बिश्राम लिया, तिसी दिन से उस ठौर का नाम बिश्राम घाट हुआ। आगे कंस की रानियाँ देव रानियों समेत अति ब्याकुल हो रोती पीटती वहाँ आई जहाँ यमुना के तीर दोनों वीर मृतक शरीर लिये बैठे थे और लगी अपने पति का मुख निरख सुख सुमिर सुमिर गुण गाय गाय ब्याकुलहो पछाड़ पछाड़ खाय-खाय गिरने कि इस बीच करुणानिधान कान्ह करुणा कर उनके निकट जाय बोलेः—

मामी सुनहुँ शोक नहिं कीजै। मामा को कर पानी दीजै ॥
सदा न कोऊ जीवत रहै। जूठो सो जो अपनी कहै ॥
मातु पिता सुत बन्धु न कोई। जन्म मरण फिरही फिरहोई ॥
जो सम्बन्ध जबैलों रहै। तब ही लो तासों सुख लहै॥

महाराज जब श्रीकृष्णचन्द्र ने रानियों को ऐसा समझाया तब उन्होंने वहाँ

से उठ धीरज धर जमुना तीर पै आ पति को जल दिया और आप प्रभु ने अपने हाथ से कन्स को अग्नि दे उसका दाह संस्कार किया।

इति श्री लल्लूलाल कृत प्रेमसागरे कन्स बधो नाम पंचत्वारिंशोध्यायः ॥ ४५ ॥

अध्याय–४६

श्री शुकदेव मुनि बोले कि राजा की रानियाँ तो द्यौरानियों समेत वहाँ से न्हाय धोय रोय २ राजमन्दिर को गईं और श्रीकृष्ण बलराम बसुदेव देवकी के पास आय उन के हाथ पाँव की हथकड़ियाँ बेड़ियाँ काट दण्डवत कर हाथ जोड़ सन्मुख खड़े हुए तिस समय प्रभु का रूप देख बसुदेव देवकी को ज्ञान हुआ

बसुदेव देवकी से श्रीकृष्ण बलदेव की भेंट

तो उन्हों ने अपने जी में निश्चयकर जाना कि दोनों बिधाता हैं असुरों को मार भूमि का भार उतारने को अवतार ले आये हैं। जब बसुदेब देवकी ने यों जी में जाना तब अन्तर्यामी हरि ने अपनी माया फैलादी, उसने उनको वह मति हर ली फिर तो उन्हों ने पुत्र कर समझा कि इतने में श्रीकृष्णचन्द्र अति दीनता कर बोले–इसमें हमारा कुछ अपराध नहीं क्यों कि जब से आप हमें गोकुल में नन्द के यहाँ रख आये तब से परवश थे हमारा बस न था पर मन में सदा यह आता था कि जिसके गर्भ में दस महीने रह जन्म लिया उसे नेंक भी कुछ सुख न दिया न हम ही ने माता पिता का सुख देखा वृथा जन्म पराये यहाँ खोया। तिन्होंने हमारे लिये अति विपत्ति सही हम से कुछ उन की सेवा भई नहीं, संसार

में सामर्थी बेटे हैं जो माँ बाप की सेवा करते हैं हम उनके ऋणी रहे टहल न कर सके। पृथ्वीनाथ जब श्रीकृष्णजी ने अपने मन का भेद यों कह सुनाया तब उन्होंने अति आनन्द मान दोनों को हित कर कंठ लगाया और सुखमान पिछला दुःख सब गँवाया, ऐसे माता पिता को सुखदे दोनों भाई वहाँ से चले २ उग्रसेन के पास आये, और हाथ जोड़ कर बोले।

चौपाई—नाना जू अब कीजै राज। शुभ नक्षत्र नीके दिन आज॥

इतनी बात हरिके मुख से निकलते ही राजा उग्रसेन उठ कर आये, श्रीकृष्णचन्द्र के पावों पर गिर कहने लगे कि कृपानाथ! मेरो बिनती सुन लीजिये जैसे आपने सब असुरों समेत महा दुष्ट कंस को मार भक्तों को सुख दिया तैसे ही सिंहासन पर बैठ अब मथुरा जी का राज्य कर प्रजा पालन कीजिये प्रभु बोले, महाराज! यदुवंशियों को राज्य का अधिकार नहीं इस को सब कोई जानते हैं जब राजा ययाति बूढ़े हुए तब अपने पुत्र यदु को उन्होंने बुला कर कहा कि अपनी तरुण अवस्था मुझे दे और मेरा बुढ़ापा तू ले यह सुन उसने अपने जी में बिचारा कि जो मैं पिता को युवावस्था दूँगा तो ये तरुण हो भोग करेगा इस में मुझे पाप होगा इससे नाहीं करना ही भला है यों सोच समझके उसने कहा कि पिता! यह तो मुझ से नहीं हो सकेगा इतनी बात के सुनते ही राजा ययाति ने क्रोध कर यदु को शाप दिया कि तेरे वंश में राजा कोई न होगा, इस बीच पुरु नाम उसका छोटा बेटा सन्मुख आ हाथ जोड़ बोला कि पिता! अपनी वृद्ध अवस्था मुझे दो और मेरी तरुणाई तुम लो यह देह किसी काम की नहीं, जो आप के काम आवे तो इससे उत्तम क्या है। जब पुरु ने यों कहा तब ययाति ने प्रसन्न हो अपनी वृद्धावस्था दे उसकी युवावस्था ले बोला तेरे कुल में राज गद्दी रहेगी अतएव नानाजी हम यदुवंशी हैं हमें राज्य करना उचित नहीं।

सोरठा—करौ बैठ कर राज, दूर करौ सन्देह सब।
हम करि हैं सब काज, जो आयसु देहो हमें॥

चौ०—जौ मानि हैं न आन हमारी। ताहि दंड देइये हम भारी॥
और कछु चित शोक न कीजै। नीति सहित प्रजा सुख दीजै॥
यादव जिते कन्स के त्रास। नगर छांड़ि कर गये प्रवास॥

तिनको अब तुम जाउ बुलावो। सुख दे मथुरा माँहि बसावो॥
विप्र धेनु सुर पूजन कीजै। इनकी रक्षा में चित दीजै॥

इतनी कथा कह श्रीशुकदेव मुनि बोले, कि धर्मावतार! महाराजाधिराज भक्त हितकारी श्रीकृष्णचन्द्र ने उग्रसेन को अपना भक्त जान ऐसे समझाय सिंहासन पर बैठाय राज तिलक किया और छत्र फिराया दोनों भाइयों ने अपने हाथों में चबर लिया। उस काल सब नगर के बासी अति आनन्द में मग्न हो धन्य धन्य कहने लगे और देवता फूल बरसाने लगे। महाराज उग्रसेन को राज पाट पर बिठाय दौनों भाई बहुत से वस्त्र आभूषण अपने साथ लिवाय वहाँ से चले चले नन्दराय जी के पास आये और सन्मुख हाथ जोड़ खड़े हो अति दीनता कर बोले–हम तुम्हारी क्या बड़ाई करें जो सहस्र जीभें होंय तो भी तुम्हारे गुण का बखान हम से न हो सकेगा, तुमने हमें अति प्रीति कर अपने पुत्रकी भाँति पाला खूब लाड़-प्यार किया, यशोदा मैया भी बड़ा स्नेह करती अपना हित हम ही पै रखती, सदा निज पुत्र समान जाना कभी मन से भी हमें पराया कर न माना ऐसे कह फिर श्रीकृष्णचन्द्र बोले हे पिता! तुम यह बात सुन कर कुछ बुरा मत मानो हम अपने मन की बात कहते हैं कि माता पिता तो तुम्हें कहेंगे पर अब कुछ दिन मथुरा में रहेंगे, अपने जाति भाइयों को देख यदुकुल की उत्पत्ति सुनेंगे और अपनी माता से मिल उन्हें सुख देंगे, क्यों कि उन्होंने हमारे लिये बड़ा दुख सहा है जो हमें तुम्हारे यहाँ न पहुँचा आते तो वे दुःख न पाते। इतना कह वस्त्राभूषण नन्दमहर के आगे धर प्रभु ने निरमोही हो कहा—

चौपाई–मैया सों पालागन कहियों। हम में प्रेम करे तुम रहियो॥

इतनी बात श्रीकृष्ण के मुँह से निकलते ही नन्दराय तो अति उदास हो लगे लम्बी २ श्वास लेने और ग्वालवाल विचार कर मन ही मन में कहने लगे कि यह क्या अचम्भे की बात कहते हैं इससे ऐसा समझ में आता है कि अब ये झट पट नहीं जाना चाहते हैं नहीं तो ऐसे निठुर बचन न कहते महाराज! निदान उसमें से सुदामा नाम का सखा बोला भैया! कन्हैया अब मथुरा में तेरा क्या काम है? जो निठुराई कर पिता को छोड़ यहाँ रहता है भला किया कंस को मारा, सब काम सँवारा, अब नन्द के साथ हो लीजिये और बृन्दावन चल राज्य कीजिये, यहाँ

का राज्य देख मन में मत ललचावो—वहाँ का सुख न पाओगे, सुनो राज्य देख मूरख भूलते हैं और हाथी घोड़े देख फूलते हैं तुम बृन्दावन छोड़ कहीं मत रहो वहाँ सदा बसंत ऋतु रहती है-सघन बन और यमुना की शोभा मन से कभी नहीं बिसरती, जो यह सुख छोड़ कहा न मान, माता पिता की माया तज, यहाँ रहोगे तो इसमें क्या बड़ाई होगी उग्रसेन की सेवा करोगे और रात दिन चिन्तामें रहोगे जिसे तुमने राज्य दिया उसीके आधीन होनाहोगा यह अपमान कैसे सहाजायगा। इससे उत्तम यही है कि नन्दराय को दुःख न दीजै उनके साथ हो लीजै।

ब्रज बर नदी विहारी। गोधन को मनते न बिसारी॥
नहीं छाँड़ि हम ब्रजनाथा। चलहिं सबै तिहारे साथा॥

इतनी कथा कह श्रीशुकदेव मुनि ने राजा परीक्षित से कहा कि महाराज ऐसे कितनी एक बातें कह दस बीस सखा श्रीकृष्ण बलरामजी के साथ रहे और उन्होंने नन्दराय से बुझाकर कहा आप सबको ले निःसंदेह आगे बढ़िये पीछे से हम भी इन्हें साथ लिये चले आते हैं, इतनी बात के सुनते ही।

सो०-व्याकुल सबै अहीर, मानहु पन्नग के डसे।
हरि मुख लखत अधीर, ठाढ़े काढ़े चित्र से॥

उस समय श्रीकृष्णजी नन्दराय को समझाने लगे कि पिता! तुम इतना दुख क्यों पाते हो, थोड़े दिन में यहाँ का काज कर हम भी आते हैं आपको आगे इस लिये बिदा करतेहैं कि माता हमारी ब्याकुल होती होगी तुम्हारे गये से उन्हें कुछ धीरज होगा नन्दजी बोले कि बेटा एकबार चलो फिर मिलकर चलेआइयो।

महाराज! जब श्री कृष्णचन्द्र जी ने ग्वालवालों समेत नन्दमहर को महा-व्याकुल देखा तब मन में बिचारा कि ये बिछड़ेंगे तो जीते न बचेंगे, त्योंही उन्होंने अपनी माया छोड़ी जिसने सारे संसार को भुला रक्खा है उसने आते ही नन्द जी को सब समेत अज्ञान किया, फिर प्रभु बोले पिता! पिता तुम इतने क्यों पछताते हो! पहले यही बिचारो मथुरा और बृन्दावन में अन्तर ही क्या है। तुमसे हम कहीं दूर तो नहीं जाते जो इतना दुःख पाते हो। बृन्दावन के लोग दुखी होंगे इस लिये तुम्हें आगे भेजते हैं। जब ऐसे प्रभु ने नन्दमहर को समझाया तब वे धीरज धर बोले-प्रभु जो तुम्हारे ही जी में यों आया तो मेरा क्या बस है।

जाता हूँ तुम्हारा हट टाल नहीं सकता इतना बचन नंदजी के मुख से निकलते ही हरि ने सब ग्वालवालों समेत नन्दराय जी को बिदा किया आप दोनों भाई यहाँ रहे। उस काल नन्द सहित गोप ग्वाल।

चले सकल मग सोचत भारी। हारे सर्वस मनहुँ जुआरी॥
काहू सुधि, काहू सुधि नाहीं। लट पट चरण परत मग माहीं॥
जात बृन्दाबन देखत मधुवन। विरहव्यथा गाढ़ौ ब्याकुल मन॥

ऐसे कहते ज्यों-त्योंकर बृन्दावनमें पहुँचे। इनका आना सुनते ही यशोदारानी अकुलाकर दौड़ीआई औररामकृष्णको न देखमहाब्याकुलहोनन्दजीसेकहनेलगीं—

कहौ कन्थ सब कहा गवाये। बसन आभूषण लैके आये॥
कंचन फेंक काँच कर राख्यौ। अमृत छोड़ि गूढ़ विष चाख्यौ॥
पारस पाय अन्त जी तारे फिर गुण समहि कपारहि मारे॥

ऐसे तुमने भी पुत्र गँवाये और बसन-आभूषण उनके पलटे ले आये। अब उन बिन धन का क्या करोगे हे कन्त! जिनके पलक ओट भये छाती फाटे उन बिन निशि दिन कैसे कटे जब उन्होंने तुमसे बिछुड़ने को कहा तब तुम्हारा जिया कैसे रहा! इतनी बात सुन नन्द जी ने बड़ा दुःख पाया और नीचा सिर कर यह बचन सुनाया सच कहें ये वस्त्र अलंकार कृष्णने दिये पर मुझे यह सुध नहीं किसने लिए और कृष्ण की बात क्या कहूँगा सुनकर तू भी दुःख पावेगी।

दोहा—मैं अपने से बहु कियो वे प्रभु त्रिभुवन नाथ। जो चाहें सोही करें, या बस मोहि हाय॥

चौपाई—कन्स मार मोपै फिर आये। प्रीति करिय कहि बचन सुनाये॥
बासुदेव के पुत्र वे भए। कर अनुहार हमारी गए॥
हो तब महरि अचम्भे रहौ। पायन परन हमारी कहौ॥
अबजनि महरि हरि सुत कहिए।ईश्वर जानि भजन करि रहिए॥

उसे तो हमने पहले ही नारयण जाना था मायावश पुत्र कर माना। महाराज! जब नन्दरायजी ने सब बात श्रीकृष्णकी कह सुनाई तिस समय मायावश हो यशोदा रानी कभी तो प्रभु को अपना पुत्र जान मन ही मन पछताय ब्याकुल हो २ रोती थी और कभी ज्ञान कर ईश्वर जान जान उनका ध्यान धर गुण गाय २ मनके खेद खोती थीं और इस रीति से सब बृन्दावन वासी अनेक अनेक प्रकार की बातें करते अब मथुरा की लीला कहता हूँ तुम चित्तदे सुनो

कि जब हलधर और गोविन्द नन्दराय को बिदा कर बसुदेव देवकी के पास आये तब उन्होंने इन्हें देख दुख भुलाय ऐसे सुख माना कि जैसे तपी तप करे अपने तप का फल पाय सुख माने! आगे बसुदेव जी ने देवकी से कहा कि कृष्ण बलदेव अहेरियों के यहाँ रहे हैं इन्होंने उनके साथ खाया पिया है और अपनी जाति का ब्यौहार भी नहीं जानते, इससे अब उचित है कि पुरोहित को बुलाय पूछें जो २ वह कहैं सो करें, देवकी बोलीं बहुत अच्छा तब बसुदेव जी ने अपने कुल पूज्य गर्ग मुनिजी को बुलाय भेजा। वे आये उनसे उन्हों ने अपने मनका संदेह सब कहके पूछा कि महाराज! अब हमें क्या करना उचित है। सो कृपाकर कहिये गर्ग मुनि बोले पहले सब जाति भाइयों को नौत बुलाइए पीछे जात कर्म कर राम कृष्ण को जनेऊ दीजे। इतना बचन पुरोहित के सुनते ही बसुदेव जी ने नगर में नौता भेजा सब ब्राह्मण और यदुवंशियों को बुलाया। वे आये, तिन्हें अति कर्म मान कर बिठाया। उस काल पहले तो बसुदेव जी ने विधि से जाति कर्म कर जन्म पत्रिका लिखवाय दस सहस्र गौ सोने के सींग तांवे की की पीठ रूपे का खुर समेत पाटम्बर उढ़ाय ब्राह्मणों को दी, जो श्रीकृष्ण के जन्म समय संकल्पी थी पीछे मङ्गलाचार करवाय वेद की सब रीति भाँति से कर रामकृष्ण का यज्ञोपवीत किया और उन दोनों भाइयों को कुछ दे विद्या पढ़ने को भेज दिया। वे चले२अवंतिकापुरी के सांदीपन नाम ऋषि जो महा पण्डित काशी-पुरी का था, उसके यहाँ आय दण्डवत कर सन्मुख खड़े हो अति दीनता कर बोले—

हम पर कृपा करौ ऋषिराय। विद्यादान देहु मन लाय॥

महाराज!जब श्रीकृष्ण बलराम जी ने सांदीपन ऋषि से दीनता कर कहा, तब तो उन्होंने इन्हें अति प्यार से अपने घरमें रखा और लगे बड़ी कृपाकर पढ़ावने, कितने एक दिनों में ये चार वेद छः शास्त्र,नौ व्याकरण, अठारह पुराण, मंत्र यन्त्र तन्त्र आगम, ज्योतिष, वैद्यक, कोक संगीत पिंगल पढ़ चौदह विद्या निधान हुये। तब एक दिन दोनों भाइयों ने हाथ जोड़ अति बिनती कर गुरु से कहा कि महाराज! कहा है जो अनेक जन्म अवतार ले बहुतेरा कुछ दीजिये तो भी बिद्या पलटा नहीं दिया जाता पर आप हमारी शक्ति देख गुरुदक्षिणा की आज्ञा कीजै

तो हम यथाशक्ति दे आशीष ले अपने घर जाँय। इतनी बात कृष्ण बलराम जी के मुख से निकलते ही साँदीपन ऋषि वहाँ से उठ सोच बिचार करते घरभीतर गये और अपनी स्त्री से उनका भेद यों समझाय कर कहा ये राम श्रीकृष्ण दोनों बालक हैं सो आदि पुरुष अविनाशी हैं भक्तों के हेतु अवतार ले भूमि का भार उतारने को संसार में आये हैं मैंने इनकी लीला देख यह भेद जाना क्योंकि पढ़ पढ़ फिर २ जन्म लेते हैं तो भी विद्या रूपी सागर की थाह नहीं पाते और देखो इस बाल अवस्था में थोड़े ही दिनों में ये ऐसे अगम अपार समुद्र के पार होगये, जो किया चाहे सो पल भर में कर सकते हैं। इतना कह फिर बोले—

चौपाई-इतना कहा मानिये नारी। सबके सुमिर कहै बिचारी।
मृतक पुत्र माँगो तुम जाय। जो हरि हैं तो देहैं लाय॥

ऐसे घरमें बिचार कर साँदीपन ऋषि स्त्री सहित बाहर आये। श्रीकृष्ण बलदेवजी सन्मुख कर जोड़ दीनता कर बोले महाराज! मेरे एक पुत्र था तिसे साथले मैं कुटुम्ब समेत एक वर्ष पूर्व समुद्र नहाने गया था जो वहाँ पहुँच कपड़े उतार सब समेत समुद्र में नहाने लगा तो एक सागर की लहर आई उसमें मेरा पुत्र बह गया सो फिर न निकला, किसी मगर मच्छ ने निगल लिया उसका मुझे बड़ा दुख है, जो आप गुरु दक्षिणा देना चाहते हो तो वही सुत ला दीजै और हमारे मनका दुःख दूर कीजै। यह सुन श्रीकृष्ण बलराम गुरुपत्नी और गुरुको प्रणाम कर रथ पर चढ़े उनका पुत्र लाने के निमित्त समुद्र की ओरचले और चलते२ कितनी एक बेर में तीर पर जा पहुँचे कि इन्हें क्रोध कर आते देख सागर भय मान हो मनुष्य शरीर धारण कर बहुत सी भेंट ले नीरसे निकल तीरपर डरता काँपता इनकेसोंही आखड़ाहुआ और भेंटरख दण्डवतकर हाथजोड़ शिरनवाय अतिविनयकरबोला-

चौपाई—बड़ो भाग्य प्रभु दरशन दयो। कौन काज इत आवन भयो॥

श्रीकृष्णचन्द्र बोले हमारे गुरुदेव यहाँ कुटुम्ब सहित नहाने आये थे, तिनके पुत्र को तू तरंग से बहाय ले गया है तिसे लादे इसलिये हम यहाँ आये हैं।

चौपाई-सुनत सिन्धु बोल्यो शिर नाय। मैं नहिं लीन्हों बाहि बहाय॥
तुम सब ही के गुरु जगदीश। राम रूप बाँध्यो हो ईश॥

तभी से मैं बहुत डरता हूँ और अपनी मर्यादा से रहता हूँ। हरिबोले जो

तू ने नहीं लिया तो यहाँ से और कौन उसे ले गया,समुद्र ने कहा कृपानाथ! इसका भेद बताता हूँ कि एक शङ्खासुर नाम असुर शंखरूप मुझमें रहता है सो वो सब जलचर जीवों को दुख देता हैं और जो कोई तीर पै नहाने को आता है तो उसे पकड़ कर ले जाता है। कदाचित् वह आपके गुरु पुत्र को ले गया हो तो मैं नहीं जानता, आप भीतर पैंठ देखिये।

चौपाई–यों सुन कृष्ण हँसे मन लाय। माँझ समुन्दर पहुँचे जाय॥
देखत ही शंखासुर मार्‌यो। पेट फाड़ बाहर करि डारयो॥
तामें गुरु को पुत्र न पायौ। पछिताने बलभद्र सुनायो॥

भैया! हमने इसे बिन काज मारा। बलराम जी बोले कुछ चिन्ता नहीं अब आप इसे धारण की जो तब हरिने उस शंख को अपना आयुध किया दोनों भाई वहाँ से चले २ यमपुरी में जा पहुँचे जिसका सयमनी पुरी नाम है और धर्मराज वहाँ का राजा है, इनको देखते ही धर्मराज अपनी गद्दी से उठ आगे आय भाव भक्ति कर ले गया, सिंहासन पर बैठाय पाँव धोय चरणामृत ले बोला धन्य यह ठौर धन्य यह पुरी जहाँ आकर प्रभु ने दर्शन दिया,और अपने भक्तों को कृतार्थ किया, अब तुम आज्ञा कीजै जो सेवक पूर्ण करे, प्रभु ने कहा कि हमारे गुरु पुत्र को लादे इतना बचन हरिके मुख से निकलतेही धर्मराज झट बालक को ले आया और हाथजोड़ कर बोला कि कृपानाथ! आपकी कृपा से यह बात मैंने पहले ही जानी थी कि आप गुरुपुत्र को लैने आवेंगे इसलिये मैंने यत्न कर रक्खा है, इस बालक को आज तक जन्म नहीं दिया, महाराज! ऐसे कह धर्मराज ने बालक हरि को दिया, प्रभु ने ले लिया और तुरन्त उसे रथपर बैठाय वहाँ से चल कितनी एक बेरमें ला गुरु के सों ही खड़ा किया और दोनों भाइयों ने हाथ जोड़ के कहा गुरुदेव! अब क्या आज्ञा होती है! इतनी बात सुन और पुत्रको देख सांदीपन मुनि अति प्रसन्न हो श्रीकृष्ण बलरामजी को बहुत सी आशीषें देकर बोले।

चौपाई–अब मैं माँगौ कहा मुरारी। दीनों माहि पुत्र सुखकारी॥
अतिसय तुमसो शिष्य हमारौ। कुशल क्षेम अब घरहि पधारो॥

जब ऐसे गुरु ने आज्ञा की,तब दोनों भाई बिदा हो दण्डवत कर रथ पर बैठे वहाँ से चले२मथुरापुरी के निकट आए, इनका आना सुन राजा उग्रसेन बसुदेव

समेत नगरवासी क्या स्त्री क्या बालक, पुरुष सब उठ धाये और नगर के बाहर आय भेंटकर अति सुखपाय गाजेबाजे से पाटम्बर के पाँवड़े डालते प्रभु को नगरमें ले गये उस काल घर घर मङ्गलाचार होने लगे और बधाई बजने लगी।

इति श्री लल्लूलाल कृत प्रेमसागरे कंस वधो नाम षटचत्वारि अध्यायः ॥४६॥

अध्याय-४७

श्रीशुकदेवजी बोले कि पृथ्वीनाथ! जो श्रीकृष्णचन्द्र नेवृन्दावन की सुरत करी सो सब लीला कहता हूँ तुम चित्त दे सुनो, कि एक दिन हरिने बलरामजी से कहा कि भाई? सब बृन्दावनबासी हमारी सुरत कर अति दुख पाते होंगे क्यों कि जो मैंने उनको अवधि दी थी सो बीत गई, इससे अब उचित है कि किसी को वहाँ भेज दीजै, जो जाकर उनका समाधान कर आवे यों भाईसे जताकर हरि

नन्दजी का उद्धव से वसुदेव देवकी तथा कृष्ण बलदेव का कुशल समाचार पूछना

ने उद्धव को बुलाय के कहा कि हे उद्धव! एक तो तुम हमारे सखा हो दूजे अति चतुर ज्ञानवान और धीर हो इसलिये हम तुम्हें बृन्दावन भेजना चाहतेहैं कि तुम जाकर नन्द यशोदा और गोपियों को ज्ञान दे उनका समाधान कर आवो और मात रोहिणी को ले आवो! उद्धवजी ने कहा जो आज्ञा। फिर श्रीकृष्णचन्द्रबोले तुम प्रथम नन्दमहर और यशोदाजी को ज्ञान उपजाय उनके मनका मोह मिटाय ऐसे समझाय कहियो जो वे मुझे निकट जान दुख तजें और पुत्रभाव छोड़ ईश्वर मान भजें पीछे उन गोपियों से कहियो जिन्होंने मेरे काज छोड़ी है लोक वेद को

लाज रात दिन लीला यश गाती हैं और अवधिकी आश किये प्राण मुट्ठीमें लिये है कि तुम कंत भाव छोड़ हरि को भगवान जान भजो और बिरह दुःख तजो। महाराज! ऐसे उद्धव को कह कर दोनों भाइयों ने मिलकर एक पाती लिखी जिस में नन्द यशोदा समेत गोप ग्वालों को तो तथा योग्य दण्डवत् प्रणाम आशीर्वाद लिखा और सब ब्रजवासियों को जोग उपदेश लिख उद्धव के साथ ही और कहा यह पाती तुम्हीं पढ़ सुनाइयो, जैसे बनै तैसे उन सब को समझाय शीघ्र आइयो। इतना संदेशा कह प्रभु ने निज वस्त्र आभूषण मुकुट पहिराय अपने रथ पर बैठाय उद्धवजी को वृन्दावन बिदा किया तो ये रथ हाँक कितनी एक बेरमें मथुरा से चले २ बृन्दावन के निकट जा पहुँचे तो वहाँ देखते क्या हैं कि सघन कुंजों के पेड़ों पर भाँति२की पीली गायें घटासी फिरती है और ठौर २ गोपियाँ, ग्वालबाल श्रीकृष्ण यश गाय रहे हैं। यह शोभा निरख हर्ष से और प्रभुका बिहार स्थल जान प्रणाम करते उद्धवजी गाँवके तनिक निकट गये तो किसी ने हरिका रथ पहिचान पास आय इनका नाम पूछ नन्द महरसे जा कहा कि महाराज!श्रीकृष्ण का वेष किए उन्हीं का रथ लिए कोई उद्धव नाम का मथुरा से आया है। इतनी बात के सुनते ही नन्दराय जैसे गोप मण्डल के बीच अथाईं पर बैठे तैसे ही उठ धाये और तुरत उद्धवजी के निकट आये। रामकृष्ण का संगी जान अति हितकर मिले और क्षेम पूछ बड़े आदर मान से घर लिवाय ले गये पहले पाँव धुल वाय आसन बैठनेको दिया पीछे षटरस भोजन बनवाय उद्धवजीकी पहुनाई की। जब वे रुचि से भोजन कर चुके तब सुठौर उज्ज्वल श्रेष्ठ शैया बिछवादी, तिस पर पान खाय जाय उन्होंने पौढ़कर अति सुख पाया और मार्गका सब श्रम गँवाया कितनी एक बेर में जो उद्धवजी सो कर उठे तो नन्द महर उनके पास जा बैठे और पूछने लगे कि कहो उद्धवजी! शूरसेन के पुत्र हमारे परम मित्र वसुदेव जी कुटुम्ब समेत आनन्द से तो हैं? और हममे कैसी प्रीति रखते हैं? यों कह फिर बोले—

कुशल हमारे सुत की कहौ। जिन के सङ्ग सदा तुम रहौ॥
कबहु वे सुधि करत हमारी। उन बिन दुख पावत अतिभारी॥
सबही सों आवन कह गये। बीतो अवधि बहुत दिन भये॥

नित उठ यशादा दही बिलोय२ माखन निकाल हरि के लिए रखतीहैं उसका

और ब्रजयुवतियों कीजो उनके प्रेमरङ्गमें रङ्गीहैं,सुरत कभी कान्ह करतेहैं कि नहीं?

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी ने राजा परीक्षित से कहा कि पृथ्वीनाथ! इसी रीति से समाचार पूछते और श्रीकृष्णचन्द्र की पूर्व लीला गाते २ नन्दराय जी तो प्रेम से भीज इतना कह प्रभु का ध्यान कर अवाक हुये कि—

महाबली कंसादिक मारे। अब हम काहे कृष्ण बिसारे॥

इस बीच अति व्याकुल हो सुध बुध देहकी बिसारे मन मारे रोती यशोदारानी उद्धवजी के निकट आय रामकृष्ण की कुशल पूछ प्रेमविभोर हो बोली कहो उद्धव जी हरि हम बिन वहाँ कैसे इतने दिनरहे और क्या संदेशा भेजा है कब आय दर्शन देंगे इतनी बात सुनतेही पहले उद्धवजी ने नन्द यशोदाको कृष्ण बलरामकी पाती पढ़ सुनाई पीछे समझा कर कहने लगे कि जिसके घर में भगवान ने जन्म लिया और बाललीलाका सुख दिया तिनकी महिमा कौन कह सके तुम बड़े भाग्यवानहो क्योंकि जो आदि पुरुष अविनाशी शिव विरंचि का कर्ता न जिसके माता न पिता न भाई न बन्धू तिन्हें अपना पुत्र मानते हो और सदा उनके ध्यान में मन लगाये रहते हो वह तुम से कब दूर रह सकता है कहा है—

चौपाई—सदा समीप प्रेमवश हरी। जिनके हेतु देह निज धरी॥
जाके बैरी मित्र न कोई। ऊँच नीच कोऊ नहिं होई॥
जोई मणि भजन मन धरे। कोई हरिसों किम अजसरे॥

जैसे भृङ्गी कीट को ले जाता है और अपना रूप बना देता है। और जैसे कमल फूल में भौंरा मुद जाता है और फिर दिन भर उसके ऊपर गूँजता रहता है उसे छोड़ और कहीं नहीं जाता है, तैसे ही जो हरि से हित करता है और उनका ध्यान धरता है तिसे वे ही आपसा बना लेते हैं और सदा उसके ही पास रहते हैं यों कह फिर उद्धवजी बोले कि अब तुम हरि को पुत्र कर मत मानो वे अन्तर्यामी भक्त हितकारी प्रभु आय दर्शन दे तुम्हारा मनोरथ पूरा करेंगे तुम किसी बात की मन में चिन्ता मत करो।

महाराज! इसी रीति से अनेक तरह की बातें कहते और सुनते सुनते जब सब रात व्यतीत भई और चार घड़ी पिछली शेष रही तब नन्दराय से उद्धव जी ने कहा कि महाराज अब दधि मथने को बिरियाँ हुई जो आपकी आज्ञा पाऊँ तो

यमुना स्नान करि आऊँ। नन्दमहर बोले बहुत अच्छा इतना कह वे तो वहाँ बैठे सोच विचार करते रहे और उद्धव उठ झट रथ में बैठ यमुना तीर पर आये वस्त्र उतार देह शुद्ध करी पीछे नीर में निकट जाय रज शिर चढ़ाय हाथ जोड़ कालिन्दी की स्तुति कर आचमन कर जल में पैठ और नहाय धोय सन्ध्या तर्पण से निश्चित हो लगे जप करने, उस समय सब ब्रजयुवतियाँ भी उठीं और अपना २ घर झार बुहार लीप पोत धूप दीप कर लगीं दही मथने।

दधि कौ मथन मेह सो गाजे। गावें नूपुर की धुनि बाजे॥
दोहा--दधि मथ के माखन लियौ, कियौ गेह कौ काम।
तब सब मिल पानी चलीं, सुन्दर ब्रज की बाम॥

अध्याय--४८

(उद्धव गोपी सम्वाद, भ्रमर गीत)

श्रीशुकदेवजी बोले कि पृथ्वीनाथ! जब उद्धवजी जप कर चुके तब नदी से निकल वस्त्र आभूषण पहन रथ में बैठ जो कालीदह, कालिन्दी तीर से नन्दगेह की ओर चले तो गोपियाँ जो जल भरने को निकली थीं तिन्होंने रथ दूरसे पन्थ में आते देखा देखते ही आपस में कहने लगीं कि, यह रथ किसका चला आता है इसे देखलो, आगे पाँव न बढ़ाओ, यह सुन उन में से एक गोपी बोली कि,

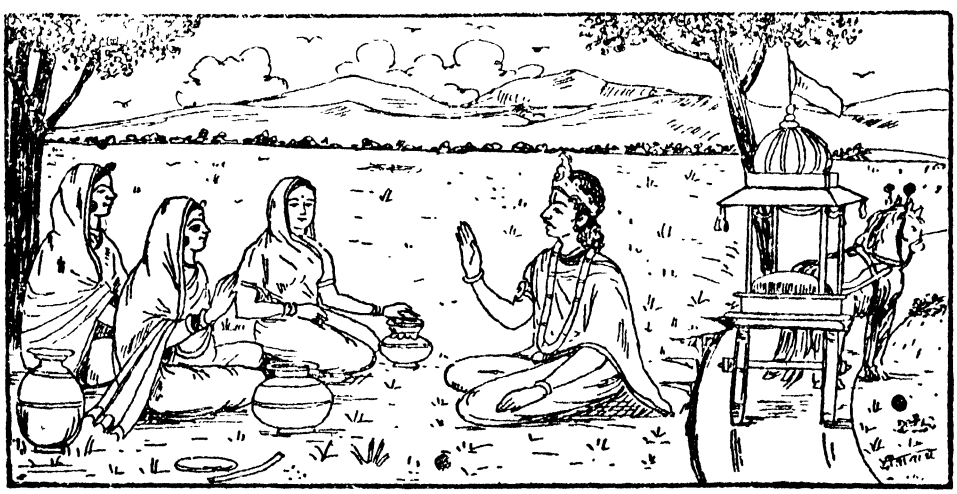

सखी! कहीं वही कपटी अक्रूर तो न आया होय जिसने श्रीकृष्णचन्द्र को ले जाय मथुरा में बसाया, और कंस को मरवाया इतनी सुन एक और उनमें से

बोली वह विश्वासघाती फिर काहे को आया एक बार तो हमारे जीवन मूल को लेगया, अब क्या जीव लेगा महाराज! इस भाँति की आपस में अनेक अनेक बात कह रहीं थीं इतने में जो रथ निकट आया तो कुछ एक दूर से उद्धवजी को देख कर आपस में कहने लगीं कि सखी, यह तो कोई श्यामवर्ण, कमल नयन, मुकुट सिर पर दिये बन माला गले में डाले पीताम्बर पहिरे, पीत पट ओढ़े श्रीकृष्णचन्द्र सा बैठा हमारी ओर देखता चला आता है तब तिनहीं में से एक गोपी ने कहा कि सखी! यह तो कल नन्दजी के यहाँ आया है उद्धव इसका नाम है, और श्रीकृष्णचन्द्रजी ने सन्देशा इसके हाथ कह पठाया है। इतनी बात के सुनते ही गोपियाँ एकान्त ठौर देख सोच संकोच छोड़ दौड़-दौड़ कर उद्धवजी के निकट गईं और हरि का हितू जान दण्डवत् कर कुशल क्षेम पूछ हाथ जोड़ रथ के चारों ओर घेर के खड़ी हुईं उनका ब्यदहार देख उद्धवजी भी रथ से उतर पड़े तब सब गोपियाँ उन्हें एक पेड़ की छाया में बैठाय आप भी चारों ओर घेर बैठीं और अति प्यार से कहने लगीं।

जैसे फलहीन तरुवर को पक्षी छोड़जाता है, तैसे ही हरि हमें छोड़ गये। हमने उन्हें अपना सर्वस दिया तो भी हमारे न हुए महाराज! जब प्रेम में मग्न हो इसी ढब की बातें बहुत सी गोपियों ने कहीं, तब उद्धवजी उनके प्रेम की दृढ़ता देख ज्यों प्रणाम करने को उठना चाहते थे त्योंही किसी गोपी ने एक भौंरे को फूल पर बैठते देख उसके मिस उद्धव से कहा अरे मधुकर! तूने माधव के चरण कमल का रस पिया है तिसी से तेरा नाम मधुकर हुआ और कपटी का मित्र है इसलिये तुझे अपना दूत बनाकर भेजा है,तू हमारे चरण मत परस क्योंकि हम जानतीहैं जितने श्याम वर्ण हैं उतने कपटी हैं, जैसा तू है तैसा श्याम, इससे तुम हमें मत करो प्रणाम, जो तू फूल फूल का रस लेता फिरता है और किसी का नहीं होता वे भी प्रीतकर किसी के नहीं होते ऐसे गोपी कह रही थीं कि भौंरा आया उसे देख ललिता नाम की गोपी बोली—

अहो भ्रमर तुम अलगी रहो। यह तुम जाय मधुपुरी कहौ॥

जहाँ कुबजा सी पटरानी और श्रीकृष्णचन्द्र बिराजते हैं कि एक जन्म की हम क्या कहें तुम्हारी तो जन्म जन्म की यही चाल है वलि राजा ने सर्वस

दिया तिसे पाताल पठाया और सीता सी सती को बिन अपराध घर से निकाला जब उनकी यह दशा देखी तो हमारी क्या चली है कह फिर सब गोपी मिल हाथ जोड़ उद्धव से कहने लगीं कि, उद्धवजी हम अनाथ हैं श्रीकृष्ण के पास तुम अपने साथ ले चलो, श्रीशुकदेवजी बोले, कि महाराज इतना बचन गोपियों के मुखसे निकलते ही उद्धवजी ने कहा संदेशा श्रीकृष्णचन्द्रजी ने लिख भेजा है सो समझा कर कहता हूँ तुम चित्त दे सुनों, लिखा है तुम भोग की आश तज योग करो तुमसे बियोग कभी न होगा और तब ऐसे कहा कि।

निश दिन करिये मेरा ध्यान। प्रिय नहिं कोई तुमहिं समान ॥

इतना कह फिर उद्धवजी बोले जो हैं आदि पुरुष अविनाशी हरी, तिनसे तुमने प्रीति निरन्तर करी, जिन्हें सब कोई अलख अगोचर अभेद बखाने, जिन्हें तुमने अपने कंथ कर माने। पृथ्वी, पवन, पानी, तेज आकाश का है जैसे देह में निवास, ऐसे प्रभु तुम में बिराजते पर माया के प्रभाव से न्यारे दिखाई देते हैं, उनका सुमिरन ध्यान करौ, वे सदाँ अपने भक्तों के बश रहते और पास रहने से होता है ज्ञान ध्यान का नाश। इसलिये हरि ने किया है दूर जाय के बास और मुझे यह भी श्रीकृष्ण ने समझाय के कहा है तुम्हें वेणु बजाय बन में बुलाया और जब देखा तुम्हारे शरीर में मदनवीर का प्रकाश, तब हमने तुम्हारे साथ मिलकर किया था रासविलास।

चौपाई—जब तुम सूरत दीन दिखाई। अन्तर्ध्यान भये यदुराई ॥

फिर जो तुम ने ज्ञानकर ध्यान हरि का मन में किया त्योंही तुम्हारे चित्त की भक्ति ज्ञान देख प्रभुने आय दर्शन दिया, महाराज! इतना बचन सुन गोपी बोलीं।

चौपाई—गोपी तबै कहैं बतराय। सुनौ बात अबरहु अरगाय ॥
ज्ञान योग विधि हमहिं सुनावै। ध्यान छोड़ आकाश बतावै ॥
जिनकी लीला ये मन में है। तिनको को नारायण कहै है ॥
बालापन में जिन सुख दियो। सो क्यों अलख अगोचर भयो ॥
जो अवगुण युत रूपसरूपा। सो क्यों निर्गुण होय निरूपा ॥
जो तुम में प्रिय प्रान हमारे। सो को सुनि हैं बचन तिहारे ॥
एक सखी उठि कहै बिचारि। उद्धव की कीजै अनुहारि ॥
इनसों सखी कछू नहिं कहिये। इनके बचन देख मन रहिये ॥

एक कहति अपराध न याको। यह आयो पठवो कुबजाको॥
अब कुबजा जो जाहि सिखावै। सोई बाको गायो गावै॥
कबहूँ श्याम कहैं नहिं ऐसी। कही आयब्रज में इन जैसी॥
ऐसी बात सुने को भाई। उठत शूल सुन सहा न जाई॥
कहत भोग तजि योग अराधो। ऐसा कैसे कहि हैं माधो॥
जप तप संयम नेम अपार। यह सब विधिना को व्यौहार॥
युग युग जीवहु कुँवरकन्हाई। शीश हमारे पर सुखदाई॥
आछत पती विभूत लगाई। रे कहाँ की नई रीति चलाई॥
हमको नेम योग ब्रत नेही। नन्द नन्दन पद सदा सनेही॥
उद्धवतुम्हें दोषको लावै। यह सब कुब्जा नाच नचावै॥

उद्धवजी के मुख से निकलते ही इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेव मुनि बोले कि, महाराज! जब गोपियों के मुख से ऐसे प्रेम रस साने बचन सुने तब योग कथा कह के उद्धवमन ही मन पछताय सकुचाय मौन साध शिर नवाय रह गये, फिर एक गोपी ने पूछा कहो, बलभद्र जी तो कुशल क्षेम से हैं और बालापन की प्रीति बिचार कभी हमारी सुधि करते हैं कि नहीं यह सुन उन्हों में से किसी और गोपी ने उत्तर दिया कि तुम तो हो अहीरी गँवारी, और मथुरा की हैं सुन्दर नारी, तिन के वश हो राम विहारी रहतेहैं अब हमारी सुध क्यों करेंगे। जब से वहाँ जाके छाये, सखी तब से पिय भये पराये जो पहले हम ऐसा जानती तो काहे को जाने देती अब पछताये कुछ नहीं आता इससे उचित है कि सब दुःख छोड़ अवधि की आश करि रहिये जैसे आठ महीने पृथ्वी बन पर्वत मेघ की आश किये तपन सहतेहैं और तिन्हें आयमेघ ठण्डा करता है तैसे हरि भी आय मिलेंगे।

'बन पर्वत और यमुना तीर में जहाँ जहाँ श्रीकृष्ण बलराम ने लीला करी तहाँ तहाँ वहीं ठौर देख सुध आती है खरी प्राणपति! हरि को यो कह बोलीं।

दोहा—दुख सागर यह ब्रज भयो, काम नाथ बिच धार।
बूड़हि विरह बियोग जल, कृष्ण करें कब पार॥
चौपाई—गोपीनाथ क्यों सब बिसराई। लाज न कछु नाम की आई॥

इतनी बात सुन उद्धवजी मन ही मन बिचार करने लगे कि धन्य है गोपियों को और इतनी दृढ़ता को सर्वस्व छोड़ श्रीकृष्णचन्द्र के ध्यान में लीन हो रही हैं महाराज! उद्धवजो तो उनका प्रेम देख मन ही मन सराहते थे कि उस

काल सब गोपी उठ खड़ी भईं और उद्धवजी को बड़े आदर मान से अपने घर लिवाय ले गईं उनकी प्रीति देख उन्होंने भी वहाँ जाय भोजन किया और विश्राम कर श्रीकृष्ण की कथा सुनाय उन्हें बहुत सुख दिया तब सब गोपी उद्धवजी की पूजा कर बहुत मेंट आगे धर हाथ जोड़ अति विनती कर बोलीं उद्धव जी ! तुम हरि से जाय कहियेा,कि नाथ ! आगे तो तुम बड़ी कृपा करते थे हाथ पकड़ अपने साथ साथ लिये फिरते थे अब ठकुराई पाय नगर नारी कुबजाके कहें से योग लिख भेजा हम अबला अपवित्र अब तक गुरुमुख भी नहीं हुई हम ज्ञान क्या जानें ।

दोहा–उपदेशन हित हरि पठयौ, मोय दियो उपदेस ।
उद्धव माधव पै चल्यौ, करके गोप का वेष ॥
चौपाई–उनसों बालापन की प्रीति । जाने कहा बोग की रीति ।
के हरि क्यों न योग है जात । यह न है सन्देश की बात ॥
उद्धव यों कहियो समझाय । प्राण जात हैं राखें आय ॥

महाराज ! इतनी बात कह सब गोपियाँ तेा हरि का ध्यान कर मग्न हो रहीं और उद्धवजो उन्हें दण्डवत कर वहाँ से उठे और रथ पर बैठ गोवर्द्धन में आये, वहाँ कई एक दिन रहे फिर वहाँ से जेा चले तेा जहाँ२श्रीकृष्णचन्द्रजी ने लीला करी थी तहाँ२गये और दो२ चार दिन सब ठौर रहे निदान कितने एक दिन पीछे फिर वृन्दावन में आये और नन्द यशोदा जी के पास जा हाथ जोड़ कर बोले आपकी प्रीति देख२मैं इतने दिन ब्रज में रहा अब आज्ञा पाऊँ तो मथुराको जाऊँ इतनी बात के सुनते ही यशोदा रानी दूध दही माखन और बहुतसी मिठाई घर में जाय ले आईं और उद्धवजी को देके कहा कि, यह तेा तुम श्रीकृष्ण बलराम को देना, और बहन देवकी से यों कहना कि, मेरे श्रीकृष्ण बलरामको भेजदें बिरमाय न राखें इतना सन्देश कह नन्दरानी अति व्याकुलहो रोनेलगीं तब नंदजी बोले कि उद्धवजी हम तुमसे अधिक क्या कहैं तुम आपचतुर गुणवान महासुजन हो हमारी ओरसे प्रभुसेजाय कहियेा कि वे ब्रजवासियों का दुख विचार वेग आवें इतना कहते२ आँसू भर लिये और जितने ब्रजबासी क्या पुरुष क्या स्त्री वहाँ खड़े थे सेा भी सब रोने लगे, तब उद्धवजी ने उन्हें डाढस बँधाय बिदा हो रोहिणीं को साथ ले मथुराको चले और कितनी एक बेर चले चले श्रीकृष्णके पास आपहुँचे ।

उन्हें देखते ही श्रीकृष्ण बलदेव उठकरमिले और बड़े प्यारसे इनका कुशल क्षेम बृन्दावन के समाचार पूछने लगे कहो ऊधवजी!नन्द यशोदा समेत सब ब्रज ब्रजवासी आनन्द से हैं और कभी हमारी सुरत करतेहैं कि नहीं, उद्धवजी बोले कि महाराज ! ब्रज की महिमा और ब्रजवासियों का प्रेम मुझ से कुछ कहा नहीं जाता उनके तो तुम ही हो प्रान, निश दिन करते हैं वे तुम्हारा ही ध्यान, और ऐसी देखी गोपियों की प्रीति जैसी होती है पूरण भजन की रीति, आपका कहा योग का उपदेश जा सुनाया, पर मैंने भजन का भेद उन्हीं से पाया इतना समाचार कह उद्धव जो बोले कि दीनदयाल मैं अधिककया कहूँ आप अन्तर्यामी घट२ की जानते हो थोड़े ही में समझिये कि बृज में क्या जड़ क्या चैतन्य, सब आप के दर्शन पर्शन बिन महा दुखीहैं केवल अवधि की आशा कर जी रहे हैं इतनी बात के सुनते ही जब दोनों भाई उदास हो रहे तब उद्धवजी तो श्रीकृष्णचन्दजी से बिदा हो नन्द यशोदा का सन्देशा बसुदेव देवकीको पहुँचायअपने घरको गये और रोहिणी जी श्रीकृष्ण बलराम से मिलअति आनंदमान निज मंदिरमें गईं।

अध्याय–४९

श्री शुकदेवजी मुनि बोले कि महाराज! एक दिन श्रीकृष्ण बिहारी भक्त हितकारी कुब्जाकीप्रीति बिचार अपना प्रणपालनेको उद्धवजीको साथले उसकेघरगये।

चौपाई–जब कुब्जा जान्यो हरि आये । पाटम्बर पाँवड़े बिछाये ॥
अति आनन्द लगे उठि आगे । पूरब पुण्य पुंज जनुजाने ॥
उद्धव को आसन बैठारी । मन्दिर भीतर बसे मुरारी ॥

वहाँ जाय देखें चित्रशाला में उज्वल बिछौना बिछा है उस पर एक फूलों से सँवारी अच्छी सेज बिछी है तिस पर हरि जा बिराजे और कुब्जा एक और मन्दिर में जाय सुगन्ध उबटन लगाय न्हाय धोय अपनी चाटी कर सुथरे कपड़े पहन नखशिख से श्रङ्गार कर पान खाय सुगन्ध लगायकर ऐसे रौबदौब से श्रीकृष्ण चन्द्र के निकट आई कि जैसे रति अपने पति के पास आई होय और लाज से घूँघट किए प्रथम मिलन का भय उरमें लिये चुपचाप एक ओर खड़ी होरही देखते ही श्रीकृष्णचन्द्र आनन्द कन्द ने उसे हाथ से अपने पास लिटाय लिया और

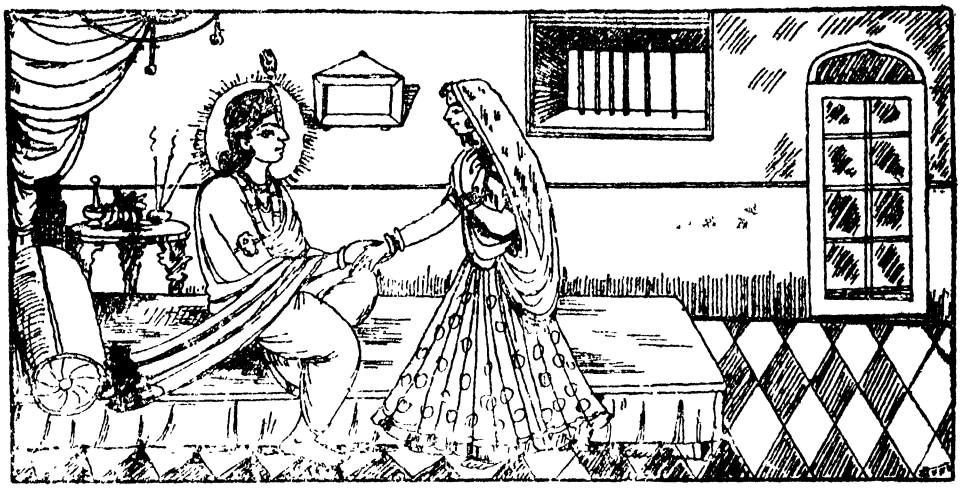

श्रीकृष्ण और कुब्जा की भेंट

चौपाई—तब उठि ऊधव के ढिग आए। भई लाज हँसि नैन लगाये॥

महाराज! यों कुब्जा को सुख दे ऊधवजी को साथ ले श्रीकृष्णचन्द्र फिर अपने घर आये और बलरामजी से कहने लगे कि भाई हमने अक्रूरजी से कहाथा कि तुम्हारा घर देखने जावेंगे सो पहले तो वहाँ चलिये पीछे उन्हें हस्थिनापुर को भेज वहाँ के समाचार मँगवाइये,इतना कह दोनों भाई अक्रूर के घर गये, वह प्रभु को देखते ही अति सुख पाय प्रणाम कर हाथ जोड़ विनती कर बोले कृपानाथ बड़ी कृपाको जो दर्शन दिया और मेरा घर पवित्र किया यह सुन श्रीकृष्णचन्द्र बोले काका इतनी क्यों करते हो, हम तो आपके लड़के हैं यों कह फिर सुनाया कि काका आपके पुण्य से असुर तो सब मारे गये, पर एक ही चिंता हमारे जीमें है कि पाँडु बैकुन्ठ सिधारे और दुर्योधन के साथ पाँच भाई हैं दुखी हमारे।

अध्याय—५०

चौपाई—कुन्ती फूफी अधिक दुख पावै। तुम बिन जाय कौन समझावे॥

इतनी बात सुनते ही अक्रूरजो ने हरि से कहा आप इस बात की चिंता न कीजै मैं हस्तिनापुर जाऊँगा और उन्हें समझाय वहाँ की सुधि ले आऊँगा।

श्रीशुकदेवजी बोले कि पृथ्वीनाथ! जब ऐसा बचन श्रीकृष्णजी ने अक्रूरके मुख से सुना तब उन्हें पाँडवों की सुधि लेने को विदा किया वे रथ पर बैठचले कई दिनमें मथुरासे हस्तिनापुर पहुँचे और रथसे उतर जहाँ राजा दुर्योधन अपनी सभामें बैठाथा तहाँ वो जुहारकर खड़ेहुए इन्हें देखते ही दुर्योधन सभा समेत उठकर मिला

और अति आदर मान से अपने पास बिठा इनकी क्षेम कुशल पूँछ बोला।

चौ०—नीके शूरसेनसुदेव, नीकेहैं मोहन बलदेव। उग्रसेन राजा कहि हेत, नाहिन काहु सुधि लेत॥
पुत्रहि मार करत है राज। तिन्हैं न काहू सों है काज॥

ऐसे दुर्योधन ने कहा तब अक्रूर चुप हो रहा और मन ही मन में कहने लगा कि यह पापियोंकी सभा है यहाँ मुझे रहना उचित नहीं क्योंकि जा में रहूँगा

अक्रूरजी का कुन्ती को समझाना

तो ऐसी २ अनेक बातें कहेंगे सो मुझसे कब सुनी जायेंगी इस से यहाँ रहने में लाभ नहीं, यों विचार अक्रूरजी वहाँ से उठ विदुर को साथ ले पाँडु के घर गये, जहाँ जाय देखें तो कुन्ती पति के शोक से महा व्याकुलहोय रो रही है, उसके पास जा बैठे और लगे समझाने कि, माई बिधना से कुछ किसी का वश नहीं चलता, इससे मनुष्य को चिंता करना उचित नहीं क्योंकि चिंता किए से कुछ हाथ नहीं आता, केवल चित्त को दुःख देना है, महाराज जब समझाय बुझाय अक्रूर जी ने कुन्ती से कहा तब वह सोच समझ चुप हो रहीं, और इनकी कुशल पूछ बोली हे अक्रूरजी हमारे माता पिता और भाई बसुदेवजी कुटुम्ब सहित भले हैं और श्रीकृष्ण बलराम कभी युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव इन अपने पाँचों भाइयों की सुध करते हैं? यह तो यहाँ दुःख समुद्र में पड़े हैं वे इनका रक्षा कब आय करेंगे? हमसे अब तो इस अन्धे धृतराष्टका दुःख सहा नहींजाता क्योंकि वह दुर्योधन की मति से चलता है इन पाँचों को मारने का उपाय करता

है, कई बेर तो बिष घोल दिया सो मेरे भीमसैन ने पी लिया। इतना कह पुनि कुन्ती बोली कहो अक्रूरजी! जब सब कौरव यों बैर कर रहे हैं तब यह बालक किस का मुख देखें और नीचों से बचें कैसे होंय सयाने, यह दुःख बड़ा है ज्यों हरिणी झुंड से बिछुड़ कर त्रास पावे त्यों मैं भी सदा रहतीं हूँ उदास—

चौपाई—जिन कन्सादिक असुरन मारे। सोई हैं मेरे रखवारे।
भीम युधिष्ठिर अर्जुन भाई। इनको दुख तुम कहियो जाई॥

जब ऐसे दीन हो कुन्ती ने बचन कहे उन्हें सुनकर अक्रूरने नयन भरलिए और समझाके कहने लगा कि तुम चिंता मत करो ये जो पाँचों पुत्र तुम्हारे हैं सो महाबली यशी होंगे, श्रीकृष्ण-बलराम ने मुझे तुम्हारे पास भेजा है कि फूफी से कहियो कि किसी बात से दुःख न पावें हम बेग ही तुम्हारे निकट आतेहैं इतना कह अक्रूरजी कुन्ती को समझाय बुझाय आशा भरोसा दे बिदा हो बिदुर को साथ ले धृतराष्ट के पास गये और उनसे कहा कि तुम बड़े होके ऐसी अनीति क्यों करते हो, जो पुत्र के वश हुए अपनी भाई का राजपाट ले भतीजों को दुःख दो कहाँ का धर्म है जो ऐसा अधर्म करते हो।

लोचन गए न सूझे हिए। कुल बह जाय पाप के किए॥

तुमने क्यों भाई का राज्य लिया और भीम युधिष्ठिर को क्यों दुःख दिया इतनी बात के सुनते ही धृतराष्ट अक्रूर का हाथ पकड़ बोले कि क्या करूँ मेरा कहा कोई नहीं सुनता, ये सब अपनी २ मति से चलते हैं इससे इनकी बातोंमें कुछ नहीं बोलता, एकांत बैठा चुपचाप अपने प्रभु का भजन करता हूँ। यह सुन अक्रूरजी दंडवत कर हस्तिनापुर से चले २ मथुरा नगर में आये।

दो०—उग्रसेन बसुदेब सौं, कही पाँडु की बात। कुन्ती के सुत अति दुखित, भए छीण सब गात॥

फिर श्रीकृष्ण बलराजी के पास जा हाथ जोड़ बोले कि महाराज! आपकी फूफी और पाँचों भाई कौरवों के हाथ से महा दुखी हैं, आप अन्तर्यामी हैं। वहाँ की व्यवस्था और विपत्ति और कुन्ती का कहा सन्देशा सुनाय विदा हो अपने घर गये और सब समाचार सुन श्रीकृष्ण बलदेव भूमि का विचार करने लगे।

श्री शुकदेव मुनि बोले कि हे पृथ्वी नाथ! यह जो मैंने ब्रजवन मथुरा का यश गाया सो पूर्वार्द्ध कथा कही अब आगे उत्तरार्द्ध कहूँगा, सोई चित्त दे सुनो।

❀ अथ उत्तरार्द्ध कथा प्रारम्भ ❀

अध्याय–५१

बलदेव जी का जरासिन्धु को बाँध कर लाना और श्रीकृष्ण का उसे छोड़ देना

श्री शुकदेवजी बोले कि–महाराज ! ज्यों श्रीकृष्णचन्द्र समाद जरासिंध को जीत कालयवन को मार मुचकुन्द को तार ब्रज को तज द्वारका में जाय बसे सोई मैं सब कथा कहता हूँ, राजा उग्रसेन राजनीति से मथुरापुरी का राज्य करते थे और श्रीकृष्ण बलराम सेवक की भाँति उनके आज्ञाकारी थे। इस से राजा प्रजा सब सुखी थे पर एक कंस की रानियाँ ही अपने पति के शोक से महा दुखी थीं एक दिन वे दोनों बहनें अति चिन्ता कर आपस में कहने लगीं कि अब अनाथ होय यहाँ रहना भला नहीं इससे अपने पिता के घर चल रहिये सो अच्छा महाराज ! ये दोनों रानियाँ ऐसे आपस में सोच बिचार कर रथ मँगवाय उस पर चढ़ मथुरा से चलीं २ मगध देश में अपने पिता के यहाँ आईं और जैसे श्रीकृष्ण बलराम ने सब असुरों समेत कंस को मारा तैसे उन दोनों ने रो रो समाचार अपने पिता से सब कह सुनाया सुनते ही जरासन्ध अति क्रोध कर सभा में आया और कहने लगा कि ऐसा बली कौन यदुकुल में उपजा जिन्होंने सब असुरों समेत महाबली कंस को मार मेरी बेटियों को राँड़ किया मैं अपना सब कटक ले चढ़ जाऊँ और यदुवंशियों समेत मथुरापुरी को जलाय श्रीकृष्ण बलराम को जीत बाँध लाऊँ तो तेरा नाम जरासन्ध नहीं, इतनो कह उसने तरन्त ही चारों ओर

के राजाओं को पत्र लिखे कि तुम अपना २ दल ले हमारे पास आवो हम कंस का बदला ले यदुवंशियों को निरवंश करेंगे जरासन्ध का पत्र पाते ही सब राजा आये और यहाँ जरासन्ध ने अपनी सेना ठीक २ बना रक्खी निदान सब असुर दल साथ ले जरासन्ध ने जिस समय मगध देश से मथुरापुरी को प्रस्थान किया तिस समय उसके सङ्ग तेईस अक्षौहिणी सेना थी महाराज ! जिस काल जरासिन्धु सेना साथ ले धौंसा दे चला उस काल दशौ दिशाओं के दिग्पाल लगे थर थर काँपने, और सब देवता मारे डरके लगे भागने पृथ्वी लगी डगमग हिलने, निदान कितने ही एक दिनों में चला २ जा पहुँचा और उसने चारों ओर से मथुरापुरी को घेर लिया तब नगर निवासी श्रीकृष्णचन्द्र के पास जाय पुकारे कि महाराज ! जरासन्ध ने आय चारों ओर नगर घेर लिया अब क्या करें ? इतनी बात के सुनते ही हरि कुछ सोच विचार करने लगे इतने में बलरामजी ने प्रभु से कहा कि महाराज ! आपने भक्तों के दुःख दूर करने हेतु अवतार लिया है अब अग्नि तनु धारण कर असुर रूपी बन को जलाय भूमि का भार उतारिये यह सुन श्रीकृष्ण-चन्द्र उन को साथ ले उग्रसेन के पास गये और कहा कि महाराज ! हमें तो लड़ने की आज्ञा दीजिये और आप सब यदुवंशियों को साथ ले गढ़ की रक्षा कीजै इतना कह कर माता पिता के निकट आये नगर निवासी ब्याकुल हो कहने लगे कि हे कृष्ण ! अब इन असुरों के हाथसे कैसे बचें तब हरि ने माता पिता समेत सबको भयातुर देख समझा के कहा तुम किसी बात की चिंता मत करो यह असुर दल शीघ्र नष्ट होगा। फिर उनसे बिदा हो प्रभु जो आगे बढ़े तो देवताओं ने रथ शस्त्र भर इन के लिए भेज दिए वे आय इनके सों ही खड़े हुए।

निकले दोउ भ्रात यदुराय। पहुँचे शीघ्र सुदल में जाय॥

जहाँ जरासंधु खड़ा था तहाँ जा निकले देखते ही जरासिन्धु श्रीकृष्ण चन्द्र से अति अभिमान कर कहने लगा, अरे! तू मेरे सोंहीसे भाग जा, मैं तुझे क्यामारूँ तू मेरे समान का नहीं जो मैं तुझ पर शस्त्र चलाऊँ, भला बलराम को मैं देख लेता हूँ श्रीकृष्णचन्द्र बोले अरे मूरख ! जो शूरमा होते हैं बड़ा बोल नहीं बोलते सब से दीनता करते हैं जो अपने मुँह अपनी बड़ाई मारतेहैं सो क्या कुछ भले कहातेहैं।

यह सुन जरासिंधु ने जो क्रोध किया तो श्रीकृष्ण बलदेव चल खड़ेहुए इनके पीछे वह भी अपनी सब सेना ले धाया और उनसे यों पुकार के कह सुनाया अरे दुष्टो ! मेरे आगे से कहाँ भाग जाओगे बहुत दिन जीते बचे तुमने अपने मन में क्या समझा है अब जीते न रहने पाओगे जहाँ सब असुरों समेत कंस गया है तहाँ ही सब यदुवंशियों समेत तुम्हें भी भेजूंगा जरा दूर जाय दोनों भाई फिर खड़ेहुए श्रीकृष्णजी सब शस्त्र लिए और बलराम ने हल मूसल, ज्यों ही असुर दल उनके निकट गया त्योंही दोनों बीर ललकार के ऐसे टूटे कि जैसे हाथियों के यूथ पर पर सिंह टूटे और लगा लोहा बाजने उस काल बाजा मारू जो बजता था सब देवता अपने विमानों पर बैठ आकाश देख देख प्रभु का यश गाते और इन्हीं की जीत मनाते थे और उग्रसेन समेत यदुवंशी अति चिंता करते थे कि श्रीकृष्ण बलराम को असुर दल में क्यों जाने दिया इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी बोले कि पृथ्वीनाथ जब लड़ते२ असुरों की बहुत सी सेना कट गई तब बलदेवजी ने रथसे उतर जरासिन्धु को बाँध लिया इतने में श्रीकृष्ण जी ने बलराम से कहा कि भाई इसे जीता छोड़ दो मारो मत, क्योंकि यह जीता जायेगातो फिर असुरों को साथ ले आवेगा तिन्हें मार हम भूमिका भार उतारेंगे और जो जीता न छोड़ोगे तो जो राक्षस भाग गये हैं सो हाथ न आवेंगे ऐसे बलदेवजी को समझाय प्रभु ने जरासिंन्धु को छुडवाय दिया वह अपने लोगों में गया जो रणसे भागकेबचे थे।

चौपाई–चहुँदिशि चितै कहे पछिताय। सिगरी सेना गई बिलाय।
भयौ दुःख अति कैसे जीजै। अब सब छोड़ तपस्या कीजै॥

तब मन्त्री बोला क्या हुआ जो अबकी लड़ाई में हारे फिर अपनादल जोड़ लायेंगे और सब यदुवंशियों समेत श्रीकृष्ण बलदेव को स्वर्ग पठावेंगे ! तुम किसी बात की चिन्ता मत करो महाराज!ऐसे समझाय बुझाय जो असुर रण से भाग के बचेथे तिन्हेंजरासिन्ध मन्त्रीघरले पहुँचाया औरवहफिरकटकजोड़नेलगा।

श्रीकृष्ण बलराम भक्त हितकारी उग्रसेन के पास आय दण्डवत कर हाथ जोड़ बोले कि महाराज!आपके पुण्य प्रताप से असुरों को मार भगाया अब निर्भय राज कीजै इतना सुन राजा उग्रसेन ने अति आनन्द मान बड़ा बड़ाई की और धर्मराज करने लगे, इसमें कितने एक दिन पीछे फिर जरासिन्ध उतनी ही

सेना ले फिर चढ़ आया और श्रीकृष्ण बलदेवजी ने पुनि ऐसे ही मार भगाया ऐसे तेईस अक्षोहिणी सेना ले जरासिन्ध सत्रहवेर आया और प्रभु ने मारहटाया।

इतनी कथा कह श्री शुकदेव मुनिने राजा परीक्षित से कहा कि महाराज ! इसी बीच नारद मुनि जी के जो कुछ जी में आई तो वे एकाएकी उठकर कालयवन यहाँ गये इन्हें देखते ही वह सभा समेत उठ खड़ा हुआ और उसने दण्डवत् कर हाथ जोड़ पूछा कि महाराज ! आप का आना यहाँ कैसे हुआ ?

चौपाई—सुनि कै नारद कहैं बिचारि। मथुरा में बलभद्र मुरारि।
तो बिन तिन्हैं हनै नहिं कोय। जरासन्ध सो कछु नहिं होय॥
तू है अजर अमर अति बली। बालक वासुदेव के छली।

यों कह फिर नारदजी बोले कि जिसे मेघवर्ण कमलनयन अति सुन्दर बदन पीताम्बर पहरे पीत पट ओढ़े देखे तिस का पीछा बिना मारे मत छोड़ियो इतना कह नारद मुनि चले गये और कालयवन अपना दल जोड़ने लगा, उसने तीस करोड़ मलेच्छ इकट्ठे किये जिनके मोटे भुजा लम्बे गले, बड़े दाँत, मैले वेष भूरे केश नयन लाल घु घची से तिन्हें साथ ले डङ्का दे मथुरापुरी पर चढ़ आया और उसे चारों ओर से घेर लिया उस काल श्रीकृष्णचन्द्र जी ने उसका व्यौहार देखकर अपने मन में बिचारा कि यहाँ रहना भला नहीं क्योंकि आज वह चढ़ आया है और कल को जरासन्ध भी चढ़ आवे तो प्रजा दुख पावेगी,इससे यहाँ न रहिये सब समेत अन्त जाय बसिये हरि ने यों बिचार कर विश्वकर्मा को बुलाय समझाय के कहा कि तुम अभी जाके समुद्र के बीच एक नगर बनावो ऐसा कि जिससे सब यदुवंशी सुख से रहें परवे यह भेद न जानें कि ये हमारे घर नहीं है और पलभर में सबको वहाँ ले पहुँचावो इतनी बात सुनते ही विश्वकर्मा ने जा समुद्र के बीच शुद्ध धरती के ऊपर बारह योजन का नगर जैसा श्रीकृष्ण ने कहा था तैसा ही रात में बनाय उस का नाम द्वारिका रख, आय हरि से कहा फिर प्रभु ने उसे आज्ञा दी कि इसी समय तू यदुवंशियों को यहाँ से ऐसे पहुँचाय दे कि कोई यह भेद न जाने कि हम कहाँ आये और कौन ले आया ?

इतना बचन प्रभु के मुख से ज्यों निकला त्यों रातों रात ही उग्रसेन बसुदेव समेत विश्वकर्मा ने सब यदुवंशियों को ले पहुँचाया और श्रीकृष्ण बलराम जी

वहाँ पधारे इस बीच समुद्र की लहर का शब्द सुन सब यदुवंशी चौंक पड़े और अति अचरज कर आपस में कहने लगे कि मथुरामें समुद्र कहाँसे आया तब हरि बलरामजी से बोले प्रजा की रक्षा कीजै और कालयवन का बध कीजै। इतना कह दोनों भाई वहाँ से चले २ ब्रज मंडल में आये।

अध्याय--५२

(कालयवन बध, मुचकन्द तरण, व श्रीकृष्ण द्वारिका गवन)

श्रीशुकदेव मुनि बोले कि महाराज! ब्रजमंडल में आते ही श्रीकृष्णजी ने बलरामजी को तो मथुरा में छोड़ा और आप रूप के सागर पीताम्बर पहने पीत पट ओढ़े सब श्रृङ्गार किये कालयमन के दल में जाय उसके सन्मुख हो निकले। वह इन्हें देखतेही अपने मन में कहने लगा कि हो न हो यह श्रीकृष्ण हैं नारद मुनि ने जो चिन्ह बताये थे सो सब इसमें पाये जाते हैं इसी ने कंसादिक असुर मारे जरासिंध की सेना हनी, ऐसे मन ही मन बिचार के यों कहा—

चौपाई–कालयवन यों कहै पुकारी। काहे भागे जात मुरारी॥
आय परयौ अब मामों काम। ठाढ़े रहो करो संग्राम॥
जरासिन्ध हों नहीं कन्स। यादव बलको करौं विध्वंस॥

हे राजन्! यों कह कालयवन अति अभिमान कर अपनी सब सेना को छोड़ अकेला श्रीकृष्णचन्द्र के पीछे धाया पर मूरख ने प्रभु का भेद न पाया आगे २

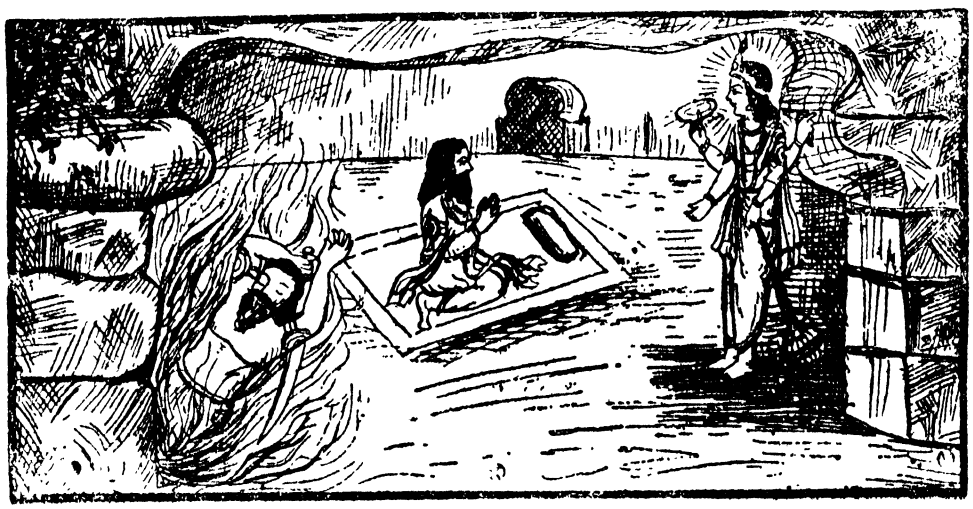

कालयवन मरण और मुचकन्द तरण

तो हरि भागते थे और एक हाथ के अन्तर से पीछे पीछे वह दौड़ा जाता था, अधिक दूर निकल गये तब प्रभु एक पहाड़ की गुफा में घुस गये वहाँ जाकर देखा तो एक पुरुष सोया पड़ा है, यह झट अपना पीताम्बर उसे उढ़ाय आप अलग एक ओर छिप रहे पीछे से कालयवन भी दौड़ता हाँपता उस अति अँधेरी कन्दरा में जा पहुँचा और पीताम्बर ओढ़े उस पुरुष को सोता देख इसने अपने जी में जाना कि यह कृष्ण हो छल कर सो रहा है, महाराज ! ऐसे मन ही मन बिचार क्रोधकर उस सोते हुए के एक लात मार कालयवन बोला अरे कपटी ! क्या साधू को भाँति निश्चिन्ताई से सो रहा है उठ मैं तुझे अभी मारता हूँ यों कह इसने उसके ऊपर से पीताम्बर झटक हटा लिया तब वह नींद से चौंक पड़ा और जो उसने इसको ज्योंही क्रोधकर देखा तो यह जलकर भस्म होगया इतनी बात सुनते ही राजा परीक्षित ने कहा—

चौपाई——यह शुकदेव क समुझाय । क्यों वह रह्यो कन्दरा जाय ॥
ताकी दृष्टि से भस्म क्यों भयो । कौने याहि महा वर दयो ॥

श्रीशुकदेवमुनि बोले पृथ्वीनाथ ? इक्ष्वाकुवंशी क्षत्रीय मान्धता का बेटा मुचकुन्द अतिबली महाप्रतापी जिसका अरिदलदलन यश छायरहा नौखंडमें एक समय सब देवता असुरों के सताये निपट घबराये मुचकुन्द के पास आये, और दीनता कर उन्होंने कहा महाराज ! असुर बहुत बढ़े हैं तब तिनके हाथ से बच नहीं सकते अब हमारी रक्षा करो, यही रीति परम्परा से चली आई है जब २ सुर, मुनि, ऋषि अबल हुए हैं,तब२ उनकी सहायता क्षत्रियों ने करी है इतनी बात सुनते ही मुचकुन्द इनके साथ हो लिया और जाके असुरों से युद्ध करने लगा उनसे लड़ते लड़ते कितने ही युग बीत गये तब देवताओं ने मुचकुन्द से कहा कि महाराज ! आपने हमारे लिये बहुत श्रम किया अब कहीं बैठ विश्राम लीजिये और देह को सुख दीजिये ।

चौपाई–बहुत दिनन कीनों संग्राम । गयो कुटुम्ब सहित धन श्याम ।।
रहयौ न कोऊ तहाँ तिहारो । ताते अब जनि वर पगुधारो ॥

और जहाँ तुम्हारा मन माने तहाँ जावो यह सुन मुचकुन्द ने देवताओं से कहा कृपानाथ ! मुझे कृपा कर ऐसा एकान्त ठौर बतावो कि जहाँ जाय मैं निश्च-

न्ताई से सोऊँ और कोई न जगावे, इतनी बात के सुनते ही प्रसन्न हो देवताओं ने मुचकुन्द से कहा कि महाराज ! आप धौलागिरि पर्वत की कंदरा में जाय शयन कीजिये, वहाँ तुम्हें कोई न जगावेगा और जो कोई जाने अनजाने वहाँ जा तुम्हें जगावेगा तो वह देखते ही तुम्हारी दृष्टि से जलकर राख हो जावेगा, इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेव जी ने राजा से कहा किमहाराज ! ऐसे देवताओं से बर पाय मुचकुन्द उस गुफा में सो रहा था इससे उसकी दृष्टि पड़ते ही कालयवन जल कर छार हो गया आगे करुणानिधान कान्ह भक्ति हितकारी ने मेघवर्ण, चन्द्रमुख, कमल नयन चतुर्भुज शङ्ख चक्र गदा पद्म लिये और मुकुट मकराकृत कुण्डल बनमाल और पीताम्बर पहने मुचकुंद को दर्शन दिया स्वरूप देखते ही वह साष्टाँग प्रणाम कर खड़ा हो हाथ जोड़ बोला कि कृपानिधान ! जैसे आपने इस महा अँधेरी कन्दरा में आय उजाला कर तम दूर किया तैसे दयाकर भेद बताय मेरे मनका भी भ्रम दूर कीजै, श्रीकृष्णचन्द्र बोले कि मेरे तो जन्म कर्म और गुण हैं घने वे किसी भाँति गिने न जाँये, कोई कितना ही गिने पर मैं इस जन्म का भेद कहता हूँ सो सुनो अबके बसुदेव के यहाँ जन्म लिया इससे बसुदेव मेरा नाम हुआ और मथुरापुरी से सब असुरों समेत कंस को मैंने ही मार भूमि का भार उतारा और सत्रह बेर तेईस अक्षौहिणी सैना ले जरासिंध युद्ध करने को चढ़ आया सो भी मुझसे हारा और यह कालयवन तीस करोड़ म्लेच्छ की भीड़ भाड़ ले लड़नेको आया था सोदृष्टिसे जल मरा इतनीबात प्रभुके मुखसे निकलते ही सुनकर मुचकुन्द को ज्ञानहुआ बोला कि महाराज ! आपकीमाया अतिप्रबल है उसने सारे संसार को मोहा है इसी से किसी की सुधि बुधि ठिकाने नहीं रहती ।

चौपाई—करत कर्म सब सुख के हेतू । ताते भारी दुख सह लेतू ॥

जो इस संसार में आया है सो इस अँधकूप से बिना आपकी कृपा निकल नहीं सकता, इससे मुझे भी चिंता है कि मैं कैसे ग्रह रूपी कूप से निकलूँगा, श्रीकृष्ण बोले सुन मुचकुन्द ! बात तो ऐसी है जैसे तूने कहा पर मैं तेरे तरने का उपाय बताये देता हूँ सो तू कर तैंने राज्य हाट भूमि धन स्त्री के लिये अधिक अधर्म किये हैं सो बिन तप किये न छूटेंगे, इससे उत्तर दिशा में जाय तू तपस्या

कर वहीं अपनी देह त्यागफिर ऋषिके घर जन्मलेगा, तब तू मुक्ति पदार्थ पावेगा, महाराज ! इतनी बात जो मुचकुन्द ने सुनी तो जाना कि अब कलयुग आया, यह समझ प्रभु से बिदा हो दण्डवत् कर परिक्रमा दे मुचकुंद तो बदरीनाथ को गया और श्रीकृष्णजी ने मथुरा में आय बलराम से कहा कि—

चौपाई—काल यवन का कियो निकन्द । बदरी बन पठयो मुचकन्द ॥
काल यवन की सेना घनी । तिन घेरा मथुरा आपनी ॥
आवत ताहि बाई छन मारो । सकल भूमि को भार उतारो ॥

ऐसे कह हलधर को साथ ले श्रीकृष्णचन्द्र मथुरापुरी से निकल यहाँ आये जहाँ कालयबन का दल पड़ा था और आतेही दोनों उससे युद्ध करने लगे, निदान लड़ते लड़ते सब म्लेच्छों की सैना प्रभुने सब मारी तब बलदेवजी से कहा भाई ! अब मथुरापुरी की सब सम्पत्ति ले द्वारिका को भेज दीजिये बलरामजी बोले बहुत अच्छा तब श्रीकृष्णचन्द्र ने मथुराका सब धन निकलवा भैंसों छकड़ों ऊँटों हाथियों पर लदवाय द्वारिका को भेजदिया उस बीच जरासन्ध तेईस अक्षौहिणी सेना ले मथुरापुरी पर चढ़ आया तब श्रीकृष्ण बलराम अति घबराय के निकले और उसके सन्मुख आ दिखाई दे उसके मन का सन्ताप मिटाने को भाग चले तब मन्त्री ने जरासन्ध से कहा महाराज ! आपके प्रताप के आगे ऐसा कौन बली है जो ठहरे देखो वे दोनों भाई कृष्ण बलराम छोड़ के सब धन धाम अपना प्राण लेके तुम्हारे त्रास के मारे नंगे पाँवों भगे चले जाते हैं इतनी बात मन्त्री से सुन जरासन्ध भी यों कह पुकार कर कहता हुआ सैना ले उनके पीछे दौड़ा ।

चौपाई—काहे डर के भागे जात । ठाढ़े रहो करो कछु बात ॥
परत उठत कम्पत क्यों भारी । आइ ढिंग अब मृत्यु तुम्हारी ॥

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी मुनि बोले कि पृथ्वीनाथ ! जब श्रीकृष्ण और बलदेवजी ने भाग के लोक रीति दिखाई तब जरासन्ध के मन से पिछला सब शोक गया, और अति प्रसन्न हुआ आगे श्रीकृष्ण बलराम भगते २ एक गौतम नामक पर्वत जो ग्यारह योजन ऊँचा था तिसपर चढ़ गये, और उसकी चोटी पर जाय खड़े भये ।

चौपाई—देख जरासन्ध कहै पुकारी । शिखर चढ़े बलभद्र मुरारी ॥
अब न कहीं हम सो जाय पलाय । या पर्वत को देहु जलाय ॥

इतना बचन जरासिन्ध के मुख से निकलते ही असुरोंने उस पहाड़ को घेरा नगर २ गाँव गाँव से काठ किवाड़ लाय उसके चारों ओर चुनदिया तिस पर कूड़ा गूदड़, घी, तेल, से भिगो २ डाल कर आग लगा दी जब वह आग पर्वत की चोटी तक लगी, तब उन दोनों भाइयों ने वहाँ से इस भाँति द्वारका की बाट ली कि किसी नै उन्हें जाते भी न देखा और पहाड़ जल कर भस्म होगया उस काल जरासिन्धु श्रीकृष्ण बलराम को उस पर्वत के संग जल मरा जान अति सुखमान सब दल साथ ले मथुरापुरी में आया, और वहाँ का राज्य ले नगर ढिंढोरा दे उसनै अपना थाना बैठाय जितनै उग्रसेन बसुदेव के पुराने मन्दिर थे सो सब ढहवाये और उसने अपनेआप अपनै नये मन्दिर बनबाये इतनी कथा सुनाय श्री शुकदेव जी नै राजा से कहा कि महाराज ! इस रीति से जरासंध को धोखा दे श्रीकृष्ण बलरामजी तो द्वारिका जाय बसे, और जरासंधभी मथुरा नगरी से चल सब सेना ले अति आनन्द करता निशंक हो अपने घर आया।

अध्याय–५३

[भगवान का ब्राह्मण द्वारा रुक्मिणी का सन्देशा स्वीकार करना]

श्री शुकदव मुान बोला कि महाराज ! आगेकी कथा सुनिये कि जब काल यवन को मार मुचकुन्द को तार जरासंध को धोखा दे बलदेवजी को साथ ले श्रीकृष्णचन्द्र आनन्दकंद ज्यों द्वारिका को गये त्यों सब यदुवंशियों के जीमेंजी आया और नगरमें सुख छाया सब चैन आनन्दसे पुरवासी रहने लगे इसमें कितने

एक दिन पीछे एक दिन कई एक यदुवंशियों ने राजा उग्रसेन से कहा कि महाराज अब कहीं बलरामजी का ब्याह किया चाहिये क्यों कि ये समर्थ हुए इतनी बातके सुनतेही उग्रसेन ने एक ब्राह्मण को बुलाय अति समझाय बुझाके कहा कि देवता ! तुम कहीं जाकर अच्छा कुल देख बलरामजी की सगाई कर आवो इतनाकह रोरी अक्षत रुपया नरियल दे बिदा किया वह चला २ आर्त देश में राजा रैवतके यहाँ गया और उनकी कन्या रेवती से बलरामजी की सगाई कर लग्न ठहराय उसके ब्राह्मण के साथ टीका लिवाय द्वारिका में राजा उग्रसेन के पास लेआया और उसने वहाँ का सब ब्यौरा कह सुनाया सुनते हो राजा उग्रसेन ने अति प्रसन्न हो उस ब्राह्मण को बुलाया जो टीका ले आया था मङ्गलचार करवाय टीका लिया, और बहुत सा धन दे उसे बिदा किया। पीछे आप सब यदुवंशियों को साथ ले बड़ी धूम धाम से आर्त देश में जाय बलरामजी को ब्याह लाये।

इतनी कथा कह श्रीशुकदेव मुनि ने राजा से कहा कि पृथ्वीनाथ ! इस रीति से तो यदुवंशी ब्याह कर लाये और श्रीकृष्णजी आपही भाई को साथले कुँडिन पुर में जाय भीष्म नरेश की बेटी रुक्मिणी शिशुपाल की माँग को राक्षसों से युद्ध कर छीन लाये घर में आय ब्याह किया, यह सुन राजा परीक्षितने श्रीशुक-देवजी से पूछा कि कृपासिंधु भीष्मक सुता रुक्मिणी को श्रीकृष्णचन्द्र कुंडिनपुर में जाय असुरों को मार किस रीति से लाये सो तुम मुझे समझाकर कहो, श्री शुकदेवजी बोले कि महाराज ! आप मन लगाय सुनिये मैं सब भेद वहाँका समझा कर कहता हूँ कि कुंडिनपुर नाम तहाँ भीष्मक नाम नरेश, जिसका यश छा रहा चहुँदेश में उनके यहाँ जाय श्री सीताजीने अवतार लिया, कन्या के होते ही राजा भीष्मक ने ज्योतिषियों को बुलाय भेजा उन्होंने आय लग्न साध उस लड़की का नाम रुक्मिणी धर कर कहा कि महाराज ! हमारे बिचारों में ऐसा आता है कि यह कन्या अति सुशील स्वभाव रूप निधान गुणों में लक्ष्मी समान होगी और और आदि पुरुष से ब्याही जायगी इतना बचन ज्योतिषी के मुख से निकलते ही राजा भीष्मक ने अति सुख मान बड़ा आनन्द किया और बहुतसा धन ब्राह्मणोंको दिया आगे वह लड़की चन्द्रकला की भाँति दिन २ बढ़ने लगी, और बाल लीला

कर माता पिता को सुख देने लगी इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी ने कहाकि महाराज ! जब यह सखियों के सङ्ग खेलती थी और दिन २ छवि उसकी दूनी होतीथी उस बीच एक दिन नारदजी कुंडिलपुर आये और रुक्मिणी को देख श्रीकृष्णचंद्र जी के पास द्वारिका में जाय उन्होंनै कहा कि महाराज ! कुण्डिलपुरमें जो भीष्मक के घर पर कन्या रूप गुणशील की खानि लक्ष्मी के समान जन्मी है सो तुम्हारे योग्य है। यह भेद नारद मुनि से सुन पाया तभी से रात दिन अपना मन उस पर लगाया, महाराज इसी रीति कर के तो श्रीकृष्णचन्द्र जी ने रुक्मिणी का नाम गुण सुना और जैसे रुक्मिणी नै प्रभु का नाम और यश सुना सो कहता हूँ कि एक समय देश २ कितनै याचकों ने जाय कुण्डिनपुरमें श्रीकृष्णचन्द्रका यश गाया जैसे प्रभुनै वृजमें जन्म लिया और गोकुल बृन्दावन में जाय ग्वाल वालों के सङ्ग मिल बाल चरित्र किया और असुरों को मार भूमि का भार उतार यदुवंशियों को सुख दिया तैसे ही गाय सुनाया।

चौपाई—चढ़ी अटा रुक्मिणी सुन्दरी। हरि चरित्र ध्वनि श्रवणन परी॥
अरज करे भूली मन रहै। फेर उलझ कर देखन चहै॥
सुनके कुँवरि रही मन लाय। प्रेमलता उर उपजा आय॥
भई मगन बिहल सुन्दरी। बाकी सुधि बुधि हरिगुण हरी॥

हरि के चरित्र सुनते ही सब नगर निवासी अति आश्चर्य कर आपस में कहने लगे, कि जिनकी लीला हमके कान से सुनी तिन्हें कब नयनों से देखेंगे इस बीच याचक किसी ढब से राजा भीष्मक की सभा से जाय प्रभु का चरित्र और गुण गाने लगे उस काल—

यों कह श्रीशुकदेवजी बोलेकि, पृथ्वीनाथ! इस भाँति श्री रुक्मिणी जी ने प्रभु का यश और नाम सुना तो उसी दिन से रात दिन आठ पहर चौसट घड़ी सोते जागते बैठते खड़े चलते फिरते खाते पीते खेलते उन्हीं का ध्यान किए रहैं और गुण गाया करें तिन भोरही उठ स्नान कर मिट्टीकी गौर बनाय रोरी अक्षत पुष्प चढ़ाय धूप दीप कर मनाय हाथ जोड़ शिर नवाय कर कहा करै—

मो पर गौरि कृपा तुम करौ। यदुपति पति दे मम दुख हरौ॥

इस रीति से सदा रुक्मिणी रहनेलगी। एक दिन राजा भीष्मक उसे देख अपने मन में चिंता कर कहने लगे कि अब यह हुई ब्याह ने योग्य, इसे शीघ्र ही

न दीजै तो हँसेंगे लोग। कहा है कि जिस के घर में कन्या बड़ी होय तिस का दान, जप, तप करना बृथा है क्यों कि किये से तब तक कुछ धर्म नहीं होता, जब तक कन्या के ऋण से नहीं उबार होय। यों बिचार राजा भीष्मक अपनी सभा में आए तब मन्त्री कुटुम्ब के लोगों को बुलाय बोले भाइयो! कन्या ब्याह के योग्य हुई इसके लिए कहा बर ढूँढना चाहिये। इतनो बात के सुनते ही उन लोगों ने अनेक अनेक नरेशों के कुल, गुण, रूप और पराक्रम कह सुनाए पर राजा भीष्मक के चित्त में किसी की बात कुछ न आई, तब उसका बड़ा बेटा जिस का नाम रुक्म था सो कहने लगा कि पिता! नगर चन्देरी का राजा शिशुपाल अति बलवान है और सब भाँति से हमारे समान है इससे रुक्मिणी की सगाई वहाँ कीजै और जगत में यश लीजै। महाराज! उसकी भी बात राजा ने सुनी अनसुनी की तब रुक्मेश नाम उनका छोटा लड़का बोला—

चौपाई—रुकिमणि पिता कृष्ण को दीजै। बासुदेव से नाता कीजै॥
यह सुन भीष्मक हरषे गात। कही पूत तैं नीकी बात॥
दोहा—छोटे बड़ेन पूछ के, कीजे मन परतीत।
सार बचन गहि लीजिये, यही जगत की रीति॥

ऐसे कह फिर राजा भीष्मक बोले-कि यह तो रुक्मेश ने भली बात कही। यदुबंशियों में राजा शूरसैन बड़े यशी और प्रतापी हुए तिन्हीं के पुत्र बसुदेव हैं ऐसे जो द्वारिकानाथ श्रीकृष्णचन्द्र हैं उन्हें रुक्मिणी दें तो जगत् में यश और बड़ाई लें इतनो बात के सुनते ही सब सभा के लोग अति प्रसन्न हो बोले कि महाराज! यहतो तुमने भली बिचारी ऐसावर घर कहीं और न मिलेगा, इससे उत्तम यही है कि श्रीकृष्णचन्द्र जो को रुक्मिणी ब्याह दीजै। महाराज! जब सभा के लोगों ने यह कहा तब राजा भीष्मक का बड़ा बेटा जिसका नाम रुक्म था सो निपट भुँझलाय कर बोला—

चौपाई—समझ न बोलत महा गँवार। जानत नहिं कृष्ण व्यवहार॥
सोलह वर्ष नन्द के रहयौ। तब अहीर सब काहू कहयौ॥
कामरि ओढ़ी गाय चराई। बन बन बैठि छाक जिनखाई॥

वह तो गँवार ग्वाल है उसकी जाति पाँति का क्या ठिकाना और जिसके माँ बाप का ही भेद नहीं जाना जाता उसे हम पुत्र किसका कहैं, कोई नन्द गोप का

जानता है कोई बसुदेव का कर मानता है, पर आजतक यह भेद किसी से न पाया कि कृष्ण किसका बेटा है,इसी से जो जिसके मन आता है सेा कहता है। हम राजा हते सब कोई जानता मानता है और यदुबंशी राजा कब भये क्या हुआ जो थोड़े दिनों से वल कर उन्होंने बड़ाई पाई। पहला कलंक तो अभी न छूटा कि वह उग्रसेन का चाकर कहाता है उससे सगाई कर क्या हम कुछ संसार में यश पावेंगे, कहा है ब्याह, बर और प्रीति समान से ही करिये तो शोभा पाइये और जोकृष्ण कोदेंगे तो लोग कहेंगे ग्वाल का सारा, तिससे सब जायगा नाम और यश हमारा महाराज! यों कह फिर रुक्म बोला कि नगर चन्देरी का राजा शिशुपाल बड़ा बली और प्रतापी है उसके डरसे सब राजा थर थर काँपते हैं और परम्परासे उस के घर राजगद्दी चली आती है, इससे अब उत्तम यही है कि रुक्मिणी उसी को दीजै और मेरे आगे फेर कृष्ण का नाम न लीजै। इतनी बात के सुनते ही सब सभा के लोग मारे डर के मन ही मन पछता२ के चुप होरहे और राजा भीष्मक तब भी कुछ न बोला इतने में रुक्म ने ज्योतिषी को बुलाय शुभ दिन लग्नठहराय एक ब्राह्मण के हाथ राजा शिशुपाल के यहाँ टीका भेज दिया वह ब्राह्मण टीका लिये चलता २ नगरी चन्देरी में जाय राजा शिशुपाल की सभा में पहुँचा देखते राजा ने प्रणाम कर जब ब्राह्मण से पूछाकि कहो देवता! आपका आना कहाँ से हुआ और यहाँ किस मनोरथके लिये आये हो,तबतो उसे विप्रनेआशीषदे अपने आने का सब ब्यौरा कहा। सुनते ही राजा शिशुपालनेअपने पुरोहित को बुलवाय टीका लिया और उस ब्राह्मण को बहुत सा द्रव्य दे विदा किया। तब ब्याहने चला, उस ब्राह्मण ने राजा भीष्मक से कहा,जो टीका ले गया था वह महाराज! मैं शिशुपालको टीका दे आया वह बड़ी धूम धाम से बरात ले ब्याहने आता है आप अपना कार्य आरम्भ कीजै यह सुन राजा भीष्मक पहले तो निपट उदास हुए पीछे कुछ सोच समझ मन्दिर में जाय उन्होंने पटरानी से कहा वह सुनकर लगीं मङ्गलाचार गाने और कुटुम्ब की रानियों को बुलाय मङ्गलाचार करवाय ब्याह की रीति भाँति करने फिर राजाने बाहर आ प्रधान और मन्त्रियों को आज्ञा दी कि कन्या के विवाह में जो २ वस्तु चाहिए सो २ इकट्ठी करो, राजा की आज्ञा पातेही मन्त्री

और प्रधान ने सब वस्तु की बात की बात में मँगवाय लाय धरीं, लोगोंने देखासुना तो यह चरचा नगर में फैली कि रुक्मिणी का विवाह श्रीकृष्णचन्द्र से होता था सो दुष्ट रुक्म ने होने न दिया अब शिशुपाल से होगा।

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी ने राजा परीक्षित से कहा कि पृथ्वीनाथ! नगर में यह घर घर बात हो रही थी और राज-मन्दिर में नारियाँ गाय बजाय के रीति भाँति करती थीं, ब्राह्मण वेद पढ़ २ टेहलें करावते थे, ठौर ठौर दुन्दुभी बजाते थे दरवाजे दरवाजे पर सपल्लव केला के खम्भ गाढ़ गाढ़ सोने के कलश भर २ लोग धरते थे और तोरण बन्दन बार बाँधते थे और नगर निवासी न्यारे ही हाट बाट चौहटे झार बुहार पाट से पाटते थे। इस भाँति घर और बाहर में धूम मच रही थी कि उसी समय दो चार सखियों ने जा रुक्मिणी से कहा कि-

चौपाई-तोहि रुक्म शिशुपाल दई। अब तू रुक्मिणि रानी भई॥
बोली सोच नायके शीश। मन बच प्रण मेरे जगदीश॥

इतनी कह रुक्मिणी ने अति चिन्ता कर एक ब्राह्मण को बुलाय हाथ जोड़ उसकी बहुत सी विनती और बढ़ाई कर अपना मनोरथ उसे सब सुनाय के कहाकि महाराज! मेरा संदेश द्वारिका में ले जावो और द्वारिकानाथको सुनाय उन्हें साथ ही ले आवो तो मैं बड़ा गुन मानूँगी और यह जानूँगी कि तुमने ही दया कर मुझे श्रीकृष्ण वर दिया। इतनी बात के सुनते ही वह ब्राह्मण बोला कि अच्छा तुम सन्देश कहो, मैं लेकर जाऊँगा और श्री कृष्णचन्द्रजी को सुनाऊँगा। वे कृपानिधान हैं जो कृपा कर मेरे सङ्ग आवेंगे तो ले आऊँगा। इतना बचन जो ब्राह्मण के मुख से निकला त्यों रुक्मिणी ने एक पाती प्रेम रङ्गरातीलिख उसके हाथ दी और कहा कि श्रीकृष्णचन्द्र आनन्द कन्द को पाती दे मेरी ओर से कहियो कि उस दासी ने कर जोड़ अति विनती कर कहा है कि आप अन्तर्यामी हैं, घट घट की जानते हैं जिससे रहे लाज सो कीजै काज और दासी को आप वेग दर्शन दीजै। महाराज! ऐसे कह सुन जब रुक्मिणी ने उस ब्राह्मण को विदा किया, तब वह प्रभु का ध्यानकर नाम लेता द्वारिका को चला।

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेव मुनि बोले कि राजा! ऐसी जो सुहावनी द्वारि-

कापुरी तिसे देखता २ वह ब्राह्मण राजा उग्रसेन की सभा में आशीष देकर पूछाकि श्रीकृष्णचन्द्रजी कहाँ विराजते हैं, तब किसी ने हरि का मन्दिर बताय दिया, यह जो द्वार पर जाय खड़ा हुआ।

कहिये आप कहाँ ते आये। कौन देश की पाती लाये॥

यह बोला मैं ब्राह्मण हूँ और कुण्डिलपुर का रहने वाला हूँ राजा भीष्मक की कन्या रुक्मिणी जी की चिट्ठी श्रीकृष्ण को देने आया हूँ इतनी बात सुनते ही पौरियों ने कहा महाराज! आप मन्दिर में पधारिये श्रीकृष्णचन्द्र सोंहीं सिंहासन पर बिराजते हैं यह बचन सुन ब्राह्मण जो भीतर गया तो हरि ने देखते ही सिंहासन से उतर दण्डवत कर अति आदर मान किया और सिंहासन पर बैठाय चरण धोय चरणामृत लिया और ऐसे सेवा करने लगे जैसे कोई अपने इष्ट देव की सेवा करे। निदान प्रभु ने सुगन्ध उबटन लगाय नहलवाय धुलवाय पहले तो उसे षटरस भोजन करवाये, फिर बीड़ा दे केशर चन्दन से चरच फूलों की माला पहिराय मणिमय मन्दिर में ले जाय एक सुथरे जड़ाऊ छपरखट पै लिटाया। महाराज! वह भी बाट का हारा थका तो था हीं,लेटते ही सुख पाय सो गया। श्रीकृष्णजी कितनी एक बेर तक तो उसकी बात सुनने की अभिलाषा किये वहाँ बैठे मन ही मन बिचार करते रहे कि अब उठे अब उठे।निदानजबदेखा कि न उठा तो आतुर हो उसके पैताने बैठ लगे पाँव दाबने, इसमें उसकी नींद टूटी तो वह उठ बैठा, तब हरिने उसकी क्षेम कुशल पूछी:-

चौपाई-नीके राज देश तुम जानो। हम से भेद कहो आपनो॥
कौन काज यहाँ आमन भयौ। दरश दिखाय हमें सुख दयौ॥

ब्राह्मण बोला कि कृपानिधान! आप मन दे सुनिये मैंअपने आनेका कारण कहता हूँ कि महाराज कुण्डिलपुर के राजा भीष्मक की कन्या ने जब से आपका नाम और गुण सुना है तभी से वह निश दिन तुम्हारा ही ध्यान किये रहती है और कोमल चरणों की सेवा किया चाहती है। संयोग भी आय बना था पर बात बिगड़ गई, प्रभु बोले सो क्या?ब्राह्मण ने कहा-दीनदयाल! एक दिन राजा भीष्मक ने अपने सब कुटुम्ब और सभा में लोगों को बुलाय के कहा कि भाइयो कन्या ब्याह ने योग्य भई अब इसके लिए वर ठहराना चाहिए। इतना बचन राजा

के मुख से निकलते ही उन्होंने अनेक राजाओं के कुल, गुण नाम और पराक्रम कह सुनाया पर इनके मनमें एक न आया, तब रुक्म केशने आप का नाम सुनाया तो प्रसन्न हो राजा ने उसका कहना मान लिया और सबसे कहा, कि भाइयो मेरे मन में तो इसकी बात पत्थर की लकीर हो चुकी तुम क्या कहतेहो! वे बोले महाराज!ऐसा बर घर जो त्रिलोक में ढूँढिएगा तो न पाइयेगा,इससे अब उचित यहीं हैकि बिलम्ब न कीजै शीघ्र श्रीकृष्णचन्द्रजीसे रुक्मिणीका बिवाह कर दीजै महाराज यही बात ठहर चुकी थी इससे रुक्म ने भाँजो मार रुक्मिणी की सगाई शिशुपाल से की, अब वह सब असुरदल साथ ले ब्याह को चला आता है।

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी बोले कि पृथ्वीनाथ! ऐसे उस ब्राह्मण ने समाचार रुक्मिणी जी की चिट्ठी हरि के हाथ दी प्रभु ने अति हित से पाती ले छाती से लगाय लो और पढकर प्रसन्न हो ब्राह्मण से कहा देवता तुम किसी बात की चिन्ता मतकरो,मैं तुम्हारे साथचल असुरोंको मार उनका मनोरथ पूरा करूँगा यह सुन कर ब्राह्मण को तो धीरज हुआ पर रुक्मिणीका ध्यान कर चिंताकरने लगे।

अध्याय–५४

रुकिमणी हरण लीला

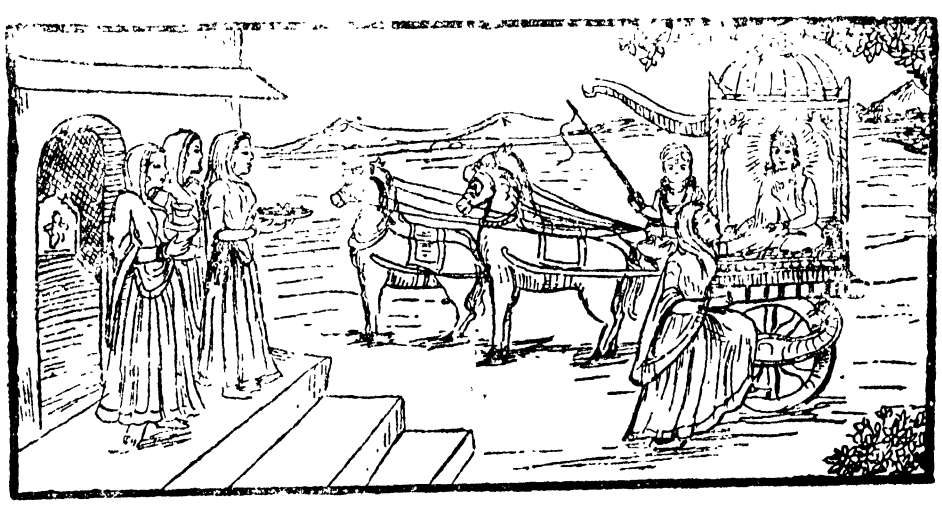

श्री शुकदेव जी बोले राजा ! श्रीकृष्णचन्द्र ने उस ब्राह्मणको ढाँढस बँधा कर कहा–

जैसे घिसते काटते, काठहि ज्वाला जारि। ऐसे सुन्दरि ब्याहहों दुष्ट असुर दल मारि॥

इतना कहा, फिर स्वच्छ वस्त्र आभूषण पहन राजा उग्रसेन के पास जाय हाथ

जोड़ कहा–महाराज ! कुण्डिलपुर के राजा भीष्मक ने अपनी कन्या देने का पत्र लिख कर पुरोहित के हाथ मुझे अकेला बुलाया है, जो आपकी आज्ञा पाऊँ तौ उनकी बेटी ब्याह कर लाऊँ ।

चौ०–सुनकर उग्रसैन यों कहै । दूर देश बसे मन रहे ॥
तहाँ अकेले जाउ न मुरारी । मत काहू से उपजे रारी ॥

तब तुम्हारा समाचार हमें यहाँ कौन पहुँचावेगा,यों कह पुनि उग्रसैन बोलेकि कि अच्छा जो वहाँ जाना चाहतेहो तो अपनी सब सैना साथ ले दोनों भाई जावो और ब्याह कर शीघ्र चले आवो । तुम चिरंजीव हो तो सुन्दरी बहुत आय रहेंगी आज्ञा पाते ही श्रीकृष्णचन्द्र बोले कि महाराज ! तुमनै सच कहा, पर मैं आगे चलता हूँ आप कटक समेत बलरामजी को पीछे से भेज दीजियेगा । ऐसा कहहरि उग्रसेन, बसुदेव से बिदा हो उस ब्राह्मण के निकट आये और रथसमेत अपनेदारुक सारथी को बुलाया वह प्रभु की आज्ञा पाते ही चार घोड़े का रथ तुरन्त जोतलाया तब श्रीकृष्णचन्द्र उस पर चढ़े और ब्राह्मण को पास बिठाय द्वारिका से कुण्डलपुर को चले । जो नगर के बाहर निकले तो देखते हैं कि दाहिनी ओर तो मृगों के झुण्ड चले जाते हैं और सन्मुख से सिंह सिंहनी अपना भक्ष्य लिए गर्जते आते हैं । यह शुभ शकुन देख ब्राह्मण बोला कि महाराज ! इस समय इस शकुनके देखने से मेरे विचार में आता है कि जैसे सिंह अपना काज साधके आते हैं तैसे ही तुम भी अपना काज सिद्ध कर आवोगे, श्रीकृष्णचन्द बोले आपकी कृपा से । इतना कह हरि वहाँ से आगे बढ़े और कुण्डलपुर में जा पहुँचे, तो वहाँ देखें कि ठौर २ ब्याह की सामिग्री धरी हैं तिससे नगर की छवि कुछ और ही हो रही है ।

घर घर में आनन्द हो रहे हैं । महाराज ! यह तो नगर की शोभा थी और राज मन्दिर में जो कुतूहल हो रहा था उसका वर्णन कोई क्या करे वह देखते ही बनि आवै । आगे श्रीकृष्णचन्द्र नै नगर देख राजा भीष्मक की बाड़ी में डेरा किया, वह शीतल छाँह में बैठ ठंडे हो उस ब्राह्मण से कहा कि देवता पहले आने का समाचार रुक्मिणीजी को जा सुनावो जो वे धीरज धरें पीछे वहाँ का भेद हमें आ बताओ, जो हम फिर उसका उपाय करें । ब्राह्मण बोला कृपानाथ आजब्याह का पहला दिन है, राज मंदिर में बड़ी धूमधाम हो रही है, मैं तो जाता हूँ और

रुक्मिणी को अकेली पाय के आने का भेद कहूँगा योंकह वह ब्राह्मण वहाँसे चला महाराज इधर से हरि तौ चुपचाप अकेले पहुँचे और उधरसे राजा शिशुपाल जरासिंधु समेत सब असुर दल लिए इस धूम धाम से आया कि जिसके बोझ से लगा शेषनाग डगमगाने और पृथ्वी हिलने, उसके आने की सुधि पाय राजा भीष्मक मन्त्री और कुटुम्बके लोगों समेत आगे बढ़ गये और बड़े आदर मानसे आगौनी कर सबको पहरानी पहराय रत्नजटित वस्त्र आभूषण और हाथी घोड़ेदे उन्हें नगर में आन जनबासा दिया फिर खाने पीने का सामान किया इतनी कथा सुनाय श्री शुकदेव मुनि बोले कि महाराज अब अन्तर कथा कहता हूँ आप चित्त लगाय सुनिये कि–जब श्रीकृष्ण द्वारिका से चले तिसी समय यदुवंशियों ने जाय वहाँ राजा उग्रसैन से कहा कि महाराज ! हमने सुना है कि कुण्डलपुरमें राजा शिशुपाल जरासिंधु समेत सब असुर दल ले ब्याहने गया है और हरि अकेले गये हैं इससे हम जानते हैं कि वहाँ श्रीकृष्णजी से और उनसे युद्ध होगा। यह बात जानके भी हम अजान हो हरि को छोड़ यहाँ कैसे रहें महाराज ! मनतो मानता नहीं आगे जो आप आज्ञा कीजै सो करें इस बात को सुनते ही राज उग्रसेन ने अति घबराय बलरामजी को निकट बुलाय समझाय के कहा कि तुम हमारी सब सेना ले श्रीकृष्ण के पहुँचते न पहुँचते शीघ्र कुण्डिलपुर में जाओ और उन्हें सङ्ग कर ले आवो राजाकी आज्ञा को पाते ही बलदेव छप्पन करोड़ यादव जोड़ सङ्ग ले कुंडिलपुर को चले। बीच सब दल लिये चले चले कुंडिलपुर हरिके पहुँचते ही बलरामजी भी जा पहुँचे यह सुनाय फिर शुकदेवजी बोलेकि महाराजश्रीकृष्णचन्द्र इसभाँति कुंडिलपुर पहुँचचुकेथेपर रुक्मिणीने आनेका समाचार न पाया–

चौपाई–बिलख बदन चितवे चहुँ ओर। जैसे चन्द्र मलिन भय भोर॥
अति चिंता सुन्दर जिय बाढ़ी। देखें ऊँचे अटा पै ठाढ़ी॥
चढ़ि चढ़ि उझकै खिड़की द्वार। नयनन ते छोड़े जलधार॥
दोहा–बिलख बदन अति मलिन मन, लेत उसास निसास।
व्याकुल बर्षा नयन जल, सोचत कहति उदास॥

कि अबतक क्यों नहीं हरि आये, उनका तो नाम है अन्तर्यामी ऐसी मुझ से क्या चूक पड़ी जो उन्होंने मेरी सुधि न ली क्या ब्राह्मण वहाँ न पहुँचा कि हरिने

मुझे कुरूप जान मेरी प्रतीत न करी, कै जरासिंधुका आना सुन प्रभु न आये, कल ब्याह का दिन है और असुर आय पहुँचा जो वह कल मेरा कर गहेगा तो यह पापी जीव हरि बिन कैसे रहेगा, जप, तप, नेम, धर्म कुछ आड़े न आया अब—

चौपाई—ले बरात आया शिशुपाल । कैसे बिरमें दीन दयाल ॥

इतनी बात जब रुक्मिणी के मुख से निकली तब एक सखी ने तो कहा कि दूर देश बिन पिता बन्धु की आज्ञा हरि कैसे आवेंगे और दूसरी बोली जिनकानाम है अन्तर्यामी दीनदयालु वे बिन आए न रहेंगे रुक्मिणी तू धीरज धर ब्याकुल न हो मेरा मन यह हामी भरता है कि हरि आए महाराज ! ऐसे दोनों आपस में बातें कर रही थीं कि उसी समय ब्राह्मण ने जाय आशीष दे कहा कि श्रीकृष्ण चन्द्र ने आय राजबाड़ी में डेरा किया और सब दल लिए बलदेवजी पीछे आते हैं ब्राह्मण को देखते और इतनी बात सुनते हो रुक्मिणीके जीमें जी आया और इन्होंने उसका ऐसा एक सुख माना कि, जैसे तप का फल पाय सुख माने आगे श्री रुक्मिणी जी हाथ जोर शिर झुकाय बोलीं मुझे प्राणदान दिया मैं इसके पलटे क्या दूँ जो त्रिलोकी की माया दूँ तो भी तुम्हारे ऋण से उद्धार न हो ऐसे कह मन मार सकुचाय रही तब वह ब्राह्मण अति सन्तुष्ट हो आशीर्वाद दे कर वहाँ से उठ राजा भीष्मक के पास गया और उसनै श्रीकृष्ण के आने का ब्यौरा सब समझा के कहा सुनते ही प्रणाम कर राजा भीष्मक उठ धाया और चला २ वहाँ आया जहाँ बाड़ी में कृष्ण बलराम सुखधाम बिराजते थे आतेही साष्टांग प्रणाम कर सन्मुख खड़े हो हाथ जोड़के राजा भीष्मक ने कहा कि—

चौपाई—मो मन क्रम हो तुम हरी । कहा कहों जो दुष्टन करी ॥

अब मनोरथ पूर्ण हुआ जो आपने दर्शन दिया यों कह प्रभु को डेरे कर वाय राजा भीष्मक तो अपने घर आया और चिंता कर ऐसे कहने लगा—

चौपाई—हरि चरित्र जाने नहीं कोई । का जाने कब कैसी होई ॥

और यहाँ श्रीकृष्णचन्द्र वलदेवजी जो थे तहाँ नगर निवासी क्या स्त्री क्या पुरुष आय शिर नाय नाय प्रभु का यश गाय गाय सराहि सरहि आपस में यों कहते थे रुक्मिणी के योग्य वर श्रीकृष्ण ही हैं, बिधना करे यह जोरी जुरे, चिरंजीव रहै इस बीच दोनों भाइयोंके जी में जो कुछ आया तो उस नगर देखनै चले

उस समय ये दौनों भाई जिस हाट बांट चौहटमें होके जाते थे तहीं नर-नारियों के ठट्ट लग जाते थे और इनके ऊपर चोया चन्दन गुलाब नीर छिड़क फूल बरसाय हाथ बढ़ाय २ प्रभु को आपस में यों कह २ बताते थे।

चौपाई-नीलाम्बर औढ़े बलराम। पीताम्बर पहने घनश्याम॥
कुन्डल चपल मुकुट सिर धरे। कमल नयन चाहत हरें॥

और यह देखते जाते थे, निदान सब नगर और राजा शिशुपाल का कटक देखये तौ अपने दलमें आये और इनके आनेका समाचार सुन राजा भीष्मकका बड़ा बेटा अतिक्रोधकर अपने पिताके निकट आकर कहने लगाकि सच कहो श्री कृष्णको यहाँ किसकारण बुलाया गया है यहभेद हमनेनपाया बिनबुलायेकैसेआया।

ब्याह काज है यह सुखधाम। इससे इनकाहै क्या काम॥

ये दोनों कपटी कुटिल जहाँ जाते हैं तहाँ ही उत्पात मचाते हैं जो तुम अपना भला चाहो तो मुझ से सत्य कहो ये किस के बुलाये आये महाराज! रुक्म ऐसे पिता को धमकाय वहाँ से उठ सात पाँच करता वहाँ गया जहाँ राजा शिशुपाल और जरासंध अपनी सभा में बैठे थे और उनसे कहा कि यहा राम कृष्ण आये हैं तुम अपने सब लोगों को जता दो जो सावधानी से रहैं इन दोनों भाइयों का नाम सुनते ही राजा शिशुपाल तो हरि चरित्र को लख व्यवहार जुहार मन हो मन बिचार करने लगा, राजा जरासंध नै कहाकि सुनों जहाँ ये दोनों जाते हैं तहाँ कुछ न कुछ उपद्रव मचाते हैं ये महाबली और कपटी हैं इन्होंने ब्रज में कंसादिक बड़े २ राक्षस सहज स्वभाव ही मारे हैं इन्हें तुम्ह जानो बारे, ये कभी लड़कर नहीं हारे श्रीकृष्ण ने सत्रह बेर मेरा दल हना अब मैं अठारहवीं बेर चढ़ आया तब भाग पर्वत पर चढ़ा जो मैंने उस में आग लगाई तो यह छल कर द्वारिका को चला गया।

इससे अब ऐसा कुछ उपाय कीजिए जिससे हम सबों की पति रहे इतनी बात जब जरासंध ने कही तब रुक्म बोला कि ये क्या वस्तु है जिनके लिए तुम इतने भयभीत हो उन्हें तो भली भाँति से जानता हूँ कि बन २ नाचते गाते वेणु बजाते धेनु चराते फिरते थे बालक गँवार युद्ध विद्या की रीति

क्या जाने तुम किसी बात को चिन्ता अपने मन में मत करो हम यदुवंशियों समेत कृष्ण बलराम को क्षण भर में मार हटावेंगे।

श्रीशुदेवजी बोले कि महाराज! उसी दिन रुक्म तो जरासंध और शिशुपाल को समझाय बुझाय ढाढस बँधाय अपने घर आया और उन्होंने सात पाँच कर रात गँवाई भोर होते ही इधर राजा शिशुपाल और जरासंध तो ब्याह का दिन जान बरात निकालने की धूम धाम में लगे और इधर राजा भीष्मक के यहाँ भी मङ्गलचार होने लगे इतने में रुक्मिणी जी ने उठते ही एक ब्राह्मणके हाथ श्रीकृष्णचन्द्र से कहला भेजा कि, कृपानिधान! आज ब्याह का दिन है दोघड़ी दिन रहे नगर पूर्व देवी का मन्दिर है तहाँ में पूजा करने जाऊँगी आगे एक पहर दिन चढ़े सखी सहेली और कुटुम्बकी स्त्रियाँ आईं उन्होंने आते ही पहले तो आँगन में गज मौतियों का चौक पुरवाय कंचन की जड़ाऊ चौकी बिछाय तिस पर रुक्मिणी को बिठाय सात सुहागनों से तेल चढ़वाय पीछे सुगन्ध उबटन लगाय नहलवाय धुलाय उसे सोलह श्रंगार करवाय आभूषण पहराय ऊपर से राता चोला चढ़ाय बनी बनाय बिठाय इतने में घड़ी चार एक दिन पिछला रह गया उस काल रुक्मिणी अपनी सब सखी सहेलियों को साथ ले बाजे गाजे से देवी की पूजा करने को चली तो राजा भीष्मक ने अपने लोग रखवाली को उसके साथ कर दिये यह समाचार पाय कि राजकन्या नगर के बाहरदेवी पूजने चली हैं राजा शिशुपाल ने भी श्रीकृष्णचन्द्र के डर से अपने बड़े २ सावंत शूरवीर योधाओं को बुलाय सब भाँति ऊँच नोच समझाय बुझाय रुक्मिणी जी की चौकसी को भेज दिया, वे ही आय अपने अस्त्र शस्त्र सँभाल राज कन्या के सङ्ग हो लिये, तिस बिरियाँ रुक्मिणी सब श्रंगार किये सखी सहेलियों के झुण्ड लिये कितनी एक बेर में चलो चली देवीके मन्दिर में पहुँची वहाँ जाय हाथ पाँव धोय आचमन कर श्रद्धा समेत वेद की विधि से देवी की पूजा को पीछे ब्राह्मणियों का इच्छानुसार भोजन करवाय सुथरी तीय लों पहराय रोरीकी खोर काढ़ अक्षत लगाय उन्हें दक्षिणा दी और उन से आशीष ली आगे देवी की परिक्रमा दे हरिके मिलन की चिन्ता किये जो वहाँ से निश्चन्त हो चलने को हुई

तो श्रीकृष्णचन्द्र भी अकेले रथ पर बैठ वहाँ पहुँचे जहाँ रुकिमणी के साथ सब शूर अस्त्र से जकड़े खड़े थे इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले—

दोहा–पूजि गौरि जब ही चली, एक कहत अकुलाय। सुनि सुन्दरि आये हरि देख ध्वजा फहराय

वह बात सखी से सुन प्रभू के रथ की ओर देख २ राजकन्या अति आनन्द कर फूली अङ्ग न समाती थीं और सखो के हाथ पर हाथ दिये मोहनी रूप किये हरि के मिलने की आशा लिये कुछ २ मुस्कराती, ऐसे सब के बीच मन्दगति से जाती थी जिसकी शोभा कुछ वर्णी नहीं जाती अन्तर पट उनके हाथ से छूट पड़े इतने मोहनी रूप से रुक्मिणी जी को जो उन्होंने देखा तो और भी मोहित हो ऐसे शिथिल हुए कि जिन्हें अपने तनमन को भी सुध न थो।

सो०–भ्रकुटी धनुष चढ़ाय, अंजन बरुणी पलक के। लोचन बाण चलाय मारे पै लो बचि सके

महाराज ! उस काल सब राक्षस तो चित्र से खड़े २ देखते ही रहे, और श्रीकृष्णचन्द्रजी सब के बीच रुक्मिणी के पास जा रथ बढ़ाय खड़े हुए प्राणपति को देखते ही उसने सकुच कर मिलने का जो हाथ बढ़ाया तो प्रभू ने बांये हाथ से उठाय उसे रथ पर बैठाया।

चौपाई—काँपत अति सकोच तन भारी। छाँड़ि सवन हरि संग सिधारी॥
ज्यों वैरागी छोड़े गेह। कृष्ण चरन सों करै सनेह॥

महाराज रुक्मिणी जी ने जो जप, तप, व्रत पुण्य किया फल पाया और पिछला दुःख सब गँवाया बैरी अस्त्र शस्त्र लिये खड़े मुख देखते ही रहे प्रभु उनके बीच से रुक्मिणी को ले ऐसे चले कि–

दोहा—ज्यों बहु झुंडिन स्यार के परै सिंह भहराय। अपनी भक्षण लेइ कै, चलै निडर अवराय

आगे श्री कृष्णचन्द्र के चलते ही बलराम भी धोंसा दे सब दलसाथले जामिले।

अध्याय–५५

रुक्मिणी विवाह

श्रीशुकदेवजी बोले कि–महाराज ! कितनी एक दूर जाय श्रीष्णचन्द्रजो ने रुक्मणी को सोच संकोचयुक्त देखकर कहा कि सुन्दरी ! अब तुम किसी बात की चिन्ता मत करो मैं शङ्खध्वनि कर तुम्हारे मनका डर हरूँगा और द्वारका में पहुँच वेद की विधि से बरूँगा यों कह प्रभु ने उसे अपनी माला पहराय बाँई

ओर बैठाय ज्यों शङ्खध्वनि करी त्यों शिशुपाल और जरासंध के साथी चौंक पड़े यह बात सारे नगर में फैल गई कि हरि रुक्मिणी को हरले गये इतने में रुक्मिणी हरण अपने उन लोगोंके मुख से सुना कि जो चौकसी को राजकन्या के संग गये थे शिशुपाल और जरासंध अति क्रोध कर झिलमटोट पहन पेटी बाँध सब

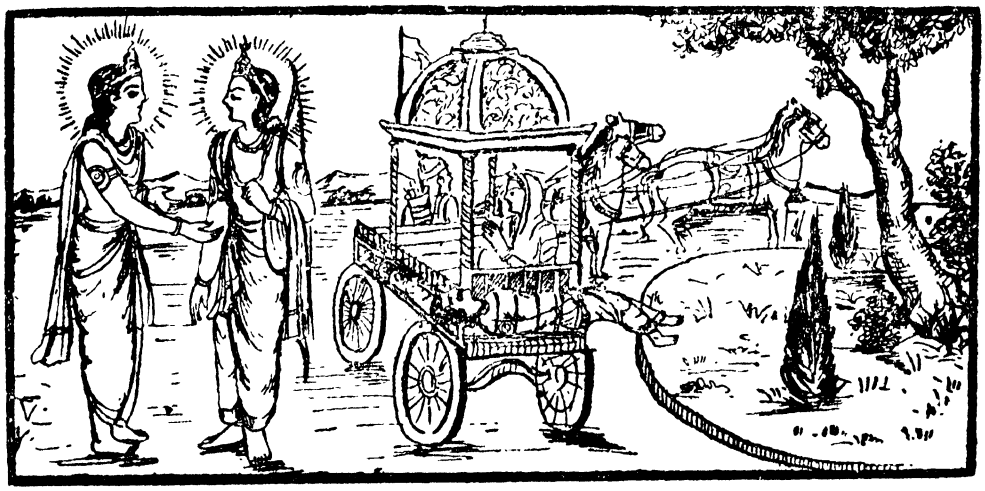

अस्त्र लगाय अपना २ कटक ले के श्रीकृष्ण के पीछे और उनके निकट जाय आयुध सभाल ललकारे अरे ! भागे क्यों जाते हो खड़े रहो अस्त्र पकड़ लड़ो जो क्षत्रीय शूरबीर हैं क्षेत्र में पीठ नहीं देते महाराज ! इतनी बात के सुनते ही यादव फिर सन्मुख हुए अरु लगे दोनों ओर से शस्त्र चलने, उस काल रुक्मिणी अति भयमान घूँघटकी ओट किए आँसू भर लम्बी २ स्वासें लेती थी और प्रीतम का मुख निरख २ मनही मन बिचार यों कहती थी, कि ये मेरे लिए इतना दुख पाते हैं अन्तर्यामी प्रभु रुकिमणी के मन का भेद जान बोले कि सुन्दरी तू क्यों डरती है तेरे देखते ही देखते सब असुर दलको मारि भूमि का भार उतारता हूँ तू अपने मनमें किसी बात की चिन्ता मतकर इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले किराजा! उस काल देवता अपने २ विमानों में बैठ आकाश से देखते क्या हैं कि—

दो०—यादव असुरन सों लरत, होय महा संग्राम।
ठाढ़े देखत कृष्ण हैं, करत युद्ध बलराम॥

मारू बाजा बजता है कढ़खेत कढ़खा खातेहैं चारण यश बखानते हैं अश्वपति अश्वपतिसे रथी से रथी पैदल से पैदल भिड़ रहेहैं इधरके शूरबीर पिल पिल

के मरते हैं और कायर खेत को छोड़ अपना जो ले ले भगतेहै घायल खड़े झूमते हैं कवन्ध हाथों में तलवार लिये चारों ओर घूमते हैं और लोथों पर लोथ गिरतो हैं तिनसे लोहू की नदी बह चली जिससे जहाँ हाथी जो मरे पड़े सो टापू जानते और घोड़े मगर से महादेव भूत प्रेत पिशाच संग लिये शिर चुन २ लोथें खेंच २ लाते और फाड़ खाते हैं गृद्ध श्रगाल कूकर आपस में लड़ २ लोथें खेंच २ लाते और फाड़ खाते हैं और कौवे आँखें निकाल२धड़ां से ले जाते हैं निदान देवताओं के देखते ही देखत बलरामजीने सब असुर दल यों काट डाला ज्यों किसान खेत को काट डाले, आगे जरासन्ध और शिशुपाल सब दल कटाइ कई घायल संगले भाग के एक ठौर जा खड़े रहे तहाँ शिशुपाल ने बहुत पछताय २ शिर डुलाय जरासन्ध से कहा कि अब तो अपयश पाय और कुल को कलंक लगाय संसार में जीना उचित नहीं इससे आप आज्ञा दो तो मैं रणमें जाय लड़ मरूँ ।

चौपाई—नातर हौ करिहौं बनवास । लऊँ योग छाँड़ि सब आस ॥
गई आज पति अब क्यों जी जै । राख प्राण क्यों अपयश लीजै ॥

इतनी बात सुन जरासन्ध बोला कि, महाराज ! ज्ञानवान हो और सब बातें जानते हो मैं तुम्हें क्या समझाऊँ, जो ज्ञानी पुरुष हैं सो गई बात का सोच नहीं करते । यश अपयश पराधीन हैं, जैसे काष्ट की पुतली को नटुआ ज्यों नचाता है त्यों नाचती हैं ऐसे मनुष्य कर्ता के वश में है वह जो चाहता है सो करता है, इससे सुख दुःख में हर्ष शोक न कीजै, सब स्वप्न सा जान लीजै मैं तेईस तेईस अक्षौहिणी ले मथुरापुरी पर सत्रह बेर चढ़ गया और इसी कृष्ण ने सत्रह बेर मेरा दल हना, मैंने कुछ सोच न किया और अठारहवीं बेर जब इसका दल मारा तब कुछ हर्ष भी न किया यह भाग कर पहाड़ पर चढ़ा, मैंने इसे वहीं पर फूंक दिया जानिये यह क्यों कर जिया इसकी गति कुछ जानो नहीं जाती इतना कह फिर जरासन्धु बोला महाराज ! अब उचित यह है कि इस समय को टाल दीजै कहा है प्राण बचै तो पीछे सब हो रहता है । जब जरासन्धने ऐसे समझाय के कहा तब और कुछ धीरज हुआ और जितने घायल योधा बचे थे तिन्हें साथ ले अछताय पछताय जरासंध के सङ्ग हो लिया ये तो यहाँ से यों हार के चले और

शिशुपाल का घर था तहाँ की बात सुनो कि पुत्र के आवने को बिघार शिशुपाल की माँ जो मङ्गलाचार करने लगी तौ सन्मुख छींक भई और दाहिनी आँख फड़कने लगी यह अशगुन देख उसका माथा ठनका कि इस बीच किसी ने आय कहा कि तुम्हारे पुत्र की सब सेना कट गई और दुलहन भी नहीं मिली वहाँ से भाग अपना जीव लिये आता है। इतनी बात को सुनते ही अब शिशुपाल की महतारी अति चिन्ता कर अवाक हो रही आगे शिशुपाल और जरासन्ध का भागना सुन रुक्म अति क्रोध कर अपनी सभा में आन बैठा और सब को सुनाय कहने लगा कि कृष्ण मेरे हाथ से बच कर कहाँ जा सक्ता है? अभी जाय उसे मारूँ रुक्मिणी को ले आऊँ तो मेरा नाम रुक्म नहीं तो फिर कुण्डिलपुर में नहीं आऊँ महाराज! ऐसे कह पैज कर रुक्म सेना ले कृष्णचन्द्र से लड़ने को चढ़ धाया और उसने यादवों का दल जा घेरा, उस काल उसने अपने लोगों से कहा कि तुम तो यादवों को मारो और मैं आगे जाय श्रीकृष्ण को जीता पकड़ लाता हूँ। इतनी के सुनते ही उसके साथी तो यदुवंशियों से युद्ध करने लगे और वह रथ बढ़ाय श्रीकृष्णचन्द्रके निकट जाय ललकार करबोला—अरे कपटी गँवार! तू क्या जाने राज व्यवहार बालापन में जैसे तूने दूध दही की चोरी करी, तैसे तू ने यहाँ भी आय सुन्दरी हरी।

ब्रजबासी हम नहीं अहीर। ऐसे कह कर लीने तीर॥
विष के बुझे लिए उन बान। खेंच धनुष शर छोडे तान॥

उन बाणों को आते देख श्रीमधुसूदन ने बीच ही में काटा, फिर रुक्म ने और बाण चलाये, प्रभु ने वह भी काट गिराये और अपना धनुष सँभाला कई एक बाण मारे कि रथ के घोड़ा समेत सारथी उड़ गया और धनुष उसके हाथ से कट भूमि में गिरा पुनि जितने आयुध उसने लिये हरि ने सब काट गिरा दिये, तब तो वह अति झुँझलाय फरी खाँड़ा उठाय रथ से कूद श्रीहरि की ओर यों झपटा। निदान जाते ही उसने हरि के रथ पै गदा चलाई, कि प्रभु ने झपट उसे पकड़ बाँधा और चाहा कि मारें इतने में रुक्मिणी जी बोली—

मारो मत भैया है मेरो। छाँड़ो नाथ तिहारो चेरो॥
मूरख अन्ध कहा यह जाने। लक्ष्मी काँतहि मानुष माने॥

इतनी कह फिर कहने लगीं कि साधु जड़ और बालक का अपराध मन में नहीं लाते, जैसे कि सिंह श्वान के भूखने पर ध्यान नहीं करता और जो तुम उसे मारोगे तौ होगा मेरे पिता को शोक, यह करना तुम्हें नहीं है योग जिस ठौर तुम्हारे चरण परते हैं तहाँ से सब प्राणी आनन्द में रहते हैं यह बड़े अचरज की बात है कि तुम सा सगा रहते राजा भीष्मक पुत्र का दुख पावें। महाराज! ऐसे कह एक बार तो रुक्मिणी जी यों बोली कि महाराज! तुमने भला हित सम्बन्धी से किया जो पकड़ बाँधा और खडग हाथ में ले मारने को उपस्थितहुए पुनि ब्याकुल हो घबराय आँख डबडबाय बिलख२पाओं पड़ गोद पसार कहने लगीं।

बन्धु भीख प्रभु मोकों देउ। इतनौ यश तुम जग में लेउ।

इतनी बात के सुनने से और रुक्मिणी जी की ओर देखने से हरिका सब कोप शान्त हुआ, तब उन्होंने उसे जीव से तो नहीं मारा पर सारथी को सैनकारा उसने झट उसकी पगड़ी उतार ढूँढ़ना चढ़ाय डाढ़ी और शिर मूँड़ सात चोटी रख रथ के पीछे बाँध लिया। इतनी कथा कह श्री शुकदेव जी बोले कि महाराज!रुक्म की तौ हरि ने यहाँ यह व्यवस्था की और बलदेवजी ने वहाँ सब असुर दल को मार भगाया व भाई को मिलने को चले। निदान कितनी एक देर में प्रभु समीप आय पहुँचे और रुक्म को बाँधा देख हरि से अति भुझलाय के बोलेकि तुमने यह क्या काम किया जो साले को बाँधा तुम्हारी कुटेव नहीं जाती।

बाँध्यौ याहि करी बुधि थोरी। बस तुम कृष्ण सगाई तोरी॥
यों यदुकुल की लीक मिटाई। अब हमसों को करै सगाई॥

जिस समय यह युद्ध करने को आपके सन्मुख आया, तब तुमने इसेसमझाय उलटा क्यों न फेर दिया महाराज! ऐसे कह बलरामजी ने रुक्म को तो खोल समझाय बुझाय शिष्टाचारसे विदा किया फिर हाथजोड़ अति विनतीकर बलराम सुखधाम रुक्मिणी से कहने लगे कि हे सुन्दरी! तुम्हारे भाई की जो यह दशाहुई इसमें कुछ हमारी चूक नहीं यह उसके पूर्व जन्म के किए कर्म का फल है और क्षत्रियों का धर्म भी यही है, कि भूमि धन, स्त्रियों के काज करते हैं युद्ध। तुम अपने भाई के बिरूप होने की चिन्ता मत करो क्योंकि ज्ञानीलोग जीवको अमर और देहको नाशवान कहतेहैं इसलेखे देहकी पतिजाने कुछ जीवकी पतिनहीं गई।

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी ने राजा परीच्छित से कहा कि, धर्मावतार जब बलरामजी ने रुक्मिणीजी को समझाया तब—

घूँघट ओट बदन की करें। सिंधुर बचन हरि सों उच्चरें ॥
सन्मुख ठाढ़े हैं बलदाऊ। अहो कन्थ रथ वेग चलाऊ ॥

इतना बचन रुक्मिणी के मुख से निकलतेही इधरतौ श्री हरि ने रथद्वारिका को हाँका और उधर रुक्म अपने लोगों में जाय अति चिन्ता कर कहने लगाकि मैं कुण्डिलपुर में यह पैज करके आया था कि अभी जाय हरि बलराम को सब यदुवंशियों समेत मार रुक्मिणी को ले आऊँगा सोई मेरा प्रण पूरा न हुआ और उल्टी अपनी पति खोई अब जीवित न रहूँगा इस देश और गृहस्थाश्रमको छोड़ बैरागी हो कहीं जाय मरूँगा, जब रुक्म ने ऐसा कहा तब उसके लोगों में से कोई बोला महाराज ! तुम महाबीर हो और बड़े प्रतापी हो, तुम्हारे हाथ से वे जीते बच गये सो उनके भले दिन थे अपनी प्रारब्धके बल से निकल गये नहींतो आप के सन्मुख हो कोई शत्रु कब जीता बच सकता है। तुम ज्ञानी हो ऐसी बात क्यों बिचारते हो कभी हार होती है कभी जीत पर शूरवीर का धर्म है कि साहस नहीं छोड़े, भला रिपु आज बच गया फिर मार लेंगे, महाराज ! जब यों उननै रुक्म को समझाया तब वह यह कहनै लगा कि सुनो—

हरि सों हार मेरी पति गई। मेरे मन अति लज्जा भई ॥
जीवित नहीं कुंडिनपुर जाऊँ। बरन औरही गांव बसाऊँ ॥
यों कह इन एक नगर बसायो। सुत दारा धन तहां बसायो ॥
ताको धरयो भोजकट नाम। ऐसे रुक्म बसायो ग्राम ॥

महाराज ! उधर रुक्म तौ राजा भीष्मक से बैर कर रहा और उधर श्री हरि और बलदेव चले द्वारिका के निकट आय पहुँचे।

उस काल घर २ मंगलाचार हो रहे थे। राजा उग्रसेन भी सब यदुवंशियों समेत गाजे बाजे से अगारी जाय रीति भाँति कर सुखधाम बलराम श्री कृष्णचंद्र आनन्दकन्द को नगर में ले आये, उस समय के बनाव की छवि कुछ वर्णी नहीं जाती। क्या स्त्री क्या पुरुष सब ही के मन आनन्द छाय रहा था। प्रभु के सों ही आय २ सब भेद दे दे भेंटते थे और नारियाँ अपने २ द्वारों चौबारों कोठों पर से

मंगल गीत गाय २ आरती उतार फूल बरसाती थीं। श्रीहरि और बलदेव जी यथायोग्य सब की अनुहार करते जाते थे, निदान किसी रीति से चले राजमंदिर में जा बिराजे, जहाँ राजा उग्रसेन, शूरसेन बसुदेव आदि सब बड़े यदुवंशी बैठेथे और प्रणामकर इन्होंनै उनके आगे कहा कि महाराज! युद्ध जीतजो कोई सुन्दरी लाता है, राक्षसी विवाह कहाता है, इतनी बात के सुनते ही शूरसेनजी पुरोहित को बुलाय के उसे समझा के कहा कि तुम श्रीकृष्णचंद्र के विवाह का दिन ठहरादो, उसनै झटपत्री खोल भला महीना, दिन, बार, नक्षत्र देख शुभसूर्य चन्द्रमा बिचार ब्याह का दिन ठहरा दिया, तब राजा उग्रसेन नै अपने मंत्रियों को तो यह आज्ञा दी कि तुम ब्याह का सामान इकट्ठा करो और आप बैठ पत्र लिखकर पाँडव आदि सब देश २ के राजाओं को ब्राह्मण के हाथ भिजवाये, महाराज चिट्ठी पाते ही सब राजा प्रसन्न हो २ उठ धाये, जिन्होंने साथ ब्राह्मण पंडित भाट भिखारीभी लिए और वह समाचार पाय राजा भीष्मकनै बहुत वस्त्र अस्त्र, जड़ाऊ आभूषण और रथ, हाथी, घोड़े, दास दासियों के डोले एक ब्राह्मणको दे कन्या दान का सङ्कलप मन ही मन ले अति बिनती कर द्वारका को भेज दिया, इधर देश २ के नरेश आये और उधर राजा भीष्मकका पठाया सब सामान लिए वह ब्राह्मण भी आया उस समय की शोभा द्वारिकीपुरी की कुछ वर्णी नहीं जाती। जब ब्याह का दिन आया तो सब रीति भाँति कर वर कन्या को मण्डप के नीचे लेजा बैठाया और सब बड़े बड़े झुंड यदुवंशियों के भी आ बैठे उस बिरयाँ।

पण्डित जहाँ वेद उच्चारें। रुक्मिणि शङ्ख हरि भाँवरि डारें॥
ढोल दुन्दभी भेरि बजावें। हरषहिं देव पुष्प बरसावें॥

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! जो जन हरि रुक्मिणी का चरित्र पढ़ेगा और सुनेगा और पढ़ सुन के सुमिरन करेगा, सो भक्त मुक्ति फल पावेगा। पुनि जो फल पाता है अश्वमेधादि यज्ञ, गौ आदि दान गङ्गादि तीर्थ के करनें में, सोई फल मिलता है हरि कथा सुनने में।

अध्याय-५६

श्रीशुकदेवमुनि बोले कि महाराज! एक दिन श्रीमहादेवजी अपने स्थान के बीच ध्यान में बैठे थे कि एका एकी कामदेव नै आ सताया तो हरका ध्यान छूटा और

लगे अज्ञान ही पार्वती जी के साथ क्रीड़ा करने, इतने में कितनी एक बेर पीछे शिवजीको केलि चिंतनकर ज्ञान हुआ, तब क्रोध कर कामदेवको जाय भस्मकिया।

दोहा—कामवती जब शिव दह्यो, तब गति धरम न धीर ॥
पति बिन अति तड़फत परी, बिहवल विकल शरीर ॥

हे रति ! तू चिंता मत कर, तेरा पति तुझे जिस भाँति मिलेगा उसका भेद सुन मैं कहता हूँ कि पहले वह श्रीकृष्ण के घर में जन्म लेगा और उसका नाम प्रद्युम्न होगा, पीछे उसे शंबर ले जाय समुद्र में बहा देगा, फिर वह मच्छ के पेट में ही शंबर की रसोई में आवेगा तू वहीं जाय के रह, जब वह आवे तब उसे ले पालियो, पुनि वह शंबरको मार तुझे साथले द्वारिकामें सुखसे जायबसेगामहाराज।

शिव रानी यों रति समझ ई। तब तन धर शंबर ग्रह आई।
नित वह बीच रसोई रहै। निश दिन मारग पिय कौ चहै॥

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोलेकि हे राजा ! इधर रति तो पियाके मिलने की आशा कर यों रहने लगी और उधर रुक्मिणीजी को गर्भरहा और दसमहीनों के पूरे दिनों का पुत्र भया यह समाचार पाय ज्योतिषियों ने अपनी लग्न साधी। श्रीशुकदेवजीने कहा कि महाराज ! इस बालक के शुभ ग्रह देख हमारे विचार में

शिवजी का कामदेव को भस्म करना और प्रद्युम्न नाम से जन्म लेना

यों आता है कि रूप गुण पराक्रम में यह श्रीकृष्णजीके समान होगा, पर बालकपन भर जल में रहेगा, पुनि रिपुको मार स्त्री समेत आ मिलेगा। यों कह श्रीकृष्ण जीसे चतुर ज्योतिषी तो दक्षिणा ले विदा हुये और मङ्गलाचार होने लगे, आगे

श्री नारद मुनि ने आय उसी समय समझाय शंवर से कहा कि तू किस नींद में सोता है तुझे चैन है या नहीं। वह बोला क्या, उन्होंने कहा तेरा बैरी का अवतार प्रद्युम्न नाम श्रीकृष्णचन्द्र के घर में जन्म ले चुका, नारदजी तो राजा शंवर को यों चेताय चले गय और शंवर ने सोच विचार कर मनही मन में यह उपाय ठहराया कि पवन रूप हो वहाँ जाय उसे हर लाऊँ और समुद्रमें बहाऊँ तो मेरे मन की चिन्ता मिटे और निर्भय हो रहूँ, यह विचार शंवर वहाँसे उठ अदृश्य हो चला श्रीहरि के मन्दिर में आया कि जहाँ रुक्मणी अन्तर में हाथों में दबाये छाती से लगाये बालक को दूध पिलाती थी और चुपचाप दृष्टि लगाय खड़ा रहा, ज्यों बालक परसे रुक्मणीजी का हाथ अलग हुआ त्योंही असुरने अपनी माया फैला उसे उठाय ऐसे ले गया कि जितनी स्त्रियाँ वहाँ बैठी थीं तिनमें से किसी ने देखा न जाना कि कौन किस रूप में आया क्योंकर उड़ाय ले गया बालक को आगे न देख रुक्मिणी जी अति घबराई और रोने लगी, उनके रोनेका शब्द सुन सब यदुबंशी क्या स्त्री क्या पुरुष घिर आए और तरह२की बातें कह२चिन्ता करने लगे इस बीच नारद मुनि ने आय उसको समझा कर कहा कि तुम बालक के पाने की कुछ चिन्ता मत करो उसे किसी बात का डर नहीं, वह कहीं जाय पर उसे काल न व्यापेगा और बालापन व्यतीत कर एक सुन्दरी साथ ले तुम्हें आय मिलेगा। महाराज ! ऐसे सब यदुबंशियों का भेद बताय नारद मुनि जब बिदा हुए तब वे भी सोच समझ सन्तोष कर रही। अब आगे को कथा सुनियेकि शंवर जब प्रद्युम्न को लेगया था उसने उन्हें समुद्र में डाल दिया। वहाँ एक मछली उन्हें निगल गई, उस मछली को एक और बड़ी मछली निगल गई। इसमें एक मछुये ने जाय समुद्र में जाल फेंका सो वह मीन जाल में आई, धीमर उस मत्स्य को खेंच अति प्रसन्न होते अपने घर आया। निदान वह मछली उसने जाय राजा शंवर को भेंट दी ! राजाने ले अपने रसोई घर में भेजदी, रसोई करने वाली ने जो उस मछली को चीरा तो उसमें से एक और मछली निकली उसका पेट फाड़ा तो एक लड़का श्याम वर्ण अति सुन्दर उसमें से निकला उसने देखते ही अति अचरज किया और वह लड़का ले जाय रति को दिया, उसने महा प्रसन्न हो ले लिया।

यह बात शंबर ने सुनी तो रति को बुलाय के कहा कि इस लड़के को अच्छी भाँति से पाल ! इतनी बात राजा की सुन रति उस लड़के को ले निज मन्दिर में आई, उस काल नारद जी ने रति से कहा--

अब तू याहि पाल चितलाय, तो पति प्रद्युम्न प्रगटौ आय ।
शाम्बर मार तोहि ले जाय, बालापन यहि ठौर बिताय ॥

इतना भेद बताय नारदमुनि चले गये और रति चित लगाय पालने लगी। ज्यों २वह बालक बढ़ता था, त्यों २ पति के मिलने का चाव होता था,कभी वह उसके रूप का देख प्रेम करके हिय से लगाती थी, कभी दृग मुख कपोल चूम आप ही बिहँसि २ उसके गले लगती थी कि:--

ऐसौ नेम संयोग बनायौ । मछली माँहि कन्त मैं पायौ ॥

आगे जब प्रद्युम्न जी पाँच वर्ष के हुए तब रति अनेक २ भाँति के वस्त्र आभूषण पहनाय अपने मन की साध पूरी करने लगी और नयनों को सुख देने लगी। उस काल वह बालक जो रति का अंचल पकड़ पकड़ माँ २ कहने लगा तो वह हँस कर बोली हे कन्त। तुम यह क्या कहते हो ! मैं तुम्हारी नारी हूँ, गौरी की आज्ञा है कि तुम शंवर के घर में आय रहो, तेरा पति श्रीकृष्ण के घर में जन्म लेगा, सो मछली के पेट में से तेरे पास आवेगा और नारदजी भी कह गये थे कि तेरा स्वामी तुझे आय मिलेगा तभी से मैं तुम्हारे मिलने की आस किये यहाँ बास कर रही हूँ तुम्हारे आने से मेरी आशा पूरी भई। ऐसे कह रतिने फिर पति को सब धनुष विद्या पढ़ाई। जब वे धनुष विद्या में निपुण हुए तब एक दिन रति ने कहा कि स्वामी अब यहाँ रहना उचित नहीं, क्योंकि तुम्हारी माताश्री रुक्मिणीजी तुम बिन ऐसे दुख पाय अकुलाती हैं जैसे बच्छ बिन गाय। इससेअब उचित यह है कि असुर शंवर को मार मुझे सङ्ग ले चलौ। द्वारिका में चल माता पिता का दरशन कीजै। इस रीति रति की बातें सुनते २ प्रद्युम्न जी जब सयाने हुए तब एक दिन खेलते २ राजा शंवर के पास गये, वह इन्हें देखते ही अपने लड़के के समान लाड़ कर बोला कि इस बालक को मैंने अपना लड़का कर पाला है। इतनी बात के सुनते ही प्रद्युम्न जी के अति क्रोध कर कहा कि मैं बालक नहीं हूँ, बैरी हूँ तेरा, अब तू लड़ कर देख बल मेरा। यों सुनाय ताल ठोक

सन्मुख हुए, तब हँसकर शंबर ने कहा कि भाई यह मेरे लिए दूसरा प्रद्युम्न कहाँ से आया ? क्या दूध पिलाय मैंने सर्प पढ़ाया जो ऐसी बातें करता है, इतना कह फिर बोला अरे बेटा तू कहता है ये नैन तुझे यमदूत आये हैं लेने महाराज इतनी बात शंवर के मुख से सुनते ही वह बोला प्रद्युम्न मेरा ही नाम, मुझसे आज तू कर संग्राम, तैंने तो मुझे सागर में बहाया पर अब मैं अपना वैर लैंने आया तूने अपने घरमें अपना काल बढ़ाया अब कौन किसका बेटा कौन किसका बाप।

दोहा—मुनि शम्बर आयुध गहे बढ़्यो क्रोधि मन भाव। मनहुँ सर्प को पूँछ पर पढ़्यो अंधेरेपाँव॥

आगे शंवर अपना दल मँगवाय प्रद्युम्न को बाहर ले आया क्रोधकर गदा उठाय मेघ की भाँति गर्ज कर बोला, देख अब तुझे कालसे कौन बचाता है। इतना कह जो इसने झपट के गदा चलाई तो प्रद्युम्न जीने सहजही काट गिराई फिर उसने रिसाय कह अग्निबाण चलाये, उन्होंने जलबाण छोड़ बुझाय गिराये तब तौ शंवर ने महा क्रोध कर जितने आयुध उसके पास थे सब प्रहार किये और उन्होंने काट काट गिराये, जब कोई आयुध उनके पास न रहा तब क्रोध कर आय प्रद्युम्न जी से जाय लिपटा और दोनोंमें मल्लयुद्ध होने लगा कितनी एक बेर पीछे से उसे आकाश को ले उड़े वहाँ जाय खड्ग से उसका सिर काटगिराय दिया और फिर असुर दल का बध किया शंबर को मरा सुन रति ने सुख पाया और उस समय पर एक बिमान स्वर्ग से आया उस पर रति पति दोनों चढ़ बैठ और द्वारिका को जगाय रहे थे बिमान से उड़ अचानक दोनों रनवास में गये। उन्हें देख सब सुन्दरी चौंक उठीं और यों समझा कि श्रीकृष्ण एक सुन्दरि नारि संग ले आये हैं सकुच रहीं पर यह भेद किसी नै न जाना कि प्रद्युम्न हैं सब कृष्ण ही कृष्ण कहती थीं इतने में प्रद्युम्न जी ने कहा कि हमारे माता पिता कहाँ है तब रुक्मिणी जी अपनी सखियोंसे कहने लगी कि ऐ सखी यह हरिकी अनुहार कौन है वे बोलीं हमारी समझ में तो ऐसा आता है कि हो न हो यह श्रीकृष्ण जी का पुत्र है इतनी बात के सुनते ही रुक्मिणीजीकी छाती से दूध की धार बह निकली और बाईं आँख फड़कने लगी व मिलने को मन घबराया पर बिना पति की आज्ञा मिल न सकी उस काल वहाँ नारद जी ने आय पूर्व कथा कह सब के मनका संदेह मिटाया तब तो रुक्मिणी जी ने शीघ्र दौड़ कर पुत्र का

सिर चूम उसे छाती से लगाया और रीति भाँति से ब्यौहार कर बेटे बहू को घर में लिया उस समय क्या स्त्री क्या पुरुष सब यदुवंशियों ने आय मङ्गलाचार कर अति आनन्द किया घर २ बधाई बजने लगी और सारी द्वारिकापुरी में सुख छाय गया इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी ने राजा परीक्षित से कहा कि महाराज ऐसे प्रद्युम्न जन्म ले बालकपन अन्त बिताय रिपु को मार रति ले द्वारिकापुरी में आये तब घर २ मङ्गल आनन्द हुए बधाए।

अध्याय--५७

श्रीशुकदेव मुनि बोले कि महाराज सत्राजित ने पहले तो श्रीकृष्ण को मणि की चोरी लगाई पीछे झूँठ समझ लज्जित हो उसने अपनी कन्या सत्यभामा हरि को ब्याह दी यह सुन राजा परीक्षित ने श्रीशुकदेवजी से पूछा कि कृपानिधान सत्राजित कौन था मणि उसने कहाँ पाई और कैसे हरि को चोरी लगाई फिर क्यों कर झूँठ समझ कन्या ब्याह दी यह मुझे बुझाय के कहो श्री शुकदेवजी बोले कि महाराज ! सुनिये मैं समझा कर कहता हूँ सत्राजित एक यादव था तिसने बहुत दिन तक सूर्य की अति कठिन तपस्याकी तब सूर्यदेवता ने प्रसन्न हो उसे निकट बुलाय मणि दे कहाकि स्यमंतक मणि इसका नाम है इसमें सुख सम्पतिका विश्राम सदा इसे मानियो और बल तेज में मेर समान जानिया, जो तू इसे जप तप संयम व्रत कर ध्यावेगा तो इससे मन माँगा फल पावेगा। ऐसे कह सूर्यदेवता ने सत्राजित को बिदा किया, वह मणि ले अपने घर आया। जागे प्रातः ही उठ वह स्नान कर

सन्ध्या तर्पण से निश्चित हो नित्य चन्दन अक्षत पुष्प धूप, दीप नैवेद्य सहित मणि की पूजा किया करै और उस मणि से जो आठ भार सोना निकले सो ले और प्रसन्न रहे एक दिन पूजा करते २ सत्राजित ने मणि की शोभा और काँति देख निज मन में बिचारा कि यह मणि श्रीकृष्णचन्द्रजी को लेजा कर दिखाई जावे तो यों बिचार मणि कण्ठ में बाँध सत्राजित यदुवंशियों की सभा में चला। मणिका प्रकाश दूर से देख यदुबंशी खड़े हो श्रीकृष्णचन्द्रजी से कहने लगे कि महाराज तुम्हारे दर्शन की अभिलाशा किये सूर्य चला आता है तुमको ब्रह्मा रुद्र इन्द्रादि सब देवता ध्यावते हैं और आठ पहर ध्यान धर तुम्हारा यश गावते हैं तुम ही आदि पुरुष अबिनाशी तुम्हें नित सेवत कमला भई दासी।

तुम सब देवन के देव। कोई नहीं जानत तुम्हरो भेद ॥
तुम्हरे गुण अरु चरित्र अपार। क्या प्रभु छिपयो आप संसार॥

महाराज जब सत्राजित को आता देख सब यदुवंशी यों कहने लगे तब हरि बोले कि यह सूर्य नहीं सत्राजित यादव है इसने सूर्य की तपस्या कर एक मणि पाई है उसका प्रकाश सूर्य के समान है वह मणि बांधे चला आता है। महाराज इतनी बात जब तक श्रीकृष्णजी कहैं तब तक वह आय सभामें बैठा, जहाँयादव पंसार खेल रहे थे मणि की काँति देख सबका मन मोहित हुआ और श्रीकृष्णचचन्द्र भी देख रहे तब सत्राजित कुछ मन ही मन समझ उस समय बिदा होके अपने घरगया आगे वह मणि गलेमें बाँधि नित आवे, एकदिन यदुवंशियोंने हरिसे कहा कि महाराज सत्राजित से मणि ले राजाउग्रसैन को दीजै और जगत में यशलीजै यह मणि उसे नहीं फबती, यह राजा के योग्य है यह सुनते ही श्रीकृष्णजी हँसते२ सत्राजित से कहा कि, यह मणि राजा को दो और संसार में यश बड़ाई लो देने का नाम सुनते ही वह प्रणाम कर चुपचाप वहाँ से उठ सोच बिचार करता अपने भाई के पास जा बोला कि, आज श्रीकृष्णजीने मुझसे मणिमाँगी और मैंने नदी इतनी बात जो सत्राजित के मुंह से निकली तो क्रोध कर उसके भाई प्रसेनने वहाँ मणि ले अपने गले में डाली और शस्त्र लगाय घोड़े पर चढ़ अहेर को निकला महावन में जाय धनुष चढ़ाय लगा मारने, चित्तल, राढ़े और मृग मारने इतने में एक हिरन जो उसके आगे झपटा तो इसने भी खिजलाके उसके पीछे घोड़ा दिया

और चलाचल अकेला वहाँ जा पहुँचा कि जहाँ युगान युग की एक बड़ी अन्धी गुफा थी, मृग और घोड़ा के पाँव की आहट पाइ उसमें से एक सिंह निकला वह तीनों को मार मणि ले उस गुफा में बढ़ गया मणि के जातेही उस महा अन्धेरी गुफा में ऐसा प्रकाश हुआ कि पाताल तक चाँदनी हो गई वहाँ जामवन्त नाम रीछ जो श्रीरामचन्द्र के साथ रामावतार में था सो पूँछलसे वहाँ कुटुम्बसमेत रहता था वह गुफा में उजाला देख उठ धाया और चला२ सिंहके पास आया फिर वह सिंह को मार मणि ले अपनी स्त्री के निकट गया उसने मणि ले अपनी पुत्री के पालने में बाँधी वह उसे देख नित हँस२खेला करे और सारे स्थान में आठपहर प्रकाश रहै इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज मणि खा गई और प्रसेन की यह गति भई तब प्रसेन के साथ साथ जो लोग गये थे वे आकर सत्राजित से कहने लगे कि महाराज।

हम को त्याग अकेलो धायो। जहाँ गय तहाँ खोज न पायो।
कहत न बने ढूँढ़ि फिर आयो। कहूँ न प्रसेन वन में पायो॥

इतनी बात के सुनते ही सत्राजित वहाँ खाना पीना छोड़ अति उदास हो चिंता कर मन ही मन कहने लगा कि यह बात श्रीकृष्णकी हैजो भाईको मणि के लिये मार के घर में आय बैठा पहले मुझसे मणि माँगता था मैंने न दी अब उसने यों ले ली, ऐसा वह मन ही मन कहैं और रात दिन चिन्तामें रहै एकदिन वह रात्रि के समय स्त्रीके पास सेजपर तन छीण मन मलीन मनमारे बैठा मन ही मन कुछ बिचार करता था कि उस की नारी ने कहा—

चौपाई—कहा कन्त मन सोचत रहौ। मो सों भेद आपनी कहौ॥

सत्राजित बोला कि स्त्रीसे कठिन बातका भेद कहना उचित नहीं क्योंकि उसके पेट में बात नहीं रहती जो घरमें सुनती हैं सो बाहर प्रकाश कर देती है वह अज्ञान है इसे किसी बात का ज्ञान नहीं, भली हो कि बुरी, इतनी बातकेसुनते ही सत्राजित की स्त्री खिजलाकर बोली कि कब कोई बात घर में सुनो बाहरकही है जो तुम कहते हो,सबनारी क्या एकाएक समान हैं? यों सुनाय कहा कि जब तक तुम अपने मनकी बात मेरे आगे न कहोगेतब तक मैं अन्नपानी भी न खाऊँगी यह बचन नारी के सुन सत्राजित बोला कि झूँठ सच की तो भगवान जानैं

मेरे मन में एक बात आई है सो तेरे आगे कहता हूँ परन्तु किसी के सौं ही मत कहियो, उसकी स्त्री बोली अच्छा मैं न कहूँगी, तब सत्राजित कहने लगा कि एक दिन श्रीकृष्णजी ने मुझ से मणि माँगी और मैंने न दी इस से मेरे जी में आता है कि उसी ने मेरे भाई को बन में जाय मारा और मणि ली यह उसी का काम है, दूसरे की सामर्थ नहीं जो ऐसा काम करे, इतनी कथा कह श्रीशुकदेव जी बोले कि महाराज ! इस बात के सुनते ही उसको रात भर नींद न आई और सात पाँच कर रैन गँवाई भोर होते ही उसने जा सखी सहेली और दासियों से कहा कि श्रीकृष्णजी ने प्रसेन को मारा और मणि ली यह मैंने अपने कन्त के मुख से सुनी है परन्तु तुम किसी के आगे मत कहियो वे वहाँ से तो भला कह चुपचाप चली आईं पर अचरज कर एकान्त में बैठ आपस में चर्चा करने लगीं, निदान एक दासी ने यह बात श्रीकृष्णचन्द्र के रनिवास में जा सुनाई, सुनते ही सबके जी में आया कि जो सत्राजित की स्त्री ने यह कहा है तो झूँठी न होगी ऐसे समझ उदास हो सब रनवास श्रीकृष्ण को बुरा कहने लगा इसी बीच में किसी ने आय श्रीकृष्णजी से कहा कि, महाराज ! तुम्हें प्रस्तेन को मारने, और मणि के लेने का कलंक लग चुका, तुम क्या बैठे करते हो कुछ इसका उपाय करो।

इतनी बात के सुनते श्री कृष्ण जी पहले तो घबराये, पीछे कुछ सोच समझ वहाँ आये जहाँ उग्रसेन बसुदेव और बलराम सभा में बैठे थे, और बोले कि महाराज ! हमें यह सब लोग कलंक लगाते हैं कि कृष्ण ने प्रसेन को मार मणि ले ली, इससे आपकी आज्ञा ले प्रसेन और मणि को ढूँढ़ने जाते हैं जिससे यह अपयश छूटै यों कह श्रीकृष्णजी वहाँ से आय कितने एक दूर यदुवंशियों और प्रसेन के साथियों को साथ ले बन को चले कितने एक दूर जाय देखें तो घोड़ेके चरण चिन्ह दृष्टि पड़े उन्हीं को देखते देखते वहाँ जाय पहुँचे जहाँ सिंह ने तुरंग समेत प्रसेन मार खाया था, दोनों की लाश और सिंह के पावों के चिन्ह देख सब ने जाना कि उसे सिंह ने मार खाया पर मणि न पायी श्री कृष्णचन्द्र सब को साथ लिये २ वहाँ गये जहाँ वह ओंड़ी अँधेरी महा भयावनी गुफा थी, उसके द्वार पर देखते हैं कि सिंह मरा पड़ा है पर मणी वहाँ भी नहीं ऐसा अचरज देख सब श्री-

कृष्णजी से कहने लगे कि महाराज ! इस बन में ऐसा कौन बड़ा जन्तु आया जो सिंह को मार मणि ले गुफा में बैठा है अब इसका कुछ उपाय नहीं जहाँ तक ढूँढ़ने का धर्म था अब तक आपने ढूँढ़ा तुम्हारा कलंक छूटा अब नाहर के शिर अपयश पड़ा, श्रीकृष्ण जी बोले चलो इस गुफा में धसके देखें कि नाहर को मार मणि कौन ले गया वे सब बोले कि महाराज ! जिस गुफा का मुख देख हमें डर लगता है उसमें धसेंगे कैसे वरन् हम तुमसे भी विनती कर कहते हैं कि इस महा भयावनी गुफा में आप भी न जाइये अब घर को पधारिये, हम सब मिल नगर में कहेंगे कि प्रसेनको मार सिंह ने मणि ली और सिंह को मार कोई जन्तु एक अति डरावनी और अँधेरी गुफा में गया वह हम सब अपनी आँखों से देख आये, श्रीकृष्णचन्द्रजी बोले मेरा मन मणि में लगा है, मैं अकेला गुफा में जाता हूँ दस दिन पीछे आऊँगा, तुम दस दिन तक यहाँ रहिये इसमें बिलम्ब होय तो घर जाय सन्देश कहियो। इतनी बात कह हरि उस अँधेरी भयावनी गुफा में पैठे, और चले २ वहाँ पहुँचे जहाँ जामवंत सोता था और इसकी स्त्री अपनी लड़की को खड़ी पालने में झुलाती थी, वह प्रभु को देख भय खाय पुकारी जामवन्त जागा तो धाय हरि से लिपटा और मल्ल युद्ध करने लगा, जब उसका कोरे दाँव और बल हरि पर न चला तब मन ही मन बिचार करने लगा कि मेरे बल के तो हैं लक्ष्मणराम और इस संसार में ऐसा बली कौन है जो मुझसे करे संग्राम ? महाराज ! जामवंत मन ही मन हरि आज्ञा से बिचार फेर प्रभु का ध्यान कर बोला—

ठाढ़ौ भयो जोरके हाथ। बोल्यो दरशदेहु रघुनाथ।अन्तर्यामी मैं तुम जाने। लीला देखत ही पहचाने॥
भली करी लीन्हों अवतार। करिहौ दूरि भूमिकौ भार। त्रेतायुग ते ऐहि ठाँरह्यौ।नारदभेदतुम्हारौकह्यौ॥
मणि के कारज प्रभु इत ऐहैं। तब ही तोकौ दरशन देहैं॥

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी ने राजा परीक्षित से कहा कि, हे राजा जिस समय जामवन्त प्रभु को जान यों बखान किया तिस काल श्री मुरारी भक्त हितकारी ने जामवंत की लगन देख मग्न हो राम का वेष धर धनुष बाण ले दर्शन दिया तब जामवंत ने साष्टांग प्रणाम कर खड़े हो हाथ जोड़ अति दीनता से कहा कि कृपासिन्धु ! जो आपकी आज्ञा पाऊँ तो अपना मनोरथ कह सुनाऊँ प्रभु

बोलेअच्छा कह, तब जामबन्त नेकहाकिपतित पावन दीनानाथ दीनबन्धु!मेरेचित्त में ये है कि यह कन्या जामवन्ती आप को ब्याह दूँ और जगत में यश बड़ाई लूँ भगवान ने कहा जो तेरी इच्छा में ऐसा आया तो हमें भी स्वीकार है इतना बचन प्रभु के मुख से निकलते ही जामबन्त ने पहले तो श्रीकृष्ण की चन्दन, अक्षत, धूप, दीप नेवेद्य से पूजा की, पीछे वेद की विधि से अपनी बेटी ब्याहदी और उसके यौतुक में वह मणि भी धर दी।

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेव मुनि बोले कि हे राजा! श्रीकृष्णचन्द्र आनन्दकन्द तो मणि समेत जामवन्ती को ले यों गुफा से चले, और जो यादव गफा के मुँह पर प्रसेन और श्रीकृष्ण के साथी खड़े थे अब निनकी कथा सुनिये,गुफा के बाहर उन्हें जब अट्ठाईस दिन बीते और हरि न आये तब वे वहाँ से निराश हो अनेक २ प्रकार की चिन्ता करते और रोते पीटते द्वारिकामें आए यह समाचार पाय सब यदुबंशी निपट घबराये और श्रीकृष्ण का नाम ले ले महा शोक करने लगे और सारे रनिवास में कोहराम पड़ गया निदान सब रानियाँ अति ब्याकुल हो तन छीन, मन मलीन, राजमन्दिर से निकल रोतीपीटती वहाँ आई जहाँ नगर के बाहर एक कोस पर देवी का मन्दिर था, पूजा कर गौरीको मनाय हाथ जोड़ शिर नाय कहने लगीं हे देवी! तुझे सुरपुर नर मुनि सब ध्यावते हैं, और तुझसे जो बर माँगे हैं, सो पावते हैं तू भूत भविष्य वर्तमान की सब बातें जानती है, सच२ कह श्रीकृष्णचन्द्र आनन्दकन्द कब आवेंगे! महाराज! सब रानियाँ तो देवी के द्वार धरना दे यों मनाय रही थीं, उग्रसेन बलदेव आदि सब यादव महा चिन्ता में बैठे थे कि इसी बीच श्रीकृष्णचन्द्र अविनाशी द्वारिकावासी हँसते२ जामवन्ती को लिये राजसभा में खड़े हुये प्रभु का चंद्रमुख देख सब को आनन्द हुआ और यह शुभ समाचार पाय सब रानियाँ भी देवी पूज घर आईं और मङ्गलाचार करने लगी, इतनी कथा कह श्री शुकदेवजी बोले कि महाराज श्रीकृष्णजी ने सभा में बैठते ही सत्राजित को बुला भेजा और वह मणि देकर कहा कि यह मणि हमने न ली थी तुमने झूंठ मूँठ ही हमको कलङ्क दिया।

चौ०-यह मणि जामवन्त हर लीनो। सुता समेत मोहि तिन दीनी॥
मणि ले तबहि चल्यो शिरनाय। सत्राजित मन सोचत जाय॥

हरि अपराध कियो मैं भारी। अन जाने दीनी कुछ गारी॥
यादव पतिहिं कलंक लगायौ। मणि के काजै बैर बढ़ायो॥
अब यह दोष कटे सो कीजै। सतभामा मणि कृष्णहिं दीजै॥

महाराज ऐसे मन ही मन सोच विचार करता मणि लिये मन मारे सत्राजित अपने घर गया उसने सब अपने जी का बिचार स्त्रीसे कह सुनाया उसकी स्त्री बोली स्वामी यह बात तुमने अच्छी बिचारी सत्यभामा श्रीहरि को दीजे और जगत में यश लीजै इतनी बाता सुनते ही सत्राजित ने एक ब्राह्मण को बुलाय शुभ लग्न मुहूर्त ठहराया रोरी, अक्षत, रुपया, नारियल एक थाली में धर पुरोहित के हाथ श्रीहरिजी के यहाँ टीका भेज दिया श्रीहरि बड़ी धूमधाम से मौहर बाँधि ब्याहने आये, तब सत्राजितने अपनी सब रीति भाँति कर वेदकी विधि से कन्यादान किया और बहुत सा धन दे यौतुक में मणि को भी धर दिया, मणि को देखते ही हरि ने उसे निकाल बाहर किया और कहा कि यह मणि हमारे किसी काम की नहीं है क्यों कि तुमने सूर्य की तपस्या कर पाई, हमारे कुल में श्रीभगवान सिवाय और देवता की दी हुई वस्तु नहीं लेते, यह तुम अपने घर में रक्खो, महाराज श्रीहरि जी के मुखसे इतनी बात निकलते ही सत्राजित मणि ले जाय रहा और श्रीहरि सत्यभामा को ले गाजे बाजे से निजधाम पधारे और आनन्द से सत्यभामा समेत राजमन्दिर में जा बिराजे इतनी कथा सुन राजापरीक्षित ने श्रीशुकदेवजी से पूछा कि कृपा निधान! श्रीहरि को कलङ्क क्यों लगा! सो कृपा कर कहो। शुकदेवजी बोले—

दोहा--चाँद चौथ को देखिये, मोहन भादों मास। ताते लग्यो कलंक यह, अति मन भयो उदास॥

और सुनो—

दोहा०--जो भादों की चौथि को चाँद निहारे कोय। यह प्रसंग कानन सुने ता हि कलङ्क न होय॥

अध्याय—५८

श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! मणि के लिये जैसे शतधन्वा सत्राजित का मार मणि ले अक्रूर को दे द्वारिका छोड़ भागा तैसे मैं यह कथा कहता हूँ तुम चित्त दे सुनो। एक दिन हस्तिानापुर आय किसी ने बलराम सुखधाम और

[श्रीकृष्ण द्वारा पीछे किये जाने पर शतधन्वा का रथ छोड़ कर भागना]

श्रीकृष्णचन्द्र आनन्दकन्द से यह संदेशा कहा कि—

दो०-पांडव न्योते अन्धसुत, घर के बीच सुवाय। अर्द्धरात्रि चहुँ ओर से दीनी आग लगाय॥

इतनी बात के सुनते ही दोनों भाई अति दुख पाय घबराय तत्काल दारुक सारथी से अपना रथ मँगवाय तिस पर चढ़ हस्तिनापुर को गये और रथ से उतर कौरवों की सभा में जाय खड़े भये वहाँ देखते क्या हैं कि सब छबि छीन मन मलीन बैठे हैं दुर्योधन मन ही मन कुछ सोचता है, भीष्म के नयनों से पानी चलता है, बिदुरजी भी पछिताते हैं, गांधारी उनके पास आय बैठी और भी कौरवों की स्त्रियाँ थीं सब पांडवों की सुध कर २ रो रही थीं सारी सभा शोक मय हो रही थी महाराज यहाँ की यह दशा देख श्रीकृष्ण बलराम उनके पास जा बैठे और उन्होंने पाँडवों का समाचार पूछा पर किसी ने कुछ भेद न कहा सबचुपहीरहे।

इतनी कथा कह श्रीशुकदेव जी ने राजापरीक्षित से कहा महाराज श्री कृष्ण बलरामजी तो पाँडवों के जलने का समाचार पाय हस्तिनापुर को गये, और द्वारिका में शतधन्वा नाम एक यादव था कि जिसने पहले सत्यभामा माँगी थी तिसके यहाँ अक्रूर और कृतवर्मा मिलकर गये और दोनों ने उससे कहा कि हस्तिनापुर की ओर गये श्रीकृष्ण और बलराम अब आय पड़ा है तेरा दाँव सत्राजित से अपना वैर ले क्यों कि उसने तेरी बड़ी चूक की जो तेरी माँग श्री कृष्ण को दी और तुझे गाली सुनाई अब यहाँ उसका कोई नहीं सहाई, इतनी बात के सुनते ही शतधन्वा अति क्रोध कर उठा और रात्रि में सत्राजित के घर

जा ललकारा निदान ललकार उसे मार वह मणि लेआया तब शतधन्वा अकेला घर में बैठ कुछ सोच विचार कर मन ही मन पछताय कहने लगा—

यह वैर कृष्ण सों कियौ । मतौ अक्रूर क्रूर मन लियौ ॥

दो०--कृतवर्मा अक्रूर मिल मतौ दिये मोय आय । साधक है जा कपटी तासों कहा बसाय ॥

महाराज इधर शतधन्वा तो इस भाँति अछिताय पछिताय बार २ कहता कि होनहार से कुछ न बसाय कर्म की गति किसी से जानी न जाय और इधर सत्राजित को मरा निहार उसकी रानी रो २ कर कंत कंत कह उठी पुकार, उसके रोने की धनि सुन सब कुटुम्ब के लोग क्या स्त्री क्या पुरुष अनेक अनेक भाँति की बातें कह रोने पीटने लगे और सारे घर में कुहराम पड़ गया पिता का मरना सुन उसी समय सत्यभामा जी आय सबको समझाय बुझाय बाप की लोथ तेल में डलवाय अपना रथ मगवाय तिस पर चढ़ श्री कृष्णचन्द्र आनन्द कन्द के पास चली और रात दिन के बीच जा पहुँची।

देखत ही उठ बोले हरि।घर हैकुशल क्षेमसुन्दरीसतभामा कह जोरे हाथ तुम बिन कुशल कहाँ यदुनाथ। हमहिं विपति सतधन्वाईहमरो पिता हत्यामणि लई धरे तेल में श्वसुर तिहारे ।करो दूर सब शूल हमारे

इतनी बात कह सत्यभामा जी कृष्ण बलदेव जी सोंही खड़ी हो हाय पिता कर धाय मार रोने लगी उनका रोना सुन श्रीकृष्ण बलराम आशा भरोसा दे ढाढस बँधाय वहाँ से साथ ले द्वारिका में आये श्रीशुकदेव जी बोले कि महाराज द्वारिका में आते ही कृष्णचन्द्रजो ने सत्यभामा को महादुखी देख प्रतिज्ञा कर कहा कि सुन्दरी तुम अपने मन में धीरज धरो और किसी बात की चिंता मत करो जो होना था सो हुआ पर अब मैं शतधन्वा को मार तुम्हारे पिता का बैर लूँगा तब मैं और काम करूँगा।

महाराज श्रीकृष्ण के आते ही शतधन्वा अति भय खाय घर छोड़ मन ही मन कहता था कि पराये कहे मैंने श्रीकृष्णजी से बैर किया अब शरण किसकी लूँ कृतवर्मा के पास आया और हाथ जोड़ विनती कर बोला कि महाराज आप के कहने से मैंने किया यह काम, मुझ पर कोपे हैं श्रीकृष्ण बलराम इस से मैं भाग कर तुम्हारी शरण आया हूँ मुझे कहीं रहने को ठौर बताइये, शतधन्वा की यह बात सुन कृतवर्मा बोले कि सुनों हमसे कुछ नहीं हो सकता, जिसका बैर

श्रीकृष्णचन्द्र से भया सो नर सब ही से गया तू क्या नहीं जानता था कि हैं अति बली मुरारी तिन से बैर किये होगी हानि हमारी। किसी के कहने से क्या हुआ अपना बल बिचार काम क्यों न किया संसार की रीति है कि बैर ब्याह प्रीति समान ही से कीजै तू हमारा भरोसा मत रख हम श्रीकृष्णचन्द्र आनन्द कन्द के सेवक हैं उनसे बैर करना हमें नहीं शोभता, जहाँ तेरे सींग समाय तहाँ जा, महाराज ! इतनी बात सुन शतधन्वा निपट उदास हो वहाँ से चल अक्रूर के पास आया और हाथ बाँध सिर नाय विनती कर हा हा खाय कहने लगा—

प्रभु तुम हौ यादव पति ईश। तुम्हें नवावत हैं सब शीश॥
साधु दयाल परम तुम धीर। दुख सह आप हरत पर पीर॥
बचन कहे की जाज है तुम्हें। शरण आपनी राखौ हमें॥

मैंने तुम्हारा ही कहा मान यह काम किया अब तुम हमें कृष्ण के हाथ से बचाओ, इतनी बात के सुनते ही अक्रूर जी ने शतधन्वा से कहा कि बड़ा मूर्ख है जो हमसे ऐसी बात कहता है, क्या तू नहीं जानता कि श्रीकृष्णचन्द्र सब के कर्ता दुख हर्ता हैं ? उनसे बैर कर संसार कब कोई रह सक्ता है,क्या कहने वाले का बिगाड़ ! अब तो तेरे शिर पर आन पड़ी है,सुर नर मुनि की यही रीति स्वारथ लाग करें सब प्रीति, जो काम करें तिसमें पहले अपना भला बुरा बिचार ले पीछे उस काम में पाँव दे तूने बे समझ बूझ किया काम, अब तुझे कहीं जगत में रहने का नहीं है ठाम, जिसने कृष्ण से बैर किया वह फिर न जिया, जहाँ भाग के गया तहाँ मारा गया मुझे मरना नहीं जो तेरा पक्ष करूँ संसार में जीव सबको प्यारा है, महाराज!अक्रूरजी ने जब शतधन्वा को यों रूखे सूखे बचन सुनाए तब तो निराश हो जीने की आशा छोड़ मणि अक्रूरजी के पास रख कर रथ पर चढ़ नगर छोड़ भागा और उसके पीछे रथ पर चढ़ श्रीकृष्ण बलरामजी भी उठ दौड़े और चलते२उसे सौ योजन पर जाय लिया, उनके रथ की आहट पा शतधन्वा अति घबराय रथ से उतर मिथिलापुरी में जा पड़ा, प्रभुने इसे देख कर क्रोध कर सुदर्शन चक्र को आज्ञा की कि तू अभी शतधन्वा का शिर काट, प्रभु की आज्ञा पाते ही सुदर्शन चक्र ने उसका शिर काटा, तब श्रीकृष्णचन्द्र ने उसके पास जाय मणि ढूँढी पर न पाई उन्होंने बलरामजी से कहा कि भाई ! शतधन्वा

को मारा पर मणि न पाई। बलराम जी बोले कि भाई वह मणि किसी बड़े पुरुषने पाई तिसने हमें लाय न दिखाई, वह मणि किसी के पास छिपने की नहीं तुम देखियो निदान कहीं न कहीं प्रगटेगी इतनी बात कह बलदेवजीने श्रीकृष्ण-चन्द्र से कहा कि भाई! अब तुम तो द्वारिकापुरी को सिधारो और हम मणि खोजने को जाते हैं जहाँ पावेंगे तहाँ से ले आवेंगे।

इतनी कथा कह शुकदेवजी ने राजा परीक्षित से कहा कि महाराज श्रीकृष्ण चन्द्र आनन्दकन्द तो शतधन्वाको मार द्वारिकापुरीको पधारे और बलराम मणि को खोजने सिधारे। ढूँढते २ बलदेव जी चले हस्तिनापुर में जा पहुँचे। इनके पहुँचने का समाचार सुन हस्तिनापुर का राजा दुर्योधन उठ धाया, आगे बढ़ भेंट कर दे प्रभु को गाजे बाजे से पाटम्बर के पावड़े डालता निज मन्दिरमें ले आया। सिंहासन पर बिठाय अनेक प्रकार से पूजाकर भोजन करवाय अति विनती कर शिर नवाय हाथ जोड़ सम्मुख खड़ा हो बोला—कृपासिंधु! आपका आना इधर कैसे हुआ सो कृपा कर कहिये। महाराज! बलरामजी ने उसके मन में लगन देख मग्न हो अपने आने का सब भेद कह सुनाया। इतनी बात सुन राजा दुर्योधन बोला कि नाथ! वह मणि कहीं किसीके पास न रहेगी। कभी आपसे आप प्रकाश हो रहेगी। यों सुन फिर हाथ जोड़ कहने लगा दीनदयाल! मेरे बड़े भाग्य जो आपका दर्शन मैंने घर बैठे पाया और जन्म२ का पाप गवाँया! अब कृपा कर हमारे मन की अभिलाषा पूरी कीजै और कुछ दिवस रह शिष्य को गदा युद्ध सिखाय जगत में यश लीजै। महाराज! दुर्योधन से इतनी बात सुन बलरामजी ने उसे शिष्य किया। कुछ दिन वहाँ रह सब गदा युद्ध की विद्या सिखाई पर मणि यहाँ भी सारे नगर में खोजी और न पाई। आगे हरि के पहुँचने के उपरान्त कितने एक दिन पीछे बलरामजी भी द्वारिकानगरी में आये तो यादवनाथ जीने यादवों को साथले सत्राजित को तेल से निकाल अग्नि संस्कार किया और अपने हाथों दाह दिया श्रीकृष्णजी किया कर्म से निश्चिन्त हुए तब अक्रूर व कृतवर्मा कुछ आपस में सोच बिचार कर श्रीकृष्णजी के पास आये उन्हें एकान्त में ले जाय मणि दिखाय कर बोले कि महाराज! यादव सब ही मूरख भये और

माया में मोह गये, तुम्हारा सुमिरण ध्यान छोड़ मदान्ध हो रहे हैं जो ये अब कुछ कष्ट पावें तो प्रभु की सेवा में आवें इसलिये हम नगर छोड़ मणिले भागते हैं जब हम इनसे आपका भजन सुमिरण करावेंगे तभी द्वारिकापुरी में आवेंगे। इतनी बात कह अक्रूर और कृतवर्मा सब कुटुम्ब समेत आधीरात को श्रीकृष्णचन्द्र के भेद से द्वारिकापुरी से भागे ऐसे किसी न जाना कि किधर गए। भोर होते ही सारे नगर में यह चर्चा फैली कि न जानिये रात की रात अक्रूर और कृतवर्मा कुटुम्ब समेत किधर गये और क्या हुए?इतनी कथा कह शुकदेवजी बोले कि महाराज!इधर द्वारिकापुरीमें नित घर२ यह चर्चा होनेलगी,और उधर अक्रूर जी प्रथम प्रयाग में जाय मुन्डन करवाय त्रिवेणी न्हाय बहुत सा दान पुण्य कर तहाँ हरिपोड़ी बँधवाय गया को गये, वहाँ भी फल्गुनदी के तीर बैठ शास्त्रकीरीति से श्राद्ध किया और ग्रामवासियों को जिमाया, बहुत सा दान दिया, पुनि गदा धरके दर्शन करके तहाँसे काशीपुरी में आये, इनके आनेका समाचार पाय इधर उधर के सब राजा आय२मिलकर भेंट धरने लगे और ये वहाँ यज्ञ, दान, तप व्रत कर रहने लगे। इसमें कितने एकदिन बीच श्रीमुरारी भक्त हितकारीने अक्रूरजी को बुलाना जी में ठान बलरामजी से कहा कि भाई अब प्रजा ! को कुछ दुख दीजै अक्रूरजी को बुलाय लीजै। बलदेवजी बोले महाराज ! जो आपकीइच्छा में आव सो कीजै और साधुओं को सुख दीजै। इतनी बात बलराम जी के मुख से निकलते ही श्री यादवनाथ ने कहा कि द्वारिकापुरी में घर २ ताप,तिजारी भिगारो क्षयी, दाद, खाज, आतिश, कोढ़, महाकोढ़, जलन्धर, भगन्धर, कठोदर, अतिसार आँव मरोड़ा, खाँसी, शूल, अर्धाङ्ग, शीतांग, झोलात, सन्निपात, आदि व्याधि फैल गईं और चार महीने वर्षाभी न हुई तिससे सारे नगर की नदी नाले सरोवर सूखगए। तृन अन्न भी न कुछउपजा नभचर थलचर जीवजन्तु पक्षी और ढोर लगे व्याकुल हो सूख२मरने और पुरवासी भूख के मारे त्राहि त्राहि करने, निदान सब नगर निवासी महा व्याकुल हो घबराय श्रीकृष्णचन्द्र दुःखनिन्दनजो के पास आये और अति गिड़ गिड़ाय कर शिर नवाय कहने लगे कि—

हम तो शरण तिहारी रहैं। कष्ट महा अब क्यों कर सहैं॥
मेघ न बरस्यो पीड़ा भई। कहा विधाता ने यह ठई॥

इतना कह फिर कहने लगे कि द्वारिकानाथ हमारे तो तुम्हीं सब कुछ हो, तुम्हें छोड़ कहाँ जाय। यह उपाधि कहाँ से आई और क्यों हुई। सो कृपाकर कहिये।

श्रीशुकदेव मुनि बोले कि महाराज! इतनी बात के सुनते ही श्रीकृष्णजीने उनसे कहा कि सुनो जिसपुर से साधुजन निकल जाता है तहाँ आप से आप आपत्तिकाल दरिद्रदुःख आता है, जबसे अक्रूरजी इस नगर से गये हैं तभी से यह गति हुई हैं। जहाँ रहते हैं साधु सत्यवादी और हरिदास तहाँ होता हैं अशुभ अकाल विपत्ति का नाश इंद्र रखता है हरि भक्तोंका स्नेह इसलिये उस नगर में भली भाँति वर्षता है मेह। इतनी बात के सुनतेही सब यादव बोल उठे कि महाराज! आपने सत्य कहा यह बात हमारे जी में भी आई क्योंकि अक्रूर के पिता का नाम सुफलक है। वह भी बड़ा साधु सत्य बादी धर्मात्मा है, जहाँ वह रहता है तहाँ कभो दुख और दरिद्र नहीं होता है अकाल। सदा समय पर मेघ वर्षा होता है। उससे होता है सुकाल और सुनिये कि एक समय काशीनगरी में बड़ा दुर्भिक्ष पड़ा तहाँ काशी का राजा सुफलकको बुलाय ले गया। महाराज सुफलक के जाते ही उस देश में मेह मन मानता वर्षा मौसम हुआ और सब दुख गया, पुनि काशी नगरी के राजा ने अपनी लड़की सुफलक को ब्याहदी वे आनन्द से वहाँ रहने लगे उस राज कन्या का नाम गोदिना था तिसका पुत्र अक्रूर है। इतना कह सब यादव बोले कि महाराज हम तो यह बात आगे से जानते थे अब जो आप आज्ञा दीजै सो करें श्रीकृष्णचन्द्र बोले कि तुम अति आदर मानकर अक्रूर जी को जहाँ पावो तहाँ से ले आवो। यह बचन प्रभु के मुखसे निकलते ही सब यादव मिल अक्रूर जी के ढूढने को निकले और चल २ बाराणसीपुरी में पहुँचे अक्रूरजी को भेंट दे हाथ जोड़ शिर नाय सन्मुख खड़े हो बोलेः—

चलौ नाथ बोलत बल श्याम। तुम बिन पुरवासी हैं बिराम॥
जितही तुम तितही सुखबास। तुम बिन कष्ट दरिद्र निवास॥
यद्यपि पुर में श्री गोपाल। तऊ कष्ट दे पर्‌यौ अकाल॥
साधुन के बस श्री पति रहैं। तिनके सब सुख सम्पति लहैं॥

महाराज! इतनी बात सुनते ही अक्रूरजी वहाँसे आतुर हो कुटुम्ब समेत कृतवर्मा को साथ ले सब यदुवंशियों को लिये गाजे बाजे से चल खड़े हुए।

और कितने एक दिनों के बीच आ सब समेत द्वारिकापुरीमें पहुँचे। इनके आने का समाचार पाइ श्री कृष्णजो और बलराम आगे बढ़ आय इन्हें अति मान सन्मान से नगर में लिवाय ले गये। हे राजा अक्रूरजो के नगर में प्रवेश करतेही मेघवर्षा का मौसम हुआ, सारे नगरका दुख दरिद्र बह गया और अक्रूरजो की महिमा हुई, वे सब द्वारिकाबासी आनन्द मङ्गल से रहने लगे।

आगे एक दिन श्रीकृष्णचन्द्र आनन्दकन्द ने अक्रूरजी को निकट बुलाय एकान्त में ले जाय के कहा कि तुमने सत्राजित की मणिका क्या किया?वह बोला महाराज मेरे पास है, फिर प्रभु ने कहा कि जिसकी वस्तु तिसको दीजै और वह न होय तो उसके बेटे को सोंपिए बेटा न होय उसकी स्त्रीको दीजै स्त्री न होय तो उसके भाई को दीजे भाई न होय तो उसके कुटुम्बियों को सोंपिये कुटुम्ब भी न होय तो उसके गुरुपुत्रको दीजिये गुरुपुत्र न होयतो ब्राह्मण को दीजिये पर किसी का द्रव्य आप न लीजिये। ये न्याय है इसमें अब तुम्हें उचित है कि सत्राजित का मणि उसके नातो को दो और जगत में बढ़ाई लो। महाराज श्रीकृष्णचन्द्रके मुख से इतनी बात के निकलते ही अक्रूर जो ने मणि लाय प्रभु के आगे धर हाथ जोड़ अति बिनती कर कहा कि दीनदयालु! यह मणि आप लीजिये और मेरा अपराध दूर कोजिये, इस मणिसे मैंने सोना निकाला सो तीर्थयात्रामें उठाया है। प्रभु बोले अच्छा किया यों कह मणि ले हरि ने सत्यभामा को जायदी और उसके चित्त की सब चिन्ता दूर की।

इति श्री लल्लूलालकृते प्रेमसागरे सतधन्वाः वधो अष्टपंचदशोअध्यायः ॥५८॥

अध्याय-५९

[श्रीकृष्ण के अन्य विवाह]

श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! एक दिन श्रीकृष्णचन्द्रने यह विचार किया कि अब चल कर पाण्डवों को देखिये जो आगसे बच जीते जागते हैं।इतनी बात कह हरि द्वारिकापुरी से चल हस्थिनापुर को आये इनके आने का समाचार पाय युधिष्ठिर भीम अर्जुन नकुल सहदेव पाँचों भाई अति हर्षित हो उठ धाये और नगर के बाहर आय मिल बड़ी भाव भक्ति कर लिवाय घर ले गये घर में आते

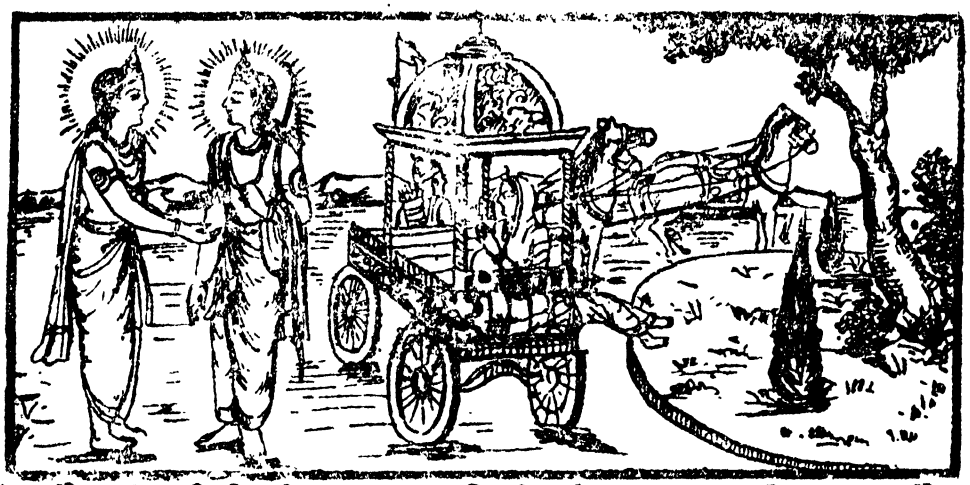

ही कुन्तो और द्रोपदी ने तो सात सुहागिनों को बुलाय मोतियां का चौक पुराय तिस पर कंचन चौकी बिछवाय उस पै श्रीकृष्ण को बिठाय मङ्गलाचार करवाय अपने हाथों आरती उतारी, पीछे प्रभु के पाँव धुलवाय रसोई में ले जाय षटरस भोजन करवाये महाराज ! जब श्रीकृष्णजी भोजन कर पान खाने लगे तब—

कुन्ती ढिग बैठी कह बात । पिता बन्धु पूछत कुशलात ॥
नीके शूरसेन वसुदेव । बन्धु भतीजे अरु बलदेव ॥
तिन में प्राण हमारे रहे । तुम बिन हमन कष्ट दुख सहे॥
जब २ बिपति परी अति भारी । तब तुम रक्षा करी हमारी ॥

महाराज ! जब कुन्ती यों कह चुकी तब युधिष्ठिर ने ऐसे कहा—

तबहिं युधिष्ठिर जोरे हाथ । तुम हो प्रभु यादव पति नाथ ॥
तुमको योगेश्वरनित ध्यावत । शिवविरंचिके ध्यान न आवत ॥
हमको घर ही दर्शन दीन्हौ । ऐसों कहा पुण्य हम कीन्हौ ॥
चार मांस रहि कें सुख देहों । वर्षा ऋतु बीते घर जैहों ॥

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज ! इस बात में सुनते ही भक्त हितकारी श्रीबिहारी सब को आशा भरोसा दे वहाँ रहे और दिन प्रति दिन आनन्द बढ़ाने लगे । एक दिन राजा युधिष्ठिर के साथ श्रीकृष्णचन्द्र, अर्जुन, भीम, नकुल, सहदेव को लिये, धनुष बाण कर गहे रथ पर चढ़ बन में अहेर को गये । वहाँ जाय रथ से उतर फेंटा बाँधे, बाँहें चढ़ाय शर साधे जङ्गल झाड़ २ लगे सिंह, बाघ, गेंड़े, चीतल, साँवर सूकर हरिण, ऋच्छ मार २ राजा युधिष्ठिर के

सन्मुख लाय २ धरने और राजा युधिष्ठिर हँस हँस रीझने लगे और जो जिसका भक्ष्य था तिसे देने, और हरिण सांवर रसोई में भेजने।

तिसी समय श्रीकृष्णचन्द्र और अर्जुन आखेट करते २ कितनी एक दूर सब से आगे जाय एक वृक्ष के नीचे खड़े हुए, फिर नदी के तीर जाके दोनों ने जल पिया। इतने में श्रीकृष्णजी देखते क्या हैं कि नदी के तीर एक अति सुन्दरी नव यौवना, नखशिख से श्रङ्गार किये, अनङ्ग मद पिये महाछवि लिये अकेली फिरती है। इसे देख कर हरि चकित थकित हो बोले महाराज! इतनी बात प्रभू के मुख से सुन और उसे देख अर्जुन हड़बड़ाय दौड़ कर वहाँ गया जहाँ महा सुन्दरी नदी के तीर बिचरती थी और पूछने लगा कि कह सुन्दरी! तू कौन है और कहाँ से आई है, और किस लिये यहाँ अकेली फिरती है? यह भेद अपना सब मुझे समझा कर कह। इतनी बात के सुनते ही—

यदि कोई सुन्दरि बिरहिन अङ्ग। कोऊ नहीं ताहि के सङ्ग॥
सुन्दरि कन्या कहै है अपनी। मैं कन्या मैं सूरज तनी॥
कालिन्दी है मेरौ नाम। पिता दिया जलमें बिश्राम॥
रच्यौ नदी में मन्दिर आय। मोसों पिता कही समझाय॥
कीजो सुता नदी ढिग फेरो। आइ मिलेंगा तहँ बर तेरो॥
यदुकुल माँहि कृष्ण अवतरे। तो माजे हाठ अनुसरे॥
आदि पुरुष अविनाशी हरी। ता काजै तू है अवतरी॥
ऐसे जबहि तात रवि कह्यो। तब ते मैं हरि-पद को चह्यो॥

महाराज! इतनी बात के सुनते ही अर्जुन अति प्रसन्न हो बोले कि हे सुन्दरी! जिनके कारण तू यहाँ फिरती है वे ही प्रभु श्रीकृष्णचन्द्र आय पहुँचे। महाराज! ज्यों अर्जुन के मुँह से इतनी बात निकली त्यों भक्त हितकारी श्री-बिहारी भी रथ पै चढ़ वहाँ जा पहुँचे। प्रभ को देखते ही अर्जुन ने जब उस का भेद सब कह सुनाया तब श्रीकृष्णचन्द्र ने हँस कर झट उसे रथ पर चढ़ाय नगर की बाट ली, जितने में श्रीकृष्णचन्द्र बनसेनगर आये, इतने में विश्वकर्मा ने एक मन्दिर अति सुन्दर सब से निराला प्रभुकी इच्छा देख बनाया, हरि ने आते ही कालिन्दी को वहाँ उतारा और आप भी रहने लगे। आगे कितने एक दिन पीछे एक दिन श्राकृष्णचन्द्र और अर्जुन रात की बिरियाँ किसी स्थान पर बैठे थे कि

अग्नि ने आय हाथ जोड़ शिर नाय हरि से कहा कि महाराज ! मैं बहुत दिन का भूखा सारे संसार में फिर आया पर खाने को कहीं न पाया, अब एक आस आपकी है, जो आज्ञा पाऊँ तो बन जङ्गल जाय खाऊँ । प्रभु बोले अच्छा जाकर खावो फिर अग्नि ने कहा कृपानाथ ! मैं बन में अकेला नहीं जा सकता जो जाऊँ तो इन्द्र आय मुझे बुझाय देगा यह बात सुन श्रीकृष्णचन्द्र नेअर्जुनसे कहा कि बन्धु ! तुम जाय अग्नि को चराय आवो, बहुत दिन से भूखाफिरता है।

श्रीकृष्णचन्द्र के मुख से इतनी बात निकलते ही अर्जुन धनुष बाण ले अग्नि के साथ हुए और अग्नि बन में जाय भड़का और लगे आम,इमली, बड़ पीपल, पाकड़ ताल, तमाल,महुवा, केला, निम्बू ,बेर आदि बृक्ष सबजलनेऔर--

फरकें कांस बांस अति चटकें । बन के जीव फिरें मग भटकें ॥

जिधर देखिये उधर सारे बन में अग्नि हू हू कर जलती है और धुआँ मङ्ग-राय २ आकाश को गया, उस धुये को देख इन्द्र ने मेघपति को आज्ञा दी कि बन के पशु पक्षी जीव जन्तुओंको बचाओ इतनी आज्ञा पाय मेघपति दलबादल साथ ले वहाँ आय घनराय जल वर्षाने लगा तौ अर्जुन ने ऐसे पवन बाण मारे कि बादल राई सा उड़ गया अग्नि बन झाड़ खण्ड जलता २ वहाँ आया कि जहाँ मय नाम असुर का मन्दिर था । अगिन को अति रिसभरा आता देख भय मान नङ्गे पावों हाथ बाँध मन्दिर से निकल सन्मुख आय खड़ा हुआ और साष्टाङ्ग प्रणाम कर गिड़गिड़ाय के बोला हे प्रभु ! इस आग से बचाय बेगि मेरी रक्षा करो।

परयो अग्नि पायो सन्तो । अब न मानों जनि कुछ दोष ॥
मेरी विनती मन में लावो । बैसन्दर से मोहि बचावो ॥

महाराज । इतनी बात मय दैत्य के मुख से निकलते ही अगिन बाण बैस-न्धर ने धरे और अगिन भी सकुच खड़े रहे । निदान वे दोनों को साथ ले श्रीकृ-कृष्णचन्द्र आनन्दकन्द के निकट जा बोले—महाराज ।

यह सब असुर आय हैं काम । तुम्हरे लिय बनहये धाम ॥
अब ही सुधि तुम याकी लेहु । अग्नि बुझाय अभय वरदेहु ॥

इतनी बात कह अर्जुन ने गांडीव धनुष शर समेत हाथ से भूमि में रक्खा तब प्रभु ने आगकी ओर आँख दबाय सन की वह तुरन्त बुझ गया और सारे बनमें

शीतलता हुई, श्रीकृष्णचन्द्र अर्जुन सहित मय को साथले आगे बढ़े, वहाँ जाय मय ने कंचन के मणि मय मन्दिर अति सुन्दर सुहावने मन भावने क्षण भर में बनाय खड़े किए, ऐसे कि जिनकी शोभा कुछ वरणी नहीं जाती। जो देखने को आता सो चकित हो चित्र सा खड़ा रह जाता आगे श्रीकृष्णचन्द्र जी वहाँ चार महीने विरमे थे, पीछे वहाँ से चल वहाँ आये कि जहाँ राज सभा में राजा युधिष्ठिर बैठे थे, आते ही प्रभु ने राजा से द्वारका जाने की आज्ञा माँगी यह बात श्रीकृष्ण के मुख से निकलते ही सभा समेत राजा युधिष्ठिर अति उदास हुए और नगर बासी भी क्या पुरुष क्या स्त्री सब चिन्ता करने लगे निदान प्रभु सब को यथायोग समझाय बुझाय आशा भरोसा दे अर्जुन को साथ ले युधिष्ठिर से बिदा हो हस्तिनापुर से चल हँसते खेलते कितने एक दिनों में द्वारिकापुरी आ पहुँचे इनका आना सुन सारे नगर में आनन्द हो गया और सब का विग्रहः दुख गया। एक दिन श्रीकृष्णचन्द्र ने राजा उग्रसेन के पास जाय कालिंदी का भेद समझा के कहा कि महाराज ! भानुसुता कालिन्दी को हम ले आये हैं तुम वेद की विधि से हमारा उनके साथ विवाह कर दो यह बात सुन उग्रसेन ने मंत्री को बुलाय आज्ञा दी कि तुम अब ही जाय ब्याह की सामिग्री लावो। आज्ञा पाय मंत्री ने विवाह की सामिग्री बात की बात में सब लायदी। तिसी समय उग्रसेन बसुदेवने एक ज्योतिषी को बुलाय शुभ दिन ठहराय श्रीकृष्णचन्द्र का कालिंदी के साथ वेद की विधि से विवाह कर दिया।

इतनो कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी बोले कि राजा ! कालिंदी का विवाह तो यों हुआ। अब आगे जैसे मित्रबिंदा को हरि लाये और ब्याह किया तैसे कथा कहता हूँ तुम चित दे सुनों। शूरसेन जी की बेटी कृष्णकी फूफी जिसका नाम राजाधिदेवी उसकी कन्या मित्रबिंदा जब ब्याहने योग्य हुई, तब उसने स्वयम्बर किया तहाँ सब देश के नरेश, गुणवान, रूप निधान महाराज बलवान अति धीर बन ठन के एक से एक अधिक जा इकट्ठे हुए। यह समाचार पाय श्रीकृष्णजी भी अर्जुन को साथ ले वहाँ गये और जाके बीचों बीच स्वयम्बर में खड़े हुए।

हरषी सुन्दरि देखि मुरारी। बार बार मुख रही निहारी॥

महाराज ! यह चरित्र देख सब देश २ के राजा लज्जित हो मन ही मन

Post Graduate Library

अनखनाने लगे और दुर्योधन ने जाय उस के भाई मित्रसेन से कहा कि बन्धु ! तुम्हारे मामा का बेटा है हरी, तिसे देख भूली है सुन्दरी, यह लोक विरुद्ध रीति है इसके होने से जगत में हँसी होगी, तुम जाय बहन को कहो कि कृष्ण को नहीं बरै, नहीं तो सब राजाओं की भीड़ में हँसी होगी। इतनी बात के सुनते ही मित्रसेन ने जाय बहन को बुझाय करके कहा। भाई की बात सुन समझ जो मित्रबिंदा प्रभु के पास से हट कर अलग दूर हो खड़ी हुई तो अर्जुन ने झुक कर श्रीकृष्ण के कान में कहा कि महाराज ! अब आप किसकी कान करते हो बात बिगड़ चुकी, जो कुछ करना हो सो कीजै बिलम्ब न करिये। अर्जुन की बात सुनते ही श्रीकृष्ण ने स्वयम्बर के बीच से उठ हाथ पकड़ मित्रबिंदा को उठाय रथ हाँक दिया। उस काल सब भूपाल तो अपने शस्त्र ले ले घोड़ों पर चढ़ २ प्रभु का आगा घेर लड़ने को खड़े हुए और नगर निवासी लोग हँस हँस तालियाँ बजाय गालियाँ दे दे यों कहने लगे।

फूफी सुता को ब्याहन आयो। यह तुम कृष्ण भलौ यश पायो॥

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेव जी बोले कि महाराज ! जब श्रीकृष्ण जी ने देखा कि चारों ओर से जो असुर दल घिर आया है सो लड़े बिना ना रहेगा ! तब उन्होंने कईएक बाण निषंग से निकाल धनुष तानऐसे मारे किसब सेना असुरों की छाती छीन हो वहाँ की वहीं बिलाय गई और प्रभु आनन्द सेद्वारिका पहुँचे।

श्रीशुकदेव जी बोले कि महाराज ! श्रीकृष्णजी ने मित्रबिंदा को तो यों ले जाय द्वारिका में ब्याहा। अब आगे जैसे सत्या को प्रभु लाए सो कथा कहता हूँ। तुम चित्त लगाय सुनो। कौशल देश में नग्नजीत राजा ने सात बैल ऊँचे भयावने बिन नाथे मगवाय यह प्रतिज्ञा कर देश में छुड़ाय दिये कि जो इन बृषभों को एक बार में नाथ लायेगा उसे मैं अपनी कन्या ब्याह दूँगा। महाराज वे सातों बैल शिर झुकाये पूँछ उठाये भू खूंद २ डकराते फिर और जिसे पावें तिसे हनें, आगे यह समाचार पाय श्रीकृष्णचन्द्र अर्जुन को साथ ले वहाँ गये और जो राजा नग्नजीत के सन्मुख खड़े हुए, इनको देखते ही राजा सिंहासन से उतर प्रणाम कर इन्हें सिंहासन पर बैठाय चंदन अक्षत पुष्प चढ़ाय धूप दाप कर नैवेद्य आगे धर, हाथ जोड़ शिर नवाइ अति विनती कर बोला कि

आज मेरे भाग्य जागे, जो प्रभु मेरे घर आये यों सुनाय फिर बोला कि महाराज! मैंने एक प्रतिज्ञा की है सो पूरी होनी कठिन थी पर अब मुझे निश्चय हुआ कि वह आपकी कृपा से पूरी होगी प्रभु बोले ऐसी तूने क्या प्रतिज्ञा की है, कि जिसका होना कठिन है। तब राजा ने कहा कृपानिधान! मैंने सात बैल बिन नाथे छुड़वाय यह प्रतिज्ञा की है कि जो सातों बैलों को एक बेर में नाथेगा उसे मैं अपनी कन्या ब्याहूँगा श्रीशुकदेव जी बोले कि महाराज।

सुन हरि फेंटि बांधि तहँ गये। सात रूप धरि ठाढ़े भये॥
काहु न लख्यौ अलख ब्यौहार। सातों नाथे एकहि बार॥

वे बृषभ नाथने के समय ऐसे खड़े रहे कि जैसे काष्ट के बैल खड़ होंय प्रभु सातों को नाथ एक रस्सी में बाँध राज सभा में ले आये। यह चरित्र देख नगर निवासी तो सब क्या स्त्री क्या पुरुष अचरज कर धन्य २ कहने लगे और राजा नग्नजीत ने उसी समय पुरोहित को बुलाय वेद की विधि से कन्यादान किया, तिसके दहेज में दस सहस्र गाय, नौ लाख हाथी, दस लाख घोड़े, तिहत्तर लाख रथ दे दास दासी अनगिनत दिये। श्रीकृष्णचन्द्र सब ले जब यहाँसे चले, तब खिसयाय सब राजाओं ने प्रभु को मारग में आय घेरा तहाँ मारे बाणों के अर्जुन नै सबको मार भगाया हरि आनन्द मंगल से सब समेत द्वारिकापुरी में पहुंचे। उस काल सब द्वारिकावासी आगे आय प्रभु को बाजे गाजे से पाटम्बर के पांवड़े डालते राज मन्दिर में ले गये और यह कौतुक देख सब अचम्भे में रहे।

नग्नजीत की करी बड़ाई। कहत लोग यह बड़ी सगाई॥
भलो ब्याह कोशलपति कियो। कृष्णहि इतो दायजो दियो॥

महाराज! नगर निवासी तो सब ढब की बातें कर रहे थे कि उसी समय श्रीकृष्णचन्द्र और बलराम जी ने वहाँ आके राजा नग्नजीत का दिया हुआ सब दायजा अर्जुन को दिया और जगत में यश लिया, आगे जब जैसे श्रीकृष्ण जी भद्रा का ब्याह लाये सो कथा कहता हूँ तुम चित्त लगाय निश्चन्त हो सुनो। केकय देशके राजा ने बेटी भद्रा का स्वयंबर किया देश २ के नरेशों को पत्र लिख भेजा, वे आय इकठ्ठे हुए, तहाँ श्रीकृष्णचन्द्रजी भी अर्जुन को साथ लेकर गये, और स्वयंबर के बीच सभा में जाय खड़े। जब राजकन्या माला हाथ में लिए सब

राजाओं को देखती भालती रूप सागर जगत उजागर श्रीकृष्णचन्द्र के निकट आई तो देखते ही भूल रही और माला उनके गले में डालदी। यह देख उसके माता पिता ने प्रसन्न हो वह कन्या हरि को वेद की विधि से ब्याह दी उसके दायजे में बहुत कुछ दिया कि जिसका पारावार नहीं। इतनी कथा कह श्रीशुकदेव जी बोले महाराज! श्रीकृष्णचन्द्रजी भद्रा को तो यों ब्याह लाये फिर प्रभु ने लक्ष्मणा को ब्याहा सो कहता हूँ तुम सुनो। भद्र देश के नरेश अति बली और प्रतापी तिसकी कन्या लक्ष्मणा जब ब्याहने योग्यहुई तब उसने स्वयम्बर को चारों दिशाओं के नरेशों को पत्र लिख लिख बुलवाया व अति धूमधाम से अपनी २ सेना सजा२ वहाँ आये और स्वयम्बर के बीच बनाव से पाँति की पाँति जा बैठे। श्रीकृष्णचन्द्रजी भी अर्जुन को साथ ले तहाँ गए और खुद स्वयम्बर बीच जा खड़े हुए, तो लक्ष्मणा ने सबको देख आ श्रीकृष्ण जी के गले में माला डाली उसके पिताने वेदकी विधिसे प्रभु के साथ लक्ष्मणा का ब्याह कर दिया। सब देश देश के नरेश वहाँ आये थे सो महा लज्जित हो आपस में कहने लगे कि देखेंगे हमारे होते किस भाँति कृष्ण लक्ष्मणा को ले जाता है, ऐसे कह वे सब अपना२ दल साज मार्ग रोक जा खड़े हुए। ज्योंही श्रीकृष्णचन्द्र और अर्जुन लक्ष्मणा समेत रथ ले आगे बढ़े त्यों ही उन्होंने इन्हें आय रोका और युद्ध करने लगे। निदान एक बेर में मारे बाणों के अर्जुन और श्रीकृष्णजीने सबको मार भगाया और आप आनन्द मङ्गल से नगर द्वारिका पहुँचे इनके जाते ही सारे नगर में घर घर आनन्द व तरह तरह के मंगल होने लगे।

भई बधाई मङ्गलचार। कीन्हो वेद रीति व्यौहार॥

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! इस भाँति श्रीकृष्ण जी पाँच ब्याह कर लाये तब द्वारिका में आठों पटरानियाँ समेत सुख से रहने लगे और पटरानियाँ आठौ पहर सेवा करने लगीं। पटरानियोंके नाम रुक्मिणी, जाम-वन्ती, सत्यभामा, कालिंदी, मित्रविंदा, सत्या, भद्रा व लक्ष्मणा हैं।

इति श्रीलल्लूलाल कृते प्रेमसागरे श्रीकृष्ण पंच विवाह वर्णनो नाम उनसठवाँ अध्यायः॥५९॥

अध्याय—६०

श्रीशुकदेवजी बोले कि हे राजा एक समय पृथ्वी धनुष तनु धारण कर, अति

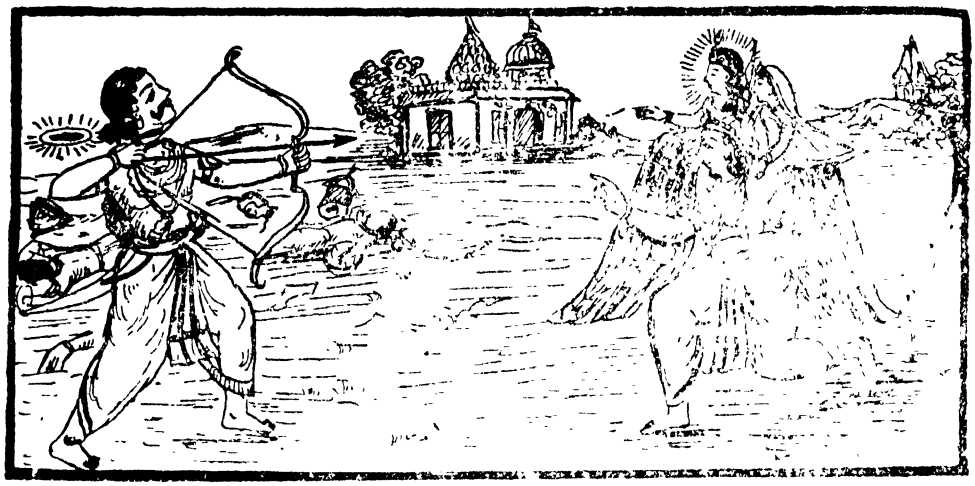

श्रीकृष्ण भौमासुर संग्राम

कठिन तप करने लगी तहाँ ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, इन तीनों देवताओं ने आ उससे पूछा कि तू किस लिये इतनी कठिन तपस्या करती है?धरती बोली कृपानिधान! मुझे पुत्र की वासना है इस कारण महा तपस्या करती हूँ दया कर मुझे एक पुत्र अति बलबन्त महा प्रतापी बड़ा हो ऐसा कि जिसका सामना संसार में कोई न करे। न वह किसी के हाथ से मरे यह बचन सुन प्रसन्न हो तीनों देवताओं ने वर दे उससे कहा कि तेरा सुत नरकासुर नाम का अति बली महाप्रतापी होगा, उससे लड़कर कोई न जीतेगा वह श्रष्टि के सब राजाओं को जीत अपने वश करेगा। स्वर्ग लोक में जाय देवता वर्गको मार भगाय अदिति के कुण्डल छीन आप पहनेगा। और इन्द्रका छत्र छिनाय लाय अपने शिरधरेगा संसारके राजाओं की कन्या सोलह सहस्र एक सौ लाय अन ब्याही घर में रखेगा तब श्रीकृष्ण-चन्द्र अपना सब कटक ले उस पर चढ़ जाँयगे। और उनसे तू कहेगी इसे मारो, पुनि वे मार सब राज कन्याओं को ले द्वारिकापुरी को पधारेंगे।

इतनी कथा कह श्राशुकदेवजी ने राजा परीक्षित से कहा कि महाराज!तीनों देवताओं ने जब यों कहा तब भूमि इतना कह चुप हा रही कि मैं ऐसी बात क्या कहूँगी कि मेरे बेटे को मारो। आगे कितने एक दिन पीछे भूमि पुत्र भौमासुर हुआ तिसी का नाम नरकासुर भी कहतेहैं। वह प्राज्योतिप पुर में रहन लगा उस पुर के चारों ओर पहाड़ की ओट और जल अग्नि पवन की काट बनाय सारे संसार

के राजाओं की कन्या बल कर छीन छीन धाय समेत लाय लाय उसने वहाँ रक्खी नित उन सोलह सहस्र एक सौ राजकन्याओं के खाने पीने पहनने की चौकसी किया करे। और बड़े यत्न से उन्हें पलवावै, एक दिन भौमासुर अति कोप कर पुष्पक विमान में बैठ जो लङ्का से लाया था सुरपुर में गया और लगा देवताओं को सताने उसके दुःख से देवता स्थान छोड़ २ जीव अपना लेले के जिधर तिधर भाग गये। तब वह अदिति के कुण्डल और इन्द्र का छत्र छीन लाया और तब सृष्टि के सुर नर, मुनियों को अति दुख देने लगा। उसका सब कारण सुन श्रीकृष्णचन्द्र जग बन्धु जी ने अपने मन में कहा—

बाहि मारि सुन्दरि सब लाऊँ। सुरपति छत्र तहाँ पहुँचाऊँ॥
जाय अदिति के कुण्डल दैहौं। निर्भय राज्य इन्द्र को लैहौं॥

इतना कह पुनि श्री कृष्णचन्द्र जी ने सत्यभामा से कहा हे नारि! तू मेरे साथ चल तो भौमासुर मारा जाय क्यों कि तू भूमि का अंश है इस लेखे उनकी माँ हुई, जब देवताओं ने भूमि बर दिया था तब यह कह दिया था कि, जब तू मारने को कहेगी तब तेरा पुत्र मरेगा, नहीं तो किसी से किसी भाँति मारा न मरेगा, इस बात के सुनते ही सत्यभामा जी कुछ मन हो मन सोच समझ इतना कह अनमनी हो रही कि महाराज! मेरा पुत्र आपका सुत हुआ उसे क्यों कर मारोगे। प्रभु ने उस बातको टालके कहा कि, उसके मारनेकी तो मुझे कुछ चिंता नहीं पर एक समय मैंने तुझे बचन दिया था तिसे पूरा किया चाहता हूँ सत्यभामा बोली सो क्या! प्रभू कहने लगे कि एक समय नारदजी ने आय मुझे कल्पबृक्ष का फूल दिया वह ले मैंने रुक्मिणी को भेजा यह बात सुन तू रिसाय रही, तब यह प्रतिज्ञा करी कि तू उदास मत हो, मैं तुझे कल्पबृक्ष ला दूँगा सो अपना बचन प्रतिपालने को और स्वर्ग दिखाने को साथ ले चलना हूँ इतनी बात के सुनते ही सत्यभामा जी प्रसन्न हो हरिके साथ चलने को उपस्थित हुईं तब प्रभु उसे गरुड़ पर अपने पीछे बैठाय साथ ले चले, कितनी एक दूर जाय श्रीकृष्णचन्द्र जी ने सत्यभामा से पूछा सत्य कह सुन्दरी इस बात को तू पहले क्या समझ अप्रसन्न हुई थी उसका भेद मुझे समझाय के कह। जो मेरे मन का सन्देह जाय, सत्यभामा बोली महाराज! तुम भौमासुर को मार सोलह सहस्र एक सौ राज-

कन्या लाओगे तिन में मुझे भी गिनोगे यह समझ अनमनी हुई थी श्रीकृष्ण बोले कि तू किसी बात की चिन्ता मत कर मैं कल्पवृक्ष लाय तेरे घर रखूँगा और तू उसके साथ मुझे नारद मुनि को दान कीजो फिर मोल ले मुझे अपने पास रखना मैं तेरे सदा आधीन रहूँगा ऐसे ही इन्द्रानी ने इन्द्र का वृक्ष के साथ ही दान किया था और अदिति ने कश्यप को, इस दान के करने से कोई रानी तेरे समान मेरे प्रिय न होगी। महाराज इस भाँति की बातें कहते २ श्रीकृष्ण जी प्राज्योतिषपुर के निकट जो पहुँचे वहाँ पहाड़ का कोट, अग्नि, जल पवन की ओर देखते ही प्रभू ने गरुड़ और सुदर्शन चक्र को आज्ञा दी उन्हों ने पल भर में धाय २ बुझाय बहाय और अच्छा पंथ बनाय दिया ज्यों ही हरि आगे बढ़ नगर में जानै लगे त्यों ही गढ़ रखवाले दैत्य लड़ने को चढ़ आये, प्रभू ने तिन्हें गदा से सहजही में मार गिराया उनके मरनै का समाचार पाय मुर नामक राक्षस पाँच शीश वाला जो इस पुर गढ़ का रखवाला था सो आ क्रोधकर त्रिशूल हाथ में ले श्रीकृष्णजी पर क्रोधकर बढ़ा और आँखें लालकर दाँत पीसकर कहने लगाकि–

मोते बली कोन जग और । वाहि देखिहौ मैं वहि ठौर ॥

महाराज! इतना कह मुर दैत्य श्रीकृष्णचन्द्र पर यों झपटा कि ज्यों गरुड़ सर्प पर झपटे, आगे उसने त्रिशूल चलाया सो प्रभु ने चक्र से काट गिराया फिर खिसयाय मुर ने जितने शस्त्र हरि पर घाले, जिनको प्रभु ने सहज ही काट डाले, पुनि वह हकबकाय दौड़ कर प्रभु से आय लिपटा और मल्ल युद्ध करने लगा कितनी एक वेर में युद्ध करते२ श्रीकृष्णजी ने सत्यभामा को महा भयभीत जान सुदर्शन चक्र से उसके पाँचों शिर काट डाले धड़ के गिरतेही धमक्का सुन भौमासुर बोला कि यह अति शब्द काहे का हुआ इस बीच किसी ने जाके सुनायाकि महाराज! श्रीकृष्ण नै आय मुर दैत्य को मारडाला इतनी बातके सुनते ही प्रथम तौ भौमासुर नै अपने सेनापति को युद्ध करनेका आयसुदिया वह सब कटक सजा लड़ने को गढ़ के द्वार पर जा उपस्थित हुआ। और पीछे अपने पिता का मरना सुन मुर के सात बेटे जो अति बलवान और योद्धा थे सो अनेक प्रकार के अस्त्र शस्त्र धारण कर श्रीकृष्णजी से लड़ने को सन्मुख जा खड़े हुए, पीछे से भौमासुर ने अपने सेनापति और मुर के बेटों से कहला भेजाकि तुम सावधानीसे युद्ध करो

मैं अभी आता हूँ लड़ने की आज्ञा पाते ही सब असुर दल साथ ले मुर के बेटों समेत भौमासुर का सेनापति श्रीकृष्ण जो से युद्ध करने को बढ़ आया और एका-एकी प्रभु के चारों ओर सब कटक दल बादर सा जाय छाया सब ओर से अनेक अनेक प्रकारकेअस्त्र भौमासुरके शूर श्रीकृष्णचन्द्र पर चलातेथे औरवे सहजस्वभाव ही काट काट ढेर करते जाते थे। निदान हरिने सत्यभामाजीको महा भयातुर देख असुर दल को मुर के सातों बेटों समेत सुदर्शन चक्र से बात की बात में ऐसे काट गिराया कि जैसे किसान ज्वार की खेती को काट कर डाल देता है।

इतनी कथा कह श्रीशुकदेव जी ने राजा परीक्षित से कहा कि महाराज ! श्रीकृष्णजी नै मुर के बेटों समेत सभी सेना काटडाली। यह सुन पहले तो भौमासुर अति चिंता कर महा घबराया। पीछे कुछ सोच समझ धीरज धर कितनै एक महाबली रामसों को अपनै साथ ले लाल२ आँखें क्रोध से किये कस कर फेंट बाँध, शर साध बकता झकता, श्रीकृष्णजो से लड़नै को आय उपस्थिति हुआ। त्यों भौमासुर नै प्रभु को देखा त्यों उसनै एक बार रिसाय मूठ के बाण चलाये सो हरि नै तीन २ टुकड़े कर काट गिराये उस काल–

काढ़ खड्ग भौमासुर लियौ। कोपि हँकारि कृष्ण उर दियौ॥
करैं शब्द अति मेघ समान। अरे गंवार न पावै जान॥
करकस बचन तहाँ टकरै। महा युद्ध भौमासुर करै॥

महाराज ! वह तो अति बल कर इन पर गदा चलाता था और श्रीकृष्ण जी के शरीर में उन की चोट यों लगती थीं ज्यों हाथी के अङ्ग में फूल, घड़ी आगे वह अनेक २ अस्त्र शस्त्र ले प्रभु से लड़ा और श्रीकृष्णजी नै सब काट डाले तब वह घर जाय एक त्रिशूल ले आया और युद्ध करने को उपस्थितहुआ।

तब सतिभामा टेर सुनाई। अब क्यों नहीं हनो यदुराई॥
बचन सुनत प्रभु चक्र चलाया। काट शीश भौमासुरमारया॥
कुण्डल मुकुट सहित शिर परो। धरती गिरत शेष थरथरो॥

इतनी कथा कह श्रीशुकदेव मुनि बोले कि महाराज ! भौमासुर की स्त्री पुत्र समेत आय प्रभू के सन्मुख हाथ जोड़ शिर नवाय अति विनती कर कहने लगी हे ! ज्योति रूप, ब्रह्म रूप, भक्त हितकारी, बिहारी, तुम साधु सन्त के हेतु धरते वेश अनन्त, तुम्हारी महिमा लीला माया है अपरम्पार, तिसे कौन जाने किसे

इतनी सामर्थ जो बिना कृपा तुम्हारी उसे बखाने तुम सब देवों के हो देव, कोई नहीं जानता तुम्हारा भेद। महाराज ऐसे कह छत्र कुण्डल पृथ्वी पर प्रभु के आगे धर फेर बोली हे दीनानाथ! दीनबन्धु कृपासिंधु! यह भगदत्त भौमासुर का बेटा आपकी शरण आया है अब करुणा कर अपना कमलमा कर इसके सिरपर दीजै और अपने भय से इसे निर्भय कीजै। इतनी बात के सुनते ही करुणा निधान श्री कान्ह ने करुणा कर भगदत्त के शीश पर हाथ धरा और अपने डर से उसे निडर किया। तब भौमवती भौमासुर की स्त्री बहुत सी भेंट हरि के आगे धर अति विनती कर हाथ जोड़ शिर नवाय खड़ी हो बोली हे दीनदयाल! कृपालु! जैसे आपने दर्शन दे हम सब को कृतार्थ किया, तैसे ही अब चल कर मेरा घर पवित्र कीजै इस बात के सुनते ही अन्तर्यामी भक्त हितकारी श्रीमुरारी भौमासुर के घर पधारे उस काल वे दोनों माँ बेटा हरि को पाटम्बर के पाँवड़े डाल घर में ले जाय सिंहासन पर बिठाय अर्घ दे, चरणामृत ले अति दीनता कर बोले, हे त्रिलोकी नाथ। आपने भला किया जो इस महा असुर का बध किया। हरि से विरोध कर संसार में किसने सुख पाया है? जिस२ ने आप से द्रोह किया तिस २ का जगत में नाम लेवा पानी देवा कोई न रहा इतना कह कर फिर भौमवती बोली हे नाथ। अब आप मेरी बिनती मान भगदत्त को निज सेवक जान जो सोलह सहस्र, एक सौ राजकन्या इसके बाप ने अनब्याही रोक रक्खी हैं सो अङ्गीकार कीजै, महाराज! यों कह उसने सब राजकन्याओं को निकाल प्रभू के सोंही पाँति की पाँति ला खड़ी की वे जगत उजागर रूपसागर श्रीकृष्णचन्द्र आनन्द को देखते ही मोहित हो अति गिड़गिड़ाय हा हा खाय हाथ जोड़ बोलीं, नाथ! जैसे आपने आय हम सब अबलाओं को इस महादुष्ट की बन्दी से निकाला, तैसे अब कृपा कर हम दासियों को साथ ले चलिये और निजसेवा में रखिये, तो भली है, यह बात सुन श्रीकृष्णचन्द्रजी ने उनसे इतना कहा कि, हम तुम्हें साथ ले चलने को रथ पालकियाँ मँगवाते हैं यह कह भगदत्त की ओर देखा, भगदत्त प्रभु के मनका कारण समझ अपनी राजधानी में जाय हाथी घोड़े सजवाय घुड़बहल और रथ झमझमाते जगमगाते जुतवाय सुखपाल पालकी, नालकी

डोला, चंडोली, झूलावारे के सजवाय लिवाय लाया, हरि ने देखते ही सब राज-कन्याओं का उनपर चढ़ने की आज्ञा दे भगदत्त को साथ ले राजमन्दिर में जाय उसे राजगद्दी पर बिठाया राजतिलक निज हाथ से दे आप जिस काल सब राज-कन्याओं को साथ ले वहाँ से द्वारिका को चले, तिस समय को शोभा वर्णी नहीं जाती कि हाथी बैलों की गङ्गा यमुनी, झूलों की चमक और घोड़ों की दमक और सुखपाल पालकी, नालकी, डोला, चण्डोला, रथ, घुड़बहलों के घण्टा टोपों की ध्वनि और उनके मोतियों की झालरों की ज्योति मिल ऐसी जगमगाय रही थी आगे श्रीकृष्णचन्द्र सब कन्याओं को लिये कितने एक दिनों में चले २ द्वारिकापुरी जाय राजकन्याओं को मन्दिर में रख राजा उग्रसेन के पास जाय प्रणाम कर पहले तो श्रीकृष्णचन्द्र ने भौमापुर को मारने और राजकन्याओं को छुड़वाय लाने का भेदकह सुनाया, फिर राजा उग्रसेन से बिदा होय प्रभु सत्यभामा को साथ ले छत्रकुंडल लिये गरुड़ पर बैठ स्वर्ग को गये तहाँ पहुँचते ही।

कुंडल दिये अदिति को ईशा। छत्र धरयो सुरपति के शीशा॥

यह समाचार पाय वहाँ नारद आये तिनसे हरि ने कह सुनाया कि जाय इन्द्र से कहो कि सत्यभामा तुम से कल्पबृक्ष माँगती है, देखो वह क्या कहता है इस बात का उत्तर मुझे ला दो, पीछे समझा जायगा, महाराज इतनी बात श्रीकृष्ण के मुख से सुन नारद जी ने सुरपति से जाय कहा कि सत्याभामा तुम्हारी भौजाई तुमसे कल्पतरु माँगती है तुम क्या कहते हो सो कहो। मैं उन्हें जाय सुनाऊँ कि इन्द्रने यह बात कही है इस बात के सुनते ही इन्द्र पहले तो हकबकाय कुछ सोचता रहा पीछे उसन नारद मुनि का कहा सब समाचार इन्द्रानी से जाय कहा।

इन्द्राणी सुन कहे रिसाय। सुरपति तेरी कुमति न जाय॥
तू है बड़ो मूढ़ मति अन्धु। को है कृष्ण कौन को बन्धु॥

तुझे वह सुधि है कि नहीं जो उसने ब्रज से पूजा भेंट ब्रजवासियों से गिर पुजवाय छल कर तेरी पूजा का सब पकवान आप खाय फिर सात दिन तुझसे गिरि पर वर्षवाय उसने तेरा गर्व गँवाय सब जगत में निरादर किया इस बात की कुछ तेरे ताईं लाज है कि नहीं? वह अपनी स्त्री की बात मानता है तू मेरा कहा क्यों नहीं सुनता। महाराज! जब इन्द्रानी ने इंद्र से यों कह सुनाया तब

वह अपना सा मुँह ले उलटा नारद जी के पास आया और बोला हे ऋषिराज ! तुम मेरी ओर से जाय श्री कृष्णचन्द्र से कहो कि कल्पबृक्ष नन्दनबन तज अन्त न जायगा और जाइगा तो वहाँ किसी भाँति न रहेगा, आगे किसी भाँति अब यहाँ हम से बिगाड़ न करें जैसे ब्रज में ब्रजवासियों को वहकाइ गिर का मिसकर सब हमारी पूजा की सामिग्री खाय गये नहीं तो महायुद्ध होगा।

यह बात सुन नारदजी ने आय श्री कृष्णचन्द्रजी से इन्द्र की बात कही और सुनाय के बोले, हे महाराज ! कल्पतरु इन्द्र तो देता था, पर इन्द्राणी ने न देने दिया, इस बात के सुनते ही श्रीकृष्ण मुरारी गर्व प्रहारी नन्दन बन में जाय रखवालों को मार भगाय और कल्पबृक्ष को उखाड़ गरुड़ पर धर ले आये उस काल वे रखवाले जो प्रभु की मार खाय भागे थे, इन्द्र के पास जाय पुकारे तब कल्पतरु को ले जाने का समाचार पाया, महाराज ! राजा इन्द्र अति कोप कर बज्र हाथ में ले सब देवताओं को बुलाय ऐरावत हाथी पर चढ़ श्रीकृष्णचन्द्र जी से युद्ध करने को उपस्थित हुआ, फिर नारद मुनि जी ने जाय इन्द्र से कहा, महाराज ! तुम महा मूर्ख हो जो स्त्री के कहे से भगवान से लड़ने को उपस्थित हुए ऐसी बात करते तुझ लड़ना ही था तो जब भौमासुर तेरा छत्र और अदिति के कुंडल छिनाय ले गया, तब क्यों न लड़ा अब प्रभु ने भौमासुर को मार कुंडल और छत्र ला दिया, तो उन्हीं से लड़ने लगा तब इन्द्र लज्जित हो मन मार गया आगे, श्रीकृष्णचन्द्र द्वारिका पधारे, सब यादव हर्षित हो हरि को देखने धाये प्रभुने सत्य भामा के मन्दिर में कल्पबृक्ष ले जाय के रक्खा और राजा उग्रसेन ने सोलह सहस्र एक सौ जोकन्याअनब्याहीसाथ लायेसोसबकोविवाह रीतिसे श्रीकृष्णचंद्रकोब्याहदी

भयौ वेद बिधि मंगल चार। ऐसे हरि बिहरत संसार॥
सोलह सहस एक सौ गेह। रहत कृष्ण पर परम सनेह॥
पटरानी आठों जे रानी। प्रीत निरन्तर तिनसों घनी॥

इतनी कथा सुनाय श्री शुकदेव जी बोले कि हे राजा हरि ने ऐसे भौमासुर का बध कर और इन्द्र का छत्र ला फिर सोलह सहस्र एक सौ आठ कन्याओं से विवाह कर द्वारिका पुरी में आनन्द से सबको साथ ले रहने लगे।

अध्याय-६१

श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज ! एक समय मणि मय कंचन के मंदिर में कुन्दन का जड़ाऊ छपरखट बिछाय, तिस पर फेन से बिछौने फूलों से सँवारे कपाल कड़ुआ और आरसायुक्त सुगन्ध से महक रहे थे, कपूर गुलाब नीर चोवा-चंदन अरगजा सेजके चारों ओर पात्रों में धरा था अनेक अनेक प्रकार के बिचित्र चित्र चारों ओर भीतों पर खिचे हुए थे आला में जहाँ तहाँ फूल, पकवान, पाक धरे थे, और सब सुख का सामान जो चाहिये सो उपस्थित था झूला वारे घाँघरा घुमघुमारे तिस पर सच्चे मोती टके हुए चमचमाती अँगिया झलझलाती सारी और जगमगाती ओढ़नी पहने ओढ़े नखशिख से अङ्गार किये रोरी की आड़ दिये बड़े २ मोतियों की नथ, शीशफूल, कर्णफूल, माँग टीका टेढ़ी, चन्दनहार मोहनमाला, धुकधुकी, सतलड़ी, पचताला, दुहरे तिहरे नौरतन और भुजबन्द, कंकन, पहुँची, नौगरी, चूड़ा छल्ला किंकिड़ी अनवट, बिछुए, जेहर तेहर आदि सब आभूषण रत्न जटित पहने श्रीकृष्ण आनँदकन्द तहाँ बिराजते थे और आपस (परस्पर) में सुख लेते देते थे कि एकाएकी लेते २ श्री कृष्णजी ने रुक्मिणी जी से कहा कि सुन्दरी ! एक बात मैं तुझसे पूछता हूँ तू तो महा सुन्दरी सब गुण-युक्त और राजाभीष्म की कन्या और महाबली, बड़े प्रतापी राजा शिशुपाल चन्देरी के राजा जिसके घर सात पीढ़ी से राज्य चला आता हो और हम उसके त्रास से भागे फिरते हैं, मथुरापुरी तज समुद्र में आन बसे हैं ऐसे राजा को तुम्हें

तुम्हारे माता पिता भाई देते थे और बरात ले ब्याह को भी आ चुका था, तिसे न वर तुमने कुल की मर्यादा छोड़ संसार की लाज और माता पिता और बन्धु की शङ्का तज हमें ब्राह्मण के हाथ बुलाय भेजा।

कटक साज नृप ब्याहन आयो। तब तुम सुनके हमें बुलायो।
तिनके देखत तुम को लाये। दल हलधर उनकेविच लाये॥
तुम लिख भेजी ही यह बानी। शिशुपाल ते छुड़ावहु आनी।
सो वह प्रतिज्ञा रही तिहारी। कुछ न इच्छा हती हमारी॥
अजहू कछू न गयो तिहारो। सुन्दरि सुनहुँ बचन हमारो॥

कि जो कोई भूपति कुलीन गुण वाला तुम्हारे योग्य होय तुम तिसके पास जाय रहियो। महाराज! इतनी बात के सुनते ही श्री रुक्मिणीजी भय चकित हो पछाड़ खाय भूमिपर गिरीं और जल बिना मीन की भाँति तड़फड़ाय अचेत लगीं ऊर्ध्व स्वाँस लेने तिस काल—

दोहा-यहि छविमुख अवकावलों रही लपट एकमङ्ग। मानहु शशि भूतल परो पीवत अमी भुजङ्ग॥

यह चरित्र देख इतना कह श्रीकृष्णचन्द्र घबराय उठे कि यह तो अभी प्राण तजती है, तब चतुर्भुज हो उस के पास जाय लगे दो हाथों से अलक सँवारने महाराज! उस काल नन्दलाल प्रेम वश हो अनेक२ चेष्टा करने लगे कभी पीताम्बर से प्यारी का चन्द्रमुख पोंछतेथे कभी कोमल कमलसा अपना हाथ उसके हृदय पर रखतेथे, निदान कितनी एक देरमें रुक्मिणीजीके जीमेंजीआया, तबहरि बोले-

हमने हाँसी ठानी जो तुमने साँची ही जानी, हँसी की बात पर क्रोध करना उचित नहीं, उठो अब क्रोध दूर करो और मनका शोक हरो। महाराज! इतनी बात के सुनतेही रुक्मिणीजी उठ हाथ जोड़ शिरनाय कहने लगींकि महाराज! आपने जो कहा कि हम तुम्हारे नहीं सो सचकही, क्यों कि आप की समता का त्रिलोकी में कौन है, हे जगदीश आप को छोड़ जो जन और को धावें सो ऐसे हैं जैसे कि कोई हरि यश छोड़ गृद्ध गुण गावै महाराज! आपने जो कहा कि तुम किसी महाबली राजा को देखो सो आपसे अति बली और बड़ा राजा त्रिभुवनमें कौन है सो कहो। ब्रह्मा रुद्र इन्द्रादिक सब देवता आपको आशकर रहहैं, आपकीकृपा से वे जिसे चाहते हैं तिसे महाबली प्रतापी यशी तेजस्वी बर दे बनाते हैं और

जो लोग आप की सैकड़ों वर्ष अति कठिन तपस्या करते हैं सो राजपद पाते हैं फिर आप हो अपना सर्वस्व खोय भृष्ट होते हैं हे कृपानाथ! आपकी तो सदा की यह रीति है कि अपने भक्तों के लिए संसार में आय अवतार लेते हैं और दुष्ट राक्षसों को मार पृथ्वी का भार उतार निज जनोंको सुखदे कृतार्थ करते हो और नाथ जिस पर आपकी बड़ी दया होती है वह धन राज यौवन रूप प्रभुता पाय जब अभिमान से अन्धा और धर्म, कर्म तप सत, दया, पूजा भजन भूलता है तब आप उसे दरिद्री बनाते हो क्योंकि दरिद्री सदाही आपका ध्यान सुमिरण किया करता है इसीसे आप दरिद्री बनाते हो जिस पर आपकी बड़ी कृपा होगी सो सदा निर्धन रहेगा महाराज इतनी कह फिर रुक्मिणीजी बोली कि हे प्राण नाथ जैसे काशीपुरी के राजा इन्द्रद्य म्न की बेटी अम्बा ने किया वैसा मैं न करूँगी कि वह पति छोड़ राजा भीष्म जी के पास गई और जब उसने इसेन रक्खा तब फिर अपने पति के पास आई पुनि पति ने उसे निकाल दिया, तब उसने गङ्गा तीर में महादेव का बड़ा तप किया तहाँ भोलानाथ ने आय उसे मुँह माँगा वर दिया उस वरके बल से जाय राजा भीष्म से अपना पलटा लिया सो मुझसे न होगा।

अरु तुम नाथ यही समुझाई। काहू याचक करी बड़ाई॥
बाको बचन मान तुम लीयो। हम पर विप्र पठै के दीयो॥
विप्र पठाये जानि दयाल। आय कियो दुष्टन को काल॥
दीन जान दासी सङ्ग लई। तुम मोहि नाथ बड़ाई दई॥
यह सुनि कृष्ण कहत सुन प्यारी। ज्ञान ध्यान गतिलहै हमारी॥
सेवा भजन प्रेमते जान्यो। तोही सों मेरो मन मान्यो॥

महाराज! प्रभु के मुख से इतनी बात सुन सन्तुष्ट हो रुक्मिणी जी फिर हरि की सेवा करने लगी।

अध्याय-६२

श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! सोलह सहस्र एकसौ आठ स्त्रियों को ले श्रीकृष्णचन्द्र आनन्द से द्वारिकापुरी में बिहार करने लगे और आठों पटरानियाँ आठों पहर हरि की सेवा में रहें नित उठ भोर ही कोई मुख धुलावै कोई उबटन लगाय निहलावे, कोई षटररस भोजन बनाय जिमावै कोई अच्छे पान लौंग इला-

[प्रद्युम्न विवाह]

यची जावित्री जायफल समेत पियाको बनाय खिलावै कोई सुन्दर वस्त्र और रत्न जटित आभूषण चुनाय और बनाय प्रभुको पहनावती थी कोई फूलमाला पहनाय गुलाबी नीर छिड़क केशर चन्दन चरचराती थो कोई पंखा ढोलती थी, और कोई पाँव दबाती थी, महाराज ! इस भाँति सब रानियाँ अनेक २ प्रकार से प्रभु की सदा सेवा करें और हरि हर भाँति उन्हें सुख दें, इतनी कथा सुनाय श्रीशुक-देव मुनि बोले कि महाराज कई वर्ष के बीच—

दोहा—एक एक यदुनाथ की, नारिन जाये पुत्र।
एक २ कन्या लक्ष्मी, दस दस पुत्र सपुत्र॥
एक लाख इकसठ सहस, आयू बस ईकरार॥
भये कृष्ण के पुत्र ये, गुणबल रूप अपार॥

सब मेघवर्ण चन्द्रमुख कमलनयन, नीले पीले झगुले पहने गण्डे कठलेगले में डाल घर २ बाल चरित्र कर माता पिता को सुख दें और उनको मातायें अनेक भाँति से लाड़ प्यार कर प्रतिपाल करें महाराज श्रीकृष्णचन्द्रजी के पुत्रों का होना सुन रुक्म ने अपनी स्त्री से कहा कि, अब मैं अपनी कन्या चारुमतीजो कृतवर्मा ने माँगी है उसे न दूँगा स्वयम्बर करूँगा तुम किसी को भेज मेरी बहन रुक्मिणी को पुत्र समेत बुलाय भेजो इतनी बात के सुनते ही रुक्म की नारी ने अति बिनती कर ननद को पत्र लिख पुत्र समेत एक ब्राह्मण के हाथ बुलाया और स्वयम्बर किया, भाई भौजाई की चिट्ठी पाते ही रुक्मिणी श्रीकृष्ण जी से

आज्ञा ले बिदा हो पुत्र के सहित चली द्वारिका से भोजकटमें भाईके घर पहुँची।

देखि रुक्म ने अति सुख पायो। आदर कर नीचो शिर नायो॥
पायन पर बोली भौजाई। हरष भयो तब से अब आई॥

यह कह फिर उसने रुक्मिणी जी मे कहा कि ननद जो आईहो तो हम पर बड़ी दया कीजै और चारुमती कन्या को अपने पुत्र के लिये लीजै इस बात के सुनते ही रुक्मिणीजा बोलीं कि भौजाई तुम पति की गति जानती हो तुम किसी से कलह करबाओ, भैया की बात कुछ कही नहीं जाती क्या जानिये किस समय क्या करे इससे कोई बात कहते करते भय लगता है, रुक्म बोला कि बहन तुम किसी भाँति न डरो कुछ उपाधि न होगो, वेद की आज्ञा है कि, दक्षिण देश में कन्यादान भानजे का दीजै इस कारण मैं अपनी पुत्री चारुमती आप के पुत्र प्रद्य म्न को दूँगा, और श्रीकृष्णजीसे बैर भाव छोड़ नया सम्बन्ध करूँगा महाराज इतनी कह जब रुक्म वहाँसे उठ सभामें गया तब प्रद्युम्नजी माता से आज्ञा ले बन ठन कर स्वयम्बर के बीच में गये तो क्या देखते हैं कि देश २ के नरेश भाँति भाँति के वस्त्र आभूषणपहन शस्त्र बाँधे बनाव किए।विवाह की अभिलाषा हिये में लिए सब खड़े हैं और वह कन्या जयमाला कर में लिए चारों ओर दृष्टि किये बीच में फिरती है पर किसी पर दृष्टि नहीं ठहराती इतने में ज्यों प्रद्युम्न जी स्वयम्बर के बीच में गये, त्यों देखते ही उस कन्या ने मोहित हो आ इनके गले में जयमाला डाली सब राजा पछताय अपना सा मुँह ले देखते खड़े रह गये और अपने मनही मन कहने लगे कि भला देखें हमारे आगे से इस कन्या को कैसे ले जायगा हम बाट ही में छीन लेंगे महाराज सब राजा तो यों कह रहे थे और रुक्म ने बर कन्या को माढ़े के नीचे लेजाय वेदकी बिधिसे संकल्प कर कन्यादान किया और उसके यौतुक में बहुत ही धनद्रव्य दिया कि जिसका कुछ पारावार नहीं, आगे श्रीरुक्मिणीजी पुत्र को ब्याह भाई भौजाईसे बिदा हो बेटे बहूको ले रथ पर चढ़ जो द्वारिकापुरी को चलीं तो सब राजाओं ने आय मार्ग रोका इसलिए कि प्रद्युम्न से लड़ कन्या को छीन लें उनकी यह कुमति देख प्रद्युम्नभी शस्त्र अस्त्र ले युद्ध करने को उपस्थित हुए कितनी ही एक बेर तक इनमें उन में युद्ध होता रहा निदान प्रद्युम्नजी ने उन सबको मार भगाया आनन्द मङ्गल से

द्वारिकापुरी में पहुँचे इनके पहुँचने का समाचार पाय सब कुटुम्ब के लोग क्या स्त्री क्या पुरुष पुरी के बाहर आय रीति भाँति कर पाटम्बर के पाँवड़े डालते बाजेगाजेसे इन्हें लेगये सारेनगरमें मंगलचार हुआ येराजमंदिरमें सुखसे रहनेलगे।

इतनी कथा सुनाय शुकदेवजी ने राजा परीक्षित से कहा कि महाराज कई वर्ष पीछे श्रीकृष्णचंद्र आनंदकंद के पुत्र प्रद्युम्नजीके पुत्र हुआ उसकाल श्रीकृष्ण चन्द्रजी ने ज्योतिषियों को बुलाय सब कुटुम्ब के लोगों को बैठाय मङ्गलचार करवाइ शास्त्र की रीति से नाम करण किया ज्योतिषियों ने पत्रा देख वर्ष, मास, दिन, तिथि, घड़ी, लग्न, नक्षत्र, ठहराय उस लड़के का नाम अनिरुद्ध रक्खा उस काल।

सोरठा-फूले अंग न समाय देत दक्षिणा द्विजन को। देत न कृष्ण अघाय, पुत्र भयो प्रद्युम्न के॥

महाराज! नाती होने का समाचार पाय पहले तो रुक्म ने बहन बहनोईको अति हितकर यह पत्री लिख भेजो कि तुम्हारे पोते से हमारी पोता का ब्याह होय तो बड़ा आनन्द है और पीछे एक ब्राह्मण को बुलाइ रोरी, अक्षत रुपया नारियल दे उसे समझाय के कहा कि द्वारिकापुरी में जाइ हमारी ओर से अति विनती कर श्रीकृष्ण का पुत्र अनुरुद्ध जो हमार दोहता है तिसे टीका दे आवो बात के सुनते ही ब्राह्मण टीका और लग्न साथ ले चला श्रीकृष्णचन्द्र के पास द्वारिकापुरी में गया उसे देख प्रभु ने अति मान आदर से पूछा कि देवता आपका आना कहाँ से हुआ ब्राह्मण बोला महाराज मैं राजा भीष्मक के पुत्र रुक्म का पठाया हूँ उनको पुत्री और आपके पौत्र से सम्बन्ध करने को टीका और लग्न ले आया हूँ इस बात के सुनते ही कृष्णजी ने भाई बन्धुओंको बुलाइ टीका और लग्न ले उस विप्र को बहुत कुछ दे बिदा किया और आप बलरामजी के निकट जाइ चलने का बिचार करने लगे, निदान वे दोनों भाई वहाँसे उठ राजा उग्रसेन के पास आइ सब समाचार सुनाइ उनसे बिदा हो बाहर आय बरात का सब सामान मँगवाइ इकट्ठा करवाने लगे कई एक दिनों में जब सब सामान इकट्ठाहो चुका तब बड़ो धूमधाम से प्रभु बरात लै द्वारिका से भोज कट नगर को चले उस काल एक झमझमाते रथ पर तो रुक्मिणीजी पुत्र पौत्र को ले बैठी जाती थीं और एक रथ पर श्रीकृष्णचन्द्र और बलराम बैठे जाते थे निदान कितनेक

दिनों में सब समेत प्रभु वहाँ पहुँचे महाराज बरात के पहुँचते ही कालिंगादि सब देश २ के राजाओं को साथ ले नगर के बाहर जाय आगौनी कर सब को बागे पहराय अति आदर मानकर जनमासे में लिवाय लाया आगे उसको खिलाइ पिलाइ माढ़े के नीचे लिवाइ लेगया और उसने वेद रीति से कन्यादान कियाउसके यौतुक में जेा दान दिया उसको मैं कहाँ तक कहूँ अकथ है इतनी कथा सुनाइ श्री शुकदेवजी बोले महाराज ब्याह के हेा चुकते ही राजा भीष्मक ने जनमासे में जाइ हाथ जोड़ अति विनती कर श्रीकृष्णजी से चुपके २ कहा महाराज विवाह हेा चुका उत्तम रहा, अब आप शीघ्र चलने का विचार कीजै क्योंकि—

भूप सङ्ग जे रुक्म बुलाये । ते अब दुष्ट उपाधी लाये ॥
मति काहू सों उपजे रारि । याही ते मैं कहत मुरारि ॥

इतनी बातकह जेाराजा भीष्मकगये त्योंही श्रीरुक्मिणीके निकट रुक्मआया।

दोहा—कहत रुकिमणी टेर कर, किस घर पहुचे जाय । बैरी भूपति पाहुने, जुरे तिहारे आय ॥
जौ तुम भैया चाहौ भलौ । हमहिं वेग पहुँचावन चलौ ॥

नहीं तेा रस में अनरस होता दीखता है, यह बचन सुन रुक्म बोलाकि बहन तुम किसी बात की चिन्ता मत करेा, मैं पहले जेा राजा देश २ के पाहुने आये हैं तिन्हें विदा कर आऊँ पीछे जो तुम कहोगी सो करूँगा इतना कह रुक्म यहाँ से उठ जो राजा, पाहुने आये थे उनके पास गया वे सब मिलके कहने लगे कि रुक्म तुमने कृष्णबलदेव को इतना धन द्रव्य दिया और उन्होंने मारे अभिमान के कुछ भला न माना, एक तो हमें इसका पछितावा है, और दूसरी उस बातकी कसक हमारे मन से नहीं जाती कि जो बलराम ने तुम्हें अमर न किया था महाराज इस बात के सुनते ही रुक्म को क्रोध हुआ तब राजा कालिग बालाकि, एक बात मेरे जी में आई है कहो कहूँ । रुक्म ने कहा कहो, फिर उसने कहा किहमें श्रीकृष्ण से कुछ काम नहीं पर बलराम को बुला दोतो हम उनसे चौपड़खेल सब धन जीत लें और जसा उसे अभिमान है तैसा यहाँ से रीते हाथ विदा करें यह बात सुन बिचार कर ही रुक्म वहाँ से उठ बलरामजो के निकट जा बोला कि महाराज आप को सब राजाओं ने प्रणाम कर चौपड़ खेलने को बुलाया है।

सुन बलभद्र तुरतहिं तहँ आये । भूपति उठिकै शीश नवाये ॥

आगे सब राजा बलराम जी का शिष्टाचार कर बोले कि आपको चौपड़

खेलने का अभ्यास है, इसलिये हम आप के साथ खेलना चाहते हैं इतना कह उन्होंने चौपड़ मँगवाय बिछाई और रुक्म से और बलरामजी से होने लगी पहले रुक्म दस बेर जीता तो बलरामजी से कहने लगा कि धन तो सब जीता अब काहे से खेलोगे इतने में राजा कलिंग बड़ी बात कह हँसा यह चरित्र देख बलदेव जी नीचा शिर कर सोच बिचार करने लगे, तब रुक्म ने दस करोड़ रुपये एक बार लगाये सो बलरामजी जो जीत के उठाये तो सब धाँधलो कर बोलेकि यह रुक्म का पासा पड़ा तुम क्यों रुपये समेटते हो।

सुनि बलराम फेरि सब दीन्हे। दाव लगायौ पीछे लीन्हे॥

फिर हलधर जीते और रुक्म हारा,उस समय भी रोंगटी कर सब राजाओं ने रुक्म को जिताया और यों कह सुनाया—

जुआ खेल पाँसे की सार। यह तुम जानो कहा गँवार॥
जुआ युद्ध गति भूपति जाने। ग्वाल गोपि गैयन पहिचाने॥

इस बात के सुनते ही बलदेव जी को क्रोध यों बढ़ाकि जैसे पूनों को समुद्र की तरंग बढ़े निदान ज्यों त्यों कर बलराम जी ने क्रोध को रोक मन को समझाया फिर सात अर्व रुपये से चौपड़ खेलने लगे फिर भी बलदेवजी जीते और सबों ने कपट कर रुक्म ही को जीता कहा इस अनीति के होते आकाश से यह वाणी हुई कि हलधर जीते और रुक्म हारा अरे राजाओ तुमने क्यों झूँठ बचन उच्चारा। महाराज! जब रुक्म समेत सब राजाओं ने आकाश बाणी सुनी अन सुनी की, तब तो बलदेव जी महा क्रोध में आय बोले—

करी सगाई वर न जाडयो। हमसे फेरि कलह तुम माडयो॥
मारो तोहि अरे अन्याई। भलौ बुरी मानहुँ मौजाई॥
अब काहूँ की कानि न करिहों। आज प्राण कपटी के हरिहों॥

इतनी कथा कह श्रीशुकदेव जी ने राजा परीक्षित से कहा कि महाराज! निदान बलरामजी ने सब के देखते२ रुक्म को मार डाला और कलिंगको पछाड़ मारे घूँसों से उसके दाँत उखाड़ लिये और कहा कि तू भी मुँह पसार के हँसाथा आगे सब राजाओं को मार भगाया बलराम जी ने जनवासे में श्रीकृष्णचन्द्र के पास आय सब ब्यौरा कह सुनाया, बातके सुनतेही हरि सब समेत वहाँसे प्रस्थान

किया और चले २ आनन्द मङ्गल से द्वारिका में आए इनके आते ही सारे नगर में सुख छा गया श्रीकृष्णचन्द्र और बलदेव जी ने राजा उग्रसेन के सन्मुख जाय हाथ जोड़ कहा कि महाराज ! आप के पुण्य प्रताप से अनिरुद्ध को ब्याह लाये और महा दुष्ट रुक्म को मार आये ।

अध्याय–६३

श्रीशुकदेव जी बोले कि महाराज अब जो द्वारिकानाथ का बल पाऊँ तो ऊषा हरण की कथा सुनाऊँ । जैसे उसने रात्रि समय स्वप्न में अनिरुद्ध जी को देख और आसक्त हो खेद किया पुनि चित्ररेखा ने अनिरुद्ध को लाय ऊषा से मिलाया तैसे मैं सब प्रसङ्ग कहता हूँ तुम मन दे सुनों ब्रह्मा के वन्शमें पहले कश्यप हुआ तिसका पुत्र हिरण्यकश्यप अति बली और महाप्रतापी और अमर भया उसका सुत हरिजन प्रभु भक्त प्रहलाद नाम हुआ उसका बेटा राजा विरोचन विरोचन का पुत्र राजा बलि जिसका यश धर्म धरणी में अब तक छायरहा है कि प्रभु ने बामन अवतार ले राजा बलि को छल पाताल पठाया,उस बलि का ज्येष्ठ पुत्र महा पराक्रमी बड़ा तेजस्वी बाणासुर हुआ वह शोणितपुर में बस, नित कैलाश में जाय शिव की पूजा करै, ब्रह्मचर्य पाले, सत्य बोले जितेन्द्रीय रहै ।

(ऊषा स्वप्न अनिरुद्ध हरण)

महाराज ! एक दिन बाणासुर कैलाश में जाय हर के प्रेम में, आय लगा मग्न हो मन्द मन्द बजाय नाचने गाने, उसका गाना बजाना सुन श्री महादेव भोलानाथ मग्न होने लगे पार्वती जी को साथ ले नाचने और डमरू बजाने निदान नाचते नाचते शङ्कर ने अति सुख पाया प्रसन्न हो बाणासुर को निकट बुलाय कहा पुत्र मैं तुझ पर संतुष्ट हुआ वर माँग ।

तैंने बाजे भले बजाये । सुन ये श्रवण मेरे मन भाये ॥

इतनो बात के सुनते ही महाराज बाणासुर हाथ जोड़ शिर नवाय अति दीनता कर बोला कि कृपानाथ ! जो आपने मेरे ऊपर कृपा की तो पहले अमरकर मुझे पृथ्वी का राज दीजै, पीछे मुझे ऐसा बली कीजै, कि कोई मुझसे न जीतेगा महादेव जी बोले मैंने तुझे यह वर दिया और सब भय से निर्भय किया त्रिभुवन में

तेरे बल को कोई न पावेगा और विधाना का भी तुझ पर वश न चलेगा ।

बाजें भले बजाय के, दियो परम सुख मोय । मैं हिय अति आनन्द कर, दिये सहस्त्र भुज तोय ॥

अब तू घरजाय निश्चिंताईसे बैठ अविचल राज्य कर महाराज ! इतनाबचन भोलानाथ के मुख से सुन सहस्र भुज पाय बाणासुर अति प्रसन्न हो परिक्रमा दे शिर नाय बिदाहो आज्ञालेे शोणितपुर में आय आगे त्रिलोकी जीत सबदेवताओं को वश कर नगर में चारों ओर जल की चुआन चौड़ी खाई और अग्नि पवनका कोट बनाय निर्भय हो सुख से राज्य करने लगा, कितनै एक दिन पीछे—

लरि लरिके भई भुज सबल, कर कहि अति सहराय । कहत बाण जासों लरूं, कायर अब चढ़िजाय ॥
भई खोज लड़वे बिन भारी । को पुजवे हिय हौंस हमारी ॥

इतना कह बाणासुर घरसे बाहरजाय लगा पहाड़ उठाय२ तोड़२करके देश२ भिरने जब सबपर्वत फोड़चुका औरउसके हाथोंकी सुरसुराहट खुजलाहटन गईतब-

कहत बाण अब कासों लरौं । इतनी भुजा कहा लै करौं ॥
सकल भार मैं कैसे सहों । बहुर जाय के हर सों कहों ॥

महाराज ऐसे मनही मनमें सोच बिचार कर बाणासुर महादेवजी के सन्मुख जा हाथ जोड़ शिर नाय बोला कि हे शूलपाणिनाथ ! आपने जो कृपा कर सहस्र भुजा दीं सो मेरे शरीर पर भईं उनका बल अब मुझसे सँभाला नहींजाता इसका उपाय कुछ कीजै, कोई महाबली युद्ध करनेको मुझे बता दीजै मैं त्रिभुवन में ऐसा पराक्रमी किसी को नहीं देखता जो मेरे सन्मुख हो युद्ध करे आप दया कर जैसे आपने मुझे महाबली किया तैसे ही कृपा कर मुझ से लड़ मेरे मन की अभिलाषा पूरी कीजै नहीं तो और किसी महाबली को बता दीजै जिस से मैं जाकर युद्ध करूँ और अपने मन का शोक हरूँ इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज बाणासुर से इस भाँतिकी बातें सुन श्रीमहादेवजीने बिलखाय मन ही मन में इतना कहा कि मैंने तो इसे साधु मानके वर दिया अब यह मुझसे ही लड़ने को उपस्थित हुआ इस मूर्ख को बलका घमण्ड भया यह जीतान बचेगा जिसने अहंकार किया सो जगत में आय बहुत रोज न जिया ऐसा मनही मनकह महादेवजीबोलेकि यदुकुलमें श्रीकृष्णावतार होगा उसबिन त्रिभुवनमें तेरा सामना करनेवाला कोईनहीं यहबचनसुन बाणासुर अति प्रसन्न हो बोलाकि नाथ वह पुरुष

कब अवतार लेगा और मैं कैसे जानूँगा कि अब वह उपजा है राजा ! शिवजीने एक ध्वजा बाणासुर को देकर कहाकि इसको लेजा अपने मंदिरके ऊपर गाढ़देजब यह ध्वजा आपसे आप टूटकर गिरे तब जानियो कि मेरा शत्रु जन्मा है।

महाराज जब शंकरने उससे ऐसे समझा कर कहा तब बाणासुर ध्वजा ले निज घर को शिर नाय चला आगे घर जाय ध्वजा मंदिर पर चढ़ा नित्य२ यही मनाता था कि कब वह पुरुष प्रगटे और उससे युद्ध करूँ इसमें कितने एक वर्ष बीते उसकी बड़ी रानी बाणावती तिसके गर्भ रहा और पूरे दिन में एक लड़की हुई उस काल बाणासुर ने ज्योतिषियों को बुलाय के कहा कि इस लड़की का नाम और गुण कहो इतनो बात के सुनते ही ज्योतिषियों ने झट वर्ष मास, पक्ष, तिथि, वार, घड़ी महूर्त नक्षत्र ठहराय लग्न बिचार उस लड़की का नाम ऊषा धर के कहा कि महाराज ! यह कन्या रूप गुण शील की खान महा सुजान होगी इसके ग्रह लक्षण ऐसे ही आन पड़े हैं।

इतना सुन बाणासुर ने अति प्रसन्न हो बहुत कुछ ज्योतिषियों की दे बिदा किया पीछे मंगला मुखियों को बुलाय मंगलचार करवाये पुनि ज्यों २ वह कन्या बढ़ने लगी त्यों २ बाणासुर उसे अति प्यार करने लगा जब ऊषा सात बरस की भई तब उतके पिता ने शोणितपुर के निकट ही कैलास था तहाँ कई एक सखी सहेलियों के साथ शिव पार्वतीजी के पास पढ़ने को भेज दिया ऊषा गणेश सरस्वती को मनाय शिव पार्वती के सनमुख जाय हाथ जोड़ विनती कर बोली कि हे कृपासिंधु शिव गौरी दया कर मुझ दासी को विद्या दान दीजै और जगत में यश लीजै महाराज ऊषा के अति दीन बचन सुन शिव गौरी जी ने उसे प्रसन्न हो विद्या का आरम्भ करवाया वह नित्यप्रति जाय पढ़ २ आवै इसमें कितने एक दिनों के बीच सब शास्त्र पढ़ विद्या पाय गुणवती हुई और सब यन्त्र बजाने लगी, एक दिन ऊषा पार्वती के साथ मिल कर वीणा बजाय संगीत की रीति से गाय रही थी शिवजी ने आय पार्वती से कहा कि प्रये ! मैंने जो कामदेव को जलाया था तिसे श्रीकृष्णचंद्रजी ने उपजाया इतना कह श्री महादेवजी गिरिजा का साथ ले गंगा तीर में जाय नीर में न्याह न्हिलाय सुख की इच्छा कर अति

लाड़ आनंद में मग्न हो डमरू बजाय २ तांडव नाच संगीत शास्त्र की रीति से गाय २ लगे पार्वती जी को रिझाने और बड़े प्यार से कंठ लगाने उस समय ऊषा शिव गौरी के सुख प्यार देख २ पति के मिलने की अभिलाषा कर मन ही मन कहने लगी कि मेरे भी कन्त होय तौ मैं भा शिव गौरी की भाँति उसके साथ बिहार करूँ ज्यों ऊषा ने मन ही मन इतनी बात कही, त्यों अन्तरयामिनी पार्वती ने ऊषा की अन्तरगति जान उसे हित से निकट बुलाय प्यार कर समझा के कहा कि बेटी तू किसी बात की चिंता मत कर तेरा पति तुझे स्वप्न में आय मिलेगा तू उसे ढुँढ़वा लीजो, और उसके साथ सुख भोग कीजो ऐसे वरदे शिवरानी ने ऊषा को बिदा किया वह सब विद्या पढ़ वर पाय दण्डवत कर अपने पिता के पास आई पिता ने एक मन्दिर अति सुन्दर निराला इसे रहने को दिया और कितनी एक सखी सहेलियों को ले वहाँ रहने लगी और दिन २ बढ़ने महाराज जिस काल वह बारह वर्ष की हुई तो उसके मुख चन्द्र की कांति को देख पूर्णमासी का चन्द्रमा छीन हुआ बालों की श्यामता के आगे अमावस की अन्धेरी फीकी लगने लगी उसकी चोटी सटकारी लख नागिनी अपनी केंचुकी छोड़ सटक गई भोंहकी बकाई निरख धनुष धकधकाने लगा। एक बार सजधज से हँसती २ सखियों के साथ माता पिता को प्रणाम करने गई कि जैसे लक्ष्मी ज्यों सन्मुख जाय दण्डवत कर ऊषा खड़ी हुई त्यों बाणासुर ने उसके यौवन की छटा देख निज मन में इतना कह उसे बिदा किया कि अब यह ब्याहने योग्य हुई और पीछे से कई एक राक्षसी उनकी चौकसी को बैठाई वह वहाँ जाय आठों पहर सावधानी से रहने लगी और राक्षसियाँ सेवा करने लगी महाराज वह राज कन्या पति के लिये नित्य जाप पुण्य व्रत कर श्रीगौरी जी की पूजा किया करें एक रोज नित्य कर्म से निश्चिन्त हो रात समय सेज पर अकेली बैठी मन ही मन सोच कर रही थी कि देखिये पिता मेरा विवाह कब करें और किस भाँति मेरा बर मुझे मिले इतना कह स्वामी के ही ध्यान में सो गई तौ स्वप्न में देखती क्या है कि एक पुरुष किशोर वेश श्याम वर्ण चन्द्रमुख कमल नयन अति सुन्दर काम रूप मोहन स्वरूप पीताम्बर पहन मोरमुकुट शिर धरे

त्रिभंगी छबि करे रत्न जटित आभूषण मकराकृत कुंडल बनमाला पहने और पीत बसन ओढ़े महोचंचल सन्मुख आगे खड़ा हुआ यह उसे देखतेही मोहित हो

लजाय शिर झुकाय रही फिर उसने कुछ प्रेम सनी बातें कर स्नेह बढ़ाय निकट आय हाथ पकड़ कण्ठ लगाय इसके मन का भ्रम और सोच संकोच सब बिसराय दिया फिर तो परस्पर सोच संकोच तज सेज पर बैठ हाव भाव कटाक्ष और आलिङ्गन चुम्बन कर सुख लेने लगे और प्रेम मग्न हो प्रीति की बातें करते कि इस में कितनी एक बेर पीछे ऊषा ने ज्यों प्यार करना चाहा कि पति को एक बार अङ्क भर कंठ लगाऊँ त्यों नयनों की नींद गई और जिस भाँति हाथ बढ़ाय मिलने को भई थी तिसी भाँति मुरझाय पछिताय रह गई।

दोहा–जागि परी सोचत खरी, भयो परम दुख ताहि। कहाँ गयो वह प्राणपति देखत चहुँदिश चाहि॥

महाराज! इतना कह ऊषा अति उदास हो पिय का ध्यान धर सेज पर जाय मुख लपेट पड़ रही जब रात जाय भोर हुआ डेढ़ पहर दिन चढ़ा तब सखी सहेली मिल आपस में कहने लगी कि आज क्या है जो ऊषा इतना दिन चढ़ा और अब तक सो कर नहीं उठी? यह सुन चित्ररेखा बाणासुर के प्रधान कष्माँड की बेटी चित्रशाला में जाय क्या देखती है कि ऊषा छपर खट के बीच मन मारे जी हार निढाल पड़ी रो रो लम्बी श्वाँस ले रही है।उसकी यह दशा देख।

दोहा–चित्र रेखा बोली अकुलाय। कहि सखि तू मोसों समुझाय।
आज कहा सोचत है खरी। परम बियोग सिंधु में परी॥
रो रो अधिक उसासें लेत। तन मन व्याकुल है किमि हेत।

मेरे मन को दुख परि हरौ। मन चीते कारज सब करौ॥

महाराज इतनी बात के सुनते ही ऊषा अति सकुचाय शिर नवाय चित्ररेखा के निकट आय मधुर बचन से बोली कि मैं तुझे अपनी हितू जान रात की बात सब कह सुनाती हूँ तू निज मन में रख और कुछ उपाय कर सके तो कर, आज रात को एक पुरुष मेघवर्ण, चंद्र बदन, कमल नयन, पीताम्बर पहरे, पीतपट ओढ़े, मेरे पास आय बैठा और उसने अति स्नेह कर मेरा मन हाथ में ले लिया, मैं भी सोच संकोच तज उससे बात करने लगी निदान बतराते २ जो मुझे प्यार आया तो मैंने उसे पकड़ने को हाथ बढ़ाया इस बीच मेरी नींद गई और उस को माहनी मूर्ति मेरे ध्यान में रही।

देख्यो सुन्यो और कहाँ ऐतौ। मैं कर कहाँ बताऊँ जैसौ।
वाकी छबि वरणी नहिं जाय। मेरौ चित लै गयौ चुराय॥

जब मैं कैलाश पर श्रीमहादेवजी के पास विद्या पढ़ती थी तब श्रीपार्वती जी ने मुझ से कहा था कि तेरा पति तुझे स्वप्न में आय मिलेगा उसे ढुँढवाय लीजो सो वर आज रात मुझे स्वप्न में मिला मैं उसे कहाँ पाऊँ और अपने विरह की पीर किसे सुनाऊँ कहाँ जाऊँ उसे किस भाँति ढुढवाऊँ न उस का नाम जानूँ न गाम महाराज इतना कह जब ऊषा लम्बो श्वाँसें ले मुरझाय रह गई तब चित्ररेखा बोली कि सखी अब तू किसी बात की चित्त में चिंता मत कर मैं तेरे कंथको तुझे जहाँ होगा तहाँ से ढूँढ ला मिलाऊँगी मुझे तीनों लोक में जानेकी सामर्थ्य है जहाँ होगा तहाँ जाय ले मिलाऊँगी मुझे उसका नाम बता और जाने की आज्ञा दे ऊषा बोली बीर सुन कहावत है कि मरी और साँस न आई जो मैं उस का नाम गाम जानती होती तो दुःख काहे का था कुछ न कुछ उपाय करती यह बात सुन चित्ररेखा बोली सखी तू इस बात को भी सोच न कर मैं तुझे त्रिलोकी के पुरुष लिख २ दिखाती हूँ तू उस में से अपने चित-चोर को देख बता दीजो फिर ला मिलाना मेरा काम है तब तो हँस कर ऊषा बोली अच्छा। महाराज यह बचन ऊषा के मुख से निकलते ही चित्ररेखा लिखने का सामान मँगवाय आसन मार बैठी और गणेश शारदा को मनाइ गुरु का ध्यान कर लिखने लगी पहले तो उसने तीन लोक चौदह भुवन सात द्वीप नौखंड

पृथ्वी आकाश सातों समुद्र आठोंलोक बैकुण्ठ सहित लिख दिखाये पीछे सब देव दानव गन्धर्व किन्नर यक्ष मुनि ऋषि मुनि लोकपाल और सब देशों के भूपाल लिख २ एक २ कर चित्ररेखाने दिखाये पर ऊषा ने अपना चाहता उनमें न पाया फिर चित्ररेखा यदुवंशियों की शक्ल एक २ कर लिख दिखाने लगी इसमें अनिरुद्ध का चित्र देखते ही ऊषा बोली--

अब मन चोर सखी मैं पायौ । रात यही मेरे ढिंग आयौ ।
कर अब सखी तू कछू उपाय । याकों ढूँढ़ कहूँ ते लाय ॥

यों सुनाइ चित्ररेखा पुनि बोलीकि सखी ! तू नहीं जानती, मैं पहचानतीहूँ । श्रीकृष्णजी का पोता प्रद्युम्न का बेटा अनिरुद्ध इसका नाम है । समुद्र के तीर नीर में द्वारिका नाम एक पुरी है तहाँ यह रहता है हरि आज्ञा से उस पुरी का पहरा आठ पहर सुदर्शन चक्र देता है इसलिये कि कोई दुष्ट दैत्य दानव आय यदुवंशियों को न सतावै और कोई पुरी में आवे सो बिना राजा उग्रसेन शूरसेन की आज्ञा न आने पावे । महाराज ! इस बात के सुनते ही ऊषा अति उदास हो बोली कि सखी जो वह ऐसी बिकट ठौर है तो तू किस भाँति वहाँ जाइ मेरे कन्त को लावेगी चित्ररेखा ने कहा आली तू इस बात से निश्चिन्त रह, मैं हरि प्रताप से तेरे प्राणपति का ला मिलाता हूँ । इतना कह चित्ररेखा राम नाम कपड़े पहन गोपीचन्दन का त्रिपुण्ड तिलक काढ़ छापे उर भूल भुज और कंठ लगाय बहुत सी तुलसी की माला गले में डाल हाथ में बड़े २ तुलसी के हारों की सुमिरनी ले ऊपर ते हिरावल ओढ़ काँख में आसन लपेट भगवत गीता को पोथी दबाय परम भक्त वैष्णव का भेष बनाय ऊषा को यों सुनाय बिदा हो द्वारिका को चली ।

दो०--मारग अब आकाश के, अन्तरिच्छ हो जाऊँ । लाऊँ तेरे कन्त को, चित्ररेखा तो नाऊँ ॥

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी बोलेकि महाराज चित्ररेखा अपनी मायाकर पवन के तुरङ्ग पर चढ़ अँधेरी रात्रि में श्यामघटा के साथ बात की बात में द्वारिकापुरी में जाय बिजली सी चमकी और कृष्णचन्द्र जी के मन्दिर में बढ़ गई ऐसे कि इसका आना किसी ने नहीं जाना आगे यह ढूँढ़ती २ वहाँ गई जहाँ पलङ्ग पर सोये अनिरुद्धजी अकेले सपने में ऊषा के साथ बिहार कर रहे थे इसने देखते ही उस सोते को पलङ्ग समेत उड़ाय झट अपनी बाट ली ।

सोमवती परयंक समेत । लिए जात ऊषा के हेत ॥

महाराज ! पलँग समेत अनिरुद्धको देखते ही ऊषा पहले तो हकबकाई चित्र रेखा के पावों पर जाय गिरी, पोछे यों कहने लगी धन्य है सखी तेरे साहस और पराक्रम को, जो कठिन ठौर जाय बात की बात में पलङ्ग समेत उठा लाई और अपनी प्रतिज्ञा पूरी की, मेरे लिए तैंने इतना कष्ट किया, इसका पलटा मैं तुझे नहीं दे सकती, तेरे गुण की ऋणियाँ रही चित्ररेखा बोली सखी ससार में बड़ा सुख यही है जो पर को सुख दीजै और कारज भी भला यही है कि पर उपकार कीजै यह शरीर किसी काम का नहीं इससे किसी का काम हो सके तो यही बड़ा काम है इसमें स्वार्थ परमार्थ होते हैं, महाराज इतना बचन सुनाय चित्ररेखा पुनि यों कह बिदा हो अपने घरगई कि सखों भगवान के प्रताप से तेरा कन्त मैंने ला मिलाया,ऊषा प्रसन्न हो प्रथम मिलन का भय लिये मन ही मन यों कहने लगी—

अनिरुद्ध को ले आइ वहाँ । ऊषा चिंतित उठी जहाँ ॥

निदान वीणा मिलाय मीठे २ स्वरों से बजाने लगी वीणा की ध्वनि सुनते ही अनिरुद्ध जी जाग पड़े और चारों ओर देख मन ही मन यों कहने लगे यह कौन ठौर किसका मन्दिर मैं यहाँ कैसे आया और मुझ सोते का पलँग समेत कौन उठा लाया । महाराज!उसकाल अनिरुद्धजी तो अनेक प्रकार की बातें कह कर अचरज करते थे और ऊषा संकोच किये एक कौने में खड़ी पियाका चन्द्रमुख देख निरख अपने लोचन चकोरों को सुख देती थी इस बोच—

कहा बात कहा पियहि जगाऊँ । कैसे भुज भर कण्ठ ल ाऊँ ।
अनिरुद्ध देखिके कहें अकुलाय । कहौ सुन्दरी अपने मन भाय ॥
है तू को मो पै क्यों आई । कै तू आप मोहि ले आई ॥
साँच झूँठ ऐकौ नहिं जानों । सपनों सो देखत हों मानों ॥

महाराज ! अनिरुद्ध जी की यह बात सुन ऊषा ने कुछ उत्तर न दिया, वह और भी लाज कर कौने में सट रही तब तो उन्होंने झट इसे हाथ पकड़ पलङ्ग पर ला बिठाया और प्रीति सनी प्यार की बातें कह उसके मनका सङ्कोच और भय मिटाया, आगे वे दोनों परस्पर सेज पर बैठ हाव-भाव कटाक्ष कर सुख लेने देने लगे और प्रेम कहानी कहने, इस बीच में अनिरुद्ध जी ने ऊषा से पूछा हे सुन्दरी

तूने पहले मुझे कैसे देखा और पीछे किस भाँति यहाँ मँगवाया इसका भेद समझा कर कह जो मेरे मनका भ्रम जाय इतनी बात के सुनते ही ऊषा पति का मुख निरख हर्ष से बोली।

मोहि मिले तुम सपने आय। मेरो चित ले गये चुराय॥
जागी मन मारो दुःख लयौ। तब मैं चित्ररेखा से कह्यौ॥
सोई प्रभु तुमको यहाँ लाई। ताकी गति जानी नहि जाई॥

इतना कहि पुनः ऊषा ने कहा महाराज मैंनेतो जिस भाँति तुम्हें देखा और पाया तैसे सब कह सुनाया अब आप कहिये अपनी बात समझाय जैसे तुमने मुझे देखा यादवराय, यह बचन सुन अनिरुद्ध अतिआनन्दकर मुसकरायके बोले कि सुन्दरी! मैं भी आज रात को स्वप्नमें देख रहाथा कि नींदमें कोई मुझे उठाय यहाँ ले आया इसका भेद मैंने अब तक नहीं पाया कि मुझे कौन लाया। जागा तो मैंने तुझे ही देखा इतनी कथा कह शुकदेव जो बोले महाराज! ऐसे वे दोनों आपस में प्रिय प्यारी बतराय पुनि २ प्रीति बढ़ाय अनेक२ प्रकार से काम कलोल करने लगे और बिरह की पीर हरने आगे पानकी मिठाई मोतीमालानकी शीतल ताई और दीप ज्योति की मन्दताई निरख ज्यों ही ऊषा बाहर जाय देखे तो ऊषा काल हुआ चन्द्र की ज्योतिघटा तारे द्युतिहीन भये आकाश में अरुणाई छाई, चारों ओर चिड़ियाँ चुहचुहाई सरोवर में कुमुदिनी कुम्हिलाई और कमल फूले, चकवा चकई का संयोग हुआ महाराज ऐसा समय देख एक बारतो सब द्वार मूँद ऊषा बहुत घबराय घर में आय अति प्यार कर पिया को कण्ठ लगाय लेटी पीछे पिया को दुराय सखी सहेलियों से छिपाय छिप२कन्त की सेवा करने लगी निदान अनिरुद्ध का आना सखी सहेलियों ने जाना, फिर तो वह दिन रात पति के साथ सुखभोग किया करे। एक दिन ऊषाकी माता बेटी की सुधि लेने आई तो उसने छुपकर देखाकि वह एक महा सुन्दर तरुण पुरुष के साथ कोठे में बैठी आनन्द से चौपड़ खेल रही है यह देखते ही बिन बोले चाले दबे पाँव फिर मन ही मन प्रसन्न होकर आशीष देती मन मारे वह अपने घर चली गई, आगे कितने एक रोज पीछे ऊषा पति को सोते देख जी में यह बिचार कर सकुचती सकुचती घर से बाहर निकली कि कहीं ऐसा न हो जो मुझे देख अपने मन में जाने कि ऊषा

पति के लिये घर से नहीं निकलती। महाराज ! ऊषा कन्तको अकेला छोड़ते तो छोड़ गई, पर उससे रहा न गया, फिर घर में आय किवाड़ लगाय बिहार करने लगी यह चरित्र देख पहरियों ने आपस में कहा कि भाई आज क्या है जो राज-कन्या अनेक दिन पीछे घर में से निकली और फिर उलटे पाँवों चलीगई इतनी बात के सुनते हो उसमें से एक बोला कि भाई मैं कई दिन से देखता हूँ ऊषा के मन्दिर का द्वार दिन रात लगा रहता है और घर के भीतर कोई पुरुष हँस हस के बात करता है और चौपड़ खेलता है, दूसरे ने कहा जो यह बात सच है तो, चलो बाणासुर से जाय कहैं समझ बूझ यहाँ क्यों बैठे रहें।

एक कहै कुछ कही न जाय। तुम सब बैठ रहो अरुझाय॥
भली बुरी होवे सो होय। होनहार मेटे नहिं कोय॥
कछु न बात कुँवर की कहिये। चुप है के बैठे हो रहिये॥

महाराज ! द्वारपाल आपस में ये बात करते ही थे कि एक योधा साथ लिये फिरता २ बाणासुर वहाँ से आ निकला और मन्दिर के ऊपर दृष्टि कर शिवजी की दी हुई ध्वजा न देख बोला कि यहाँ से ध्वजा क्या हुई ? द्वारपालों ने उत्तर दिया कि महाराज वह तो बहुत दिन हुए टूट कर गिर पड़ी इस बात के सुनते ही शिवजी का बचन स्मरण कर भावुक हो बाणासुर बोला-

कबकी ध्वजा पताका गिरी। बैरी कहूं अवतरो हरी।

इतना बचन बाणासुर के मुख से निकलते ही एक द्वारपाल सन्मुख खड़ा हो हाथ जोड़ शिर नाय बोला कि महाराज एक बात है पर मैं कह नहीं सकता जो आपकी आज्ञा पाऊँ तो ज्यों की त्यों कह२ नाऊँ बाणासुर ने आज्ञा दी अच्छा कह तब पौरियाँ बोला महाराज अपराध क्षमा हो कई रोज से हम देखते हैं कि राज कन्याके महल में कोई पुरुष आया है वह दिनरात बात किया करता है इसका भेद हम नहीं जानते कि वह कौन पुरुष है और कहाँ से आया है और क्या करता है इतनी बात सुनते ही बाणासुर अति क्रोध कर अस्त्र उठाय दबे पाँवों अकेला ऊषा के महलों में जाय छिपाकर क्या देखता है कि एक पुरुष श्याम वर्ण अति सुन्दर पीटपट ओढ़े निद्रा में अचेत ऊषा के सङ्ग सोया पड़ा है।

सोचत बाणासुर यों हिये। होय पाप सोवत बध किये॥

महाराज ! यों मन ही मन बिचार वाणासुर ने कई एक रक्ष वाले वहाँ रक्ष इनसे कहा कि तुम इसके जगते ही हमें आय कहियो फिर अपने घरजाय सभा कर सब राक्षसों को बुलाय कहने लगा कि मेरा बैरी आन पहुँचा है तुम सब दल से ऊषा का महल जाय घेरो पीछे से मैं भी आता हूँ आगे इधर तो बाणासुर की आज्ञा पाय सब राक्षसों ने पहुँच ऊषाके महल को घेरा और इधर अनिरुद्धजी और राजकन्या निद्रा में चौंक पंसासार खेलने लगे इतने में चौपड़ खेलते २ ऊषा क्या देखता है कि चहूँ तरफ से घनघोर घटा घिर आई बिजली चमकने लगी दादुर मोर पपीहे बोलने लगे महाराज पपीहा की बोली सुनते ही राजकन्या इतनी कह पिय के कंठ लगी।

तुम पपीहा पिय पिय मत करौ। यह वियोग भाषा परि हरौ॥

इतने में किसीने जाय बाणासुर से कहा महाराज तुम्हारा बैरी जागा बैरी का नाम सुनते ही बाणासुर महा कोप करके उठा और हथियारले ऊषा की पौरि में आय खड़ा हुआ और लगा छिप कर देखने निदान देखते देखते–

बाणासुर यों कहै हुंकार। को है रे तू गेह मँझार॥
घनतन वरण मदन मनहारी। कमल नयन पीताम्बर धारी॥
अरे चोर बाहर किन आवें। जान कहाँ अब मासों पावें॥

महाराज बाणासुरने यों कहे बैन, तब ऊषा अनिरुद्ध सुन देख भयेनिपट अचेन, पुनि राजकन्या ने अति चिन्तातुर हो लम्बी स्वाँस ले पति से कहा कि महाराज मेरा पिता असुर दल ले चढ़ आया,अब आप कैसे बचोगे।

दोहा–तबहिं कोप अनिरुद्ध कह्यौ, मति डरपे तू नारि।
स्यार झुण्ड राक्षस असुर, पल में डारौ मारि॥

ऐसा कह अनिरुद्धजी ने वेद मन्त्र पढ़ एकसौ आठहाथ की शिला बुलाय हाथ में ले बाहर निकल दल में जाय बाणासुर को ललकारा, इनके निकलते ही बाणासुर धनुष चढा सब कटक ले अनिरुद्ध जी पर यों टूटा कि मधुमक्खियों का झुण्ड किसी पै टूटे जब राक्षस अनेक२ प्रकार के अस्त्र चलाने लगे तब क्रोध कर अनिरुद्ध जो ने शिला के हाथ कई एक ऐसे मारे कि सब असुर दल काईसा फट गया। पुनि बाणासुर जाय उनको घेर लाया और युद्ध करने लगा,महाराज

जितने अस्त्र शस्त्र असुर चलाते तितने इधर उधर हो जाते थे और अनिरुद्ध जी के अङ्ग में एक भी अस्त्र शस्त्र न लगता था।

जो अनिरुद्ध पर परें हथियार। अधबर कटें शिला की धार॥
सिला प्रहार सदा नहिं परें। बजुर चोट ज्यों सुरपति करें॥
लागत शीश बीच ते फटे। टूटहिं जाँघ भुजा वर कटै॥

निदान लड़ते २ जब बाणासुर अकेला रह गया और सब कटक कटगया तब उसने मन ही मन अचरज कर इतना कह नागफाँस से अनिरुद्धजी को पकड़ बाँधा कि इस अजीत को कैसे जीतूँगा, इतनी कथा सुनाय श्री शुकदेवजी ने राजा परीक्षित से कहा कि महाराज जिस समय अनिरुद्धजी को बाणासुर नागफाँस से बाँध अपनी सभा में लेगया उस काल अनिरुद्धजी मन ही मन बिचारते थे, मुझे कष्ट तो होता है पर ब्रह्मा का बचन झूँठा करना उचित नहीं क्यों कि जो मैं नागफाँससे बचकर निकलूँगा तौ उसकी अमर्यादा होगी इससे बँधारहना भला है और बाणासुर यह कह रहाथा अरे लड़के! मैं तुझे अब मारता हूँ जो कोई तेरा सहायक हो तौ तू बुला, इस बीच ऊषाने पिया की यह दशा सुन चित्र रेखा से कहा कि सखी धिक्कार है मेरे जीवन को जो पति मेरा दुख में रहै और मैं सुख से खाऊँ पीऊँ और सोऊँ। चित्ररेखा बोला सखी कुछ चिन्ता मत करै तेरे पतिका कोई कुछ नकर सकेगा निश्चिन्त रह अभी श्रीकृष्णजी और बलराम सब यदुवंशियों को साथ ले चढि आवेंगे और असुर दल को संहार तुझ समेत अनिरुद्ध जी को छुड़ाय ले जावेंगे उनकी यहरीति है कि जिसकी सुन्दर कन्या सुनते हैं तहाँ से छल बलकर जैसे बने तैसे ले जाते हैं उन्हींका यह पोता है जो कुन्दनपुर के राजा भीष्मक की बेटी रुक्मिणी जी को महाबली बड़ेप्रतापी राजा शिशुपाल और जरासिंधु से संग्राम कर ले गए थे, तैसे ही अब तुझे ले जाँयगे। किसी बात की कुभावना मत कर, ऊषा बोलीसखी यहदुख मुझसे सहा नहींजाता।

नाग फाँस बाँधे पिय हरी। दहे गात ज्वाला विष भरी।
हौं कैसे पोंढ़ों सुख चैन। पिय दुख क्यों कर देखों नैन॥

महाराज! चित्ररेखा से ऐसे कह जब ऊषा कन्त के निकट जाय निडर निशंक हो बैठी तब किसी ने बाणासुर को जाय सुनाया कि महाराज राज कन्या

घर से निकल उस पुरुष के पास गई। इतनी बात के सुनते ही बाणासुर ने पुत्र स्कन्ध को बुलाय के कहा कि बेटा तू अपनी बहिन को सभा में से उठाय घर ले जाय पकड़ रख और निकलने न दे। पिता की आज्ञा पाते ही स्कन्ध बहन के पास जाय अति क्रोध कर बोला कि तैंने यह क्या किया? पापिनी छोड़ी लोक लाज और कान आपनी, हे नीच मैं तुझे क्या बध करूँ ऊषा बोली कि भाई जो तुम्हें भावे सो कहो और करो, मुझे पार्वतीजी ने जो वर दिया सो मैंने पाया, अब इसे छोड़ और को ध्याऊँ तौ अपने को गाली चढ़ाऊँ। तजती है पति को अकुलीन नारी, यह रीति परम्परा से चली आती है। बीच संसार जिस विधना ने सम्बन्ध किया बसी के साथ जगत में अपयश लिया तौ लिया महाराज इतनी बात के सुनते ही स्कन्ध क्रोध कर हाथ पकड़ ऊषा को तहाँ से मन्दिर में उठा लाया और फिर जाने न दिया पुनि अनिरुद्धजी को भी वहाँ उठाय कहीं अन्त ले जाय बन्द कर दिया उस काल इधर अनिरुद्ध जी त्रिया के वियोग में महा शोक करते थे और इधर राजकन्या कन्त के बिरह में अन्न पानी तज कठिन योग करने लगी एक दिन नारद मुनि ने पहले तो अनिरुद्ध जी को जाय समझाया कि तुम किसी बात की चिन्ता मत करो। अभी श्रीकृष्णचन्द्र बलराम राक्षसों के साथ संग्राम कर तुम्हें छुड़ाय ले जावेंगे। पुनि बाणासुर को जाय सुनाय कि राजा जिसे तुमने नाग फाँस से पकड़ बाँधा है वह श्रीकृष्ण का पोता और प्रद्युम्नका बेटा अनिरुद्ध उस का नाम है तुम यदुवंशियों को भली भाँतिसे जानते हो जो चाहो सो करो, मैं तुम्हें सावधान करने आया था सो कर चला। यह सुन बाणासुर ने नारद जी को बिदा करते हुए कहा कि मैं यह सब जानता हूँ।

अध्याय–६४

श्रीशुकदेवजी बोले कि, महाराज! जब अनिरुद्ध को बँधे बँधे चार महीने हो गये तब नारद जी द्वारिकापुरी को गये तो वहाँ क्या देखते हैं कि सब यादव महा उदास मन मलीन दीन हो रहे हैं और श्रीकृष्ण बलरामजी उन के बीच में बैठ अति चिन्ता कर रहे हैं कि बालक को उठाय यहाँ से कौन ले गया। नारद जी के जाते सब लोग स्त्री व पुरुष उठि धाये और अति व्याकुल तन खीन मन

(ऊषा अनिरुद्ध विवाह)

मलीन रीते बिलखते सन्मुख खड़े हुए। आगे अति बिनती कर हाथ जोड़ शिर नाय हाहा खाय नारद जी से सब से पूछने लगे।

साँची बात कहौ ऋषिराय। जाते जिय राखे विरमाय॥
कैसे सुधि अनिरुद्ध जी लहैं। कहौ साधु ताके बल दहैं॥

इतनी बात के सुनते ही नारदजी बोले कि आप किसी बात की चिन्ता मत करो और अपने मन का शोक हरो अनिरुद्ध जी जीते जागते शोणितपुरमें हैं वहाँ उन्हने जाय बाणासुर की कन्या से भोग किया,इसलिये उसने उन्हें नाग-पाससे पकड़ बाँधा है,बिना संग्राम किये वह किसी भाँति अनिरुद्धजी को न छोड़ेगा यह भेद मैंने आपको कह सुनाया। यों कह नारद मुनि तौ चले गये पीछे सब यदु-वंशियों ने आय राजा उग्रसेन से कहा कि महाराज हमने ठीक समाचार पाया कि अनिरुद्ध जी शोणितपुर में बाणासुर के यहाँ हैं, उन्होंने उन की कन्या रमी इससे उसने इन्हें नागपाश से बाँध रखा है अब हमें क्या आज्ञा होती है? इतनी बात के सुनते ही राजा उग्रसेन ने कहा कि तुम हमारी सब सेना ले जाओ और जैसे बने तैसे अनिरुद्धजी को छुड़ालावो ऐसा बचन सुनते ही सब यादव तो राजा उग्रसेन का कटक ले बलरामजीके साथ हुए और श्रीकृष्ण और प्रद्युम्न जी गरुड़ के कन्धेपर चढ़ सबसे पहले शोणितपुर को गए। श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! जिस काल बलरामजी राजा उग्रसेनकी सब सेना ले द्वारिकापुरी से धौंसा दे शोणितपुर को चले उस समय की शोभा कुछ वर्णी नहीं जाती।

यही रेणु आकशि लौं आई। छिपो भानु तम फलयो भाई॥
चकई चकवा भयो वियोग। सुन्दरि करै कन्त सों भोग॥
फूले कमल कुमुद कुम्हिलाने। निश्चर फिरहि निशा जियजाने॥

शुकदेवजी बोले कि महाराज! जिस समय बलरामजी बारह अक्षौहिणी सेना ले अति घूमधाम से उसके गढ़, गढ़ी, कोट तोड़ते और देश उजाड़ते त्यों शोणितपुरमें पहुँचे और श्रीकृष्णचंद्र व प्रद्युम्नजी आय मिले, तिसी समय किसी ने अति भय खाय, घबराय हाथ जोड़ शिर नाय, बाणासुर से कहा कि महाराज! कृष्ण बलराम अपनी सेनाले चढ़आये और उन्होंने हमारे देश के गढ़ गढ़ी कोट ढहाय गिराये और नगर को चारों ओर से आय घेरा अब क्या आज्ञा होती है? इतनी बात के सुनते ही बाणासुर महा क्रोध कर अपने बड़े२ राक्षसों को बुलाय बोला तुम सबदल अपना लेजाय नगरके बाहरजाय श्रीकृष्ण बलराम के सन्मुख खड़े हो, पीछे से मैं भी आता हूँ यह आज्ञा पाते ही वह असुर बात की बात में बारह अक्षौहिणी सेना ले सन्मुख श्रीकृष्ण बलराम जा के लड़ने को अस्त्र शस्त्र लिये आ खड़े हुए उनके पोछे श्रीमहादेवजी का भजन सुमिरण कर बाणासुर आ उपस्थित हुआ। शुकदेव मुनिजी बोले कि महाराज! ध्यान करते ही शिवजी का आसन डोला और ध्यान धर जाना कि मेरे भक्त पर भीर पड़ रही है इस समय चलकर उसकी चिंता मेटनी चाहिये।यह मन ही मन बिचार कर पार्वतीको अर्द्धाङ्ग धर जटा जूट बाँध भस्म चढ़ाय बहुत सी भाँग, आक, धतूरा खाय श्वेत नागों का जनेऊ पहन गज-चर्म ओढ़ मुण्डमाल, सर्प, पहन त्रिशूल, डमरू पिनाक खप्पर, ले नन्दी पर बैठ भूत, प्रेत पिशाचनी, डाकिनी, शाकिनी आदि सेनाले चले। भोले नाथ की उस समय की कुछ शोभा वर्णी नहीं जाती कि कान में गज मणियों की मुद्रा, ललाट में चन्द्रमा, शिर पर गंगा धरे, लाल लोचन करे, महाराज अति भयङ्कर वेष की मूर्ति बनाये इस रीति से बजाते गाते सेना को नचाते जाते थे कि वह रूह देखते ही बनि आवे कहने में न आवे निदान कितनी बेर में शिवजी अपनी सेना ले वहाँ पहुँचे कि जहाँ असुर दल लिये बाणासुर खड़ा था। हर को देखते ही बाणासुर हर्ष से बोला कि कृपासिन्धु आप बिन कौन इस समय सुधि लेता।

तेज तुम्हारा इनको दहैं। यादव कुल अब कैसे रहैं॥

यों सुनाय फिर कहने लगा कि महाराज! इस समय धर्म युद्ध करो और एक एक के सन्मुख हो लड़ो। महाराज! इतनी बात जो बाणासुर ने मुख से निकाली तो इधर असुर दल लड़ने को खड़ा हुआ और यदुवंशी आ उपस्थित हुए दोनों ओर जुझाऊ बाजे बजने लगे शूरवीर योधा अस्त्र शस्त्र सजाने और अधीर नपुंसक कायर खेत छोड़ २ जी को लेके भागने, उसकाल महाकाल स्वरूप शिवजी श्रीकृष्णचन्द्रजी के सन्मुख बाणासुर, बलरामजी सोंही हुआ। स्कन्ध प्रद्युम्नजी से आइ भिड़ा और इस तरह एक से एक गुट गया व दोनों ओर से शस्त्र चलने लगे, धनुष पिनाक महादेवजी के हाथ इधर शारङ्ग धनुष लिये यदुनाथ। शिवजी ने ब्रह्मबाण चलाया श्रीकृष्णजोने ब्रह्मशस्त्र से काट गिराया, फिर रुद्र ने चलाई महाबयार, सो हरि ने तेज से दीनी टार। पुनि महादेवजी ने अग्नि प्रगटाई, वह मुरारी ने मेह बरषाय बुझाई, और एक महाज्वाला उपजाई सो शिव दल में धाई, उसने डाढ़ी मूँछ जलाय दीने, जब असुर दल जलने लगा और बड़ा हाहाकार हुआ तब भोलानाथ ने जले अधजले राक्षसों और भूतों प्रेतों को जल वर्षाके ठण्डा किया और खुद अति क्रोध कर नारायणबाण चलाने को लिया, पुनि मन ही मन कुछ समझ नहीं चलाया रख दिया फिर तो श्रीकृष्ण आलस्यबाण चलाय सबको अचेत करने लगे असुरदल काटने ऐसे कि किसान खेती काटे यह हाल देख जो महादेवजी ने अपने मन में सोच कर कहा कि प्रलय बिना किये नहीं बनता त्योंही स्कन्द मोर पर चढ़ आया और अन्तरिक्ष मार्गहो उसने श्रीकृष्ण जी की सेना पर बाण चलाया।

तब हरि सों प्रद्युम्नउच्चारे। मोर ऊपर आकाश में हर॥
आज्ञा देहु युद्ध अति करे। मारों अबहि भूमि पर गिरे॥

इतनी बात के सुनते ही प्रभुने आज्ञा दी प्रद्युम्नजी ने एक बाण मारा सो जा मोर को लगा तब स्कन्द नीचे गिरा स्कन्द के गिरते ही बाणासुर महा कोप कर पाँचसौ धनुष चढ़ाय एक २ धनुष पर दो दो बाण धर लगा मेह सा बरसाने और श्रीकृष्णचन्द्रभी बीच ही से लगे काटने उसकाल महाराज इधर उधर के मारू

ढोल ढप बजते थे कड़खेत धमारसी गाते थे, धारों से लोहू की धार पिचकारियाँसी चलती थीं जिधर तिधर लाल २ लोहू गुलाल सा दृष्टि आता था बीच २ भूत प्रेत पिशाच जो भाँति २ के वेश भयावने बनाये फिरते थे सो भगत सी खेल रहे थे और खून की नदी बह निकली थी लड़ाई क्या दौनों ओर होली सी हो रही थी इससे लड़ते २ कितनी एक बेर पीछे श्रीकृष्णचन्द्रजी ने एक बाण ऐसा मारा कि उसके रथका सारथी उड़ गया और घोड़े भड़के निदान रथ वान के मरते ही बाणासुर भी रण छोड़ भागा श्रीकृष्णचन्द्रजीने उसका पीछा किया इतनी कथा सुनाइ श्रीशुकदेवजी बोले महाराज बाणासुर के भागने का समाचार पाय उसकी माँ जिसका नाम कोटरा था सो उसी समय भयानक वेष छुटे केश नंगो भुजंगी आ श्रीकृष्णजी के सन्मुख खड़ी हुई और लगी पुकारने।

देखत ही प्रभु मूँदे नैन। पीठ दई ताके सुन बैन॥
तब लों बाणासुर भजगयो। फिर अपनो दल जोरत भयो॥

महाराज जबतक बाणासुर एक अक्षौहिणी दल साज वहाँ आया तब तक कोटरा श्रीकृष्णजी के आगे से न हटी पुत्र सेना देख अपने घर गई, आगे बाणासुर ने आय घोर संग्राम किया पर प्रभु के सन्मुख न डटा फिर भाग महादेवजी के पास गया बाणासुर को भयातुर देख शिवजी ने अति क्रोध कर महा बिषमज्वर को बुलाय श्रीकृष्णजी की सेना पर चलाया वह महाबली बड़ा तेजस्वी जिसका तेज सूर्य के समान दो मुण्ड एक पग दो कर वाला त्रिलोचन, भयानक वेष, श्रीहरि के कटक को आ घेरा उस तेजसे यदुवंशी जलने लगे और थर थर काँपने लगे निदान अति दुख पाय घबराय यादवों ने आइ श्रीहरि से कहा महाराज! शिवजी के ज्वर ने आय सारे कटक को जला मारा अब इसके दाव से बचाइये, नहीं तो एक भी यादव जीता न बचेगा महाराज इतनी बात सुन और सब को कातर देख हरि ने शीत ज्वर चलाया वह महादेव के ज्वर पर धाया इसे देखते ही वह डर कर पलाया और चल के सदा शिवजी के पाँस आया।

तब ज्वर महादेव सों कहै। राखहु शरण कृष्ण ज्वर दहै॥

यह बचन सुन महादेवजी बोलेकि कृष्णचन्द्रजी के ज्वर को बिन श्रीहरि ऐसा त्रिभुवन में कोई नहीं जो हरै, इससे उत्तम यहीहै कि तू भक्त हितकारी श्रीमुरारी

के पास जा। शिव बचन सुन सोच बिचार विषम ज्वर श्रीहरि आनन्दकन्दजी के सन्मुख हाथ जोड़ बिनतीकर बोला हे कृपासिन्धु, पतितपावन दीनदयाल! मेरा अपराध क्षमा कीजो अपने ज्वर से बचाय लीजो।

प्रभु तुम हो ब्रह्मादिक ईश। तुम्हरी शक्ति अगम जगदीश॥
तुम ही रच कर सृष्टि सम्हारी। सब माया जगकृष्ण तुम्हारी॥

इतनी स्तुति सुनते ही हरि दयालु हो बोले तू मेरी शरण आया इस से बचा, नहीं तो जीता न बचता, मैंने तेरा अब का अपराध माफ किया पर फिर मेरे भक्त और दासों को मत व्यापियो तुझे मेरी ही आन है ज्वर बोला कृपासिंधु जो इस कथा को सुनैगा उसे शीत ज्वर ऐकतरा और तिजारी कभी न व्यापेगा पुनि २ श्रीहरि बोले कि तू अब महादेव के पास जा यहाँ मत रह, नहीं तो मेरा ज्वर तुझे दुख देगा आज्ञा पाते ही विदा हो दण्डवत् कर विषमज्वर सीधा महादेव के पास गया और ज्वरकी सब बाधा मिट गई। इतनो कथा कह श्रीशुकदेव जी बोले कि महाराज!

यह सम्वाद सुने जो कोय। ज्वर को डर ताको नहिं होय॥

आगे बाणासुर अति कोपकर धनुष बाण ले प्रभुके सन्मुख आ ललकारके बोला।

तुमते युद्ध कियो मैं भारी। तो हुँ साधु न पुजा हमारी॥

जब यह कह लगा सब हाथों से बाण चलाने तब भक्तहितकारी श्री हरि ने सुदर्शन चक्र से उसके चार हाथ छोड़ सब काट डाले ऐसे कि जैसे कोई बात के कहते पेड़ के गुद्दे को छाँट डाले हाथों के कटते ही बाणासुर शिथिल हो गिरा घावों से खून की नदी बह निकली जिस में भुजायें मगर मच्छ सी दीखती थीं। कटे हुए हाथियों के मस्तक घड़ियाल से डूबते उछलते जाते थे बीच २ में रथ बड़े नगाड़े से बहे आते थे और जिधर तिधर रण भूमि में श्वान, स्यार गीध आदि पशु पक्षी लोथ को खेंच २ आपस में लड़ लड़ झगड़ २ फाड़ खाते थे कौवे शीशों से आँखें ले उड़ जाते थे श्रीशुकदेवजी बोले महाराज रणभूमि की यह गति देख बाणासुर अति उदास हो पछिताने लगा निदान निर्बल हो सदा शिव जी के निकट गया।

कहत शिष्य मन माँहिं बिचारी। अब हरिकी कीजे अनुहारी॥

इतना कह श्रीमहादेवजी बाणासुर को साथ ले वेदपाठ करते वहाँ आये कि जहाँ रण भूमि में श्रीकृष्णचन्द्र खड़े थे, तहाँ बाणासुर को पावों पर डाल शिव जी हाथ जोड़ बोले कि हे शरणागतवत्सल ! अब यह बाणासुर आपकी शरण है इस पर कृपादृष्टि कीजै और इसका अपराध मन में न लीजै तुम बारम्बार अवतार लेते हो भूमि का भार उतारने को और दुष्ट हनन और संसार के तारने को, तुम तो प्रभु अलख अभेद अनन्त भक्तों के हेतु ही आय प्रगटे हो भगवन्त, नहीं तो सदाँ रहते हो विराट स्वरूप तिसका यहहै रूप स्वर्ग शिर, नाभि आकाश, पृथ्वी पाँव,समुद्र पेट, पर्वत नख,बादल केश, वाम बृक्ष, लोचन शशि, और भानु मन, रुद्र अहंकार पवन श्वास, पलक लगना रात दिन, गर्जन शब्द ।

ऐसौ रूप सदा अनुसरौ । काहू पै नहिं जाने परौ ।।

और यह संसार दुख का समुद्रहै इस में चिन्ता और मोहरूपी जल भरौहै। प्रभु नाम नाव के सहारे बिन कोई इस महा कठिन समुद्र के पार नहीं जा सकता और यों तौ बहुतेरे डूबते उछलतेहैं। जो नर देह पाकर तुम्हारा सुमिरण और जप न करेगा सो भूलेगा धर्म और बढ़ायेगा पाप,जिसने संसार में आय तुम्हारा नाम न लिया तिसने अमृत छोड़ विष पिया ।

जिनके हृदय बसो तुम आय । भक्ति मुक्ति तिहि मिल गुणगाय ।।

इतना कह पुनि महादेवजी बोले कृपासिन्धु ! दानबन्धु ! तुम्हारी महिमा अपारहै किसे इतनी सामर्थ्यहै जो उसे बखानै और तुम्हारे चरित्रों को जाने अब मुझ पर कृपा करके इस बाणासुर का अपराध क्षमा कीज और इसे अपनी भक्ति दीजे, यह भी तुम्हारी भक्ति का अधिकारी है, क्योंकि भक्त प्रहलाद का वंश अन्शहै श्रीहरिजी बोले कि शिवजी हम तुममें कुछ भेद नहीं और जो भेद समझेगा वह महा नरक में पड़ेगा और कभी न पावेगा पार जिसनै आपको ध्याया उसनै अन्त समय मुझे पाया जिसने निष्कपट आपका नाम लिया तिससे मैंनेइसे चतुर्भुज रूप दिया जिसे आपने बर दिया और दोगे तिसका निर्बाह मैंने किया और करूँगा महाराज इतना बचन प्रभु के मुख से निकलते ही शिवजो दण्डवत् कर बिदा हो अपनी सेना ले कैलाश को गये और श्रीकृष्णचन्द्रजी वहाँ ही खड़े रहे तब बाणासुर हाथ जोड़ शिर नवाय बिनती कर बोलाकि दीनानाथ !

जैसेकि आपने कृपाकर मुझेताराजैसे अबचलकर दासका घर पवित्रकीजै अनिरुद्ध जी और ऊषाको अपने साथ लीजै,इस बातको सुनतेही श्रीविहारी भक्त हितकारी प्रद्युम्नजीको साथले बाणासुरकेधाम पधारेमहाराज उसकाल बाणासुर अतिप्रसन्न हो प्रभु को बड़ी भाव भक्ति से पाटम्बर पावड़े डालता लिवा ले गया आगे–

चरण धोय चरणोदक लियो । आचमन कर माथे पर दियो ॥

पुनि कहने लगा कि जो चरणोदक सबको दुर्लभ है सो मैंने हरि की कृपा से पाया और जन्म २ का पाप गँवाया यह चरणोदक त्रिभुवन को पवित्र करता है इसीका नाम गङ्गा है इसे ब्रह्मा ने कमंडलमें धरा शिवजी ने शीश पर धारापुनि सुरमुनि ऋषि ने माना और भागीरथजी तीनों देवताओं को तपस्या कर संसारमें लाये तबसे इसका नाम भागीरथी हुआ, जो इसमें न्हाया उसने जन्म २ का पाप गँवाया जिसने गङ्गा जल पिया उसने निस्संदेह परमपद लिया, जिसने भागीरथ जी का दर्शन किया उसने सारे संसारको जीतलिया महाराज! इतनाकह बाणासुर अनिरुद्ध जी और ऊषा को ले आया और प्रभुके सन्मुख हाथ जोड़ कर बोला ।

छमिये दोष भावई भई । यह मैं ऊषा दासी दई ॥

यों कह वेद की रीति से बाणासुर ने कन्यादान किया और तिसके यौतुक में बहुत कुछ दिया । इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज ! ब्याहके होते ही श्रीहरि बाणासुर को आशा भरोसा दे राजगद्दी पर बैठाय पोते बहु को साथ ले बिदा हो जीत का धोंसा बजाय सब यादवों समेत आये । द्वारिकावासी नगरके बाहर आय प्रभु को लिवा लाये उसकाल पुरवासी मङ्गल गीत गाय बजाय मङ्गलचार करतेथे और राजमहलमें रुक्मिणी आदि सबसुन्दरी बधाये गाय२रीति भाँतिकरतीथीं और देवता अपने२ विमानोंपर बैठ ऊपरसे फूल बरसाय जय जयकार करतेथे और सारे नगर में आनंद होरहाथा कि उसी समय बलराम और श्री हरि सब यादवोंको विदा दे अनिरुद्ध ऊषाको साथ ले राजमहलमें जाय बिराजे ।

आनी ऊषा गेह मझारी । हरषहिं देख कृष्ण की नारी ॥
देहिं अशीष सासु उर लावें । निरख हरषि भूषण पहरावें ॥

—❀❀—

अध्याय-६५

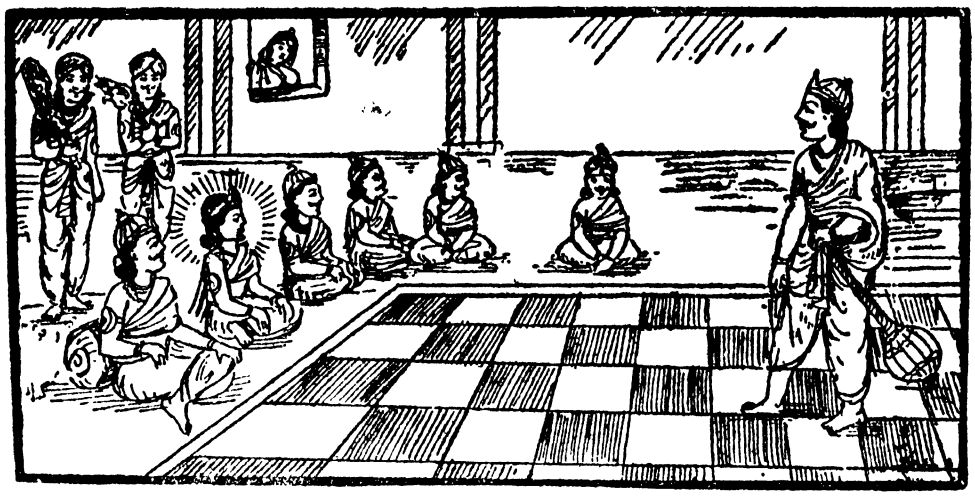

[नृगोपाख्यान]

श्रीशुकदेवजी बोलेकि महाराज ! इक्ष्वाकुवंशी राजा नृग बड़ादानीधर्मात्मा और साहसी था । उसने अनगिनत गौदान किये चाहै गङ्गा की बालू के कण, भादों के मेह की बूँदें और आकाश के तारे गिन जाँय पर राजा नृगकी दानकी गायें गिनी न जाँय । सो ऐसा ज्ञानी महादानी राजा जो थोड़े अधमसे गिरगिट हो अन्धे कुए में रहा, उसे श्रीकृष्णजीने मोक्ष दी । इतनी कथा सुन श्रीशुकदेव जी से राजा परीक्षित ने पूछा महाराज ! ऐसा धर्मात्मा राजा किस पापसे गिरगिट हो अन्धे कुए में रहा और श्री कृष्णचन्द्र जी ने कैसे उसे तारा ? यह कथा तुम मुझे समझाकर कहोजो मेरे मनका संदेहजाय । श्रीशुकदेवजी बोले महाराज ! आप चित्त दे मन लगाय सुनिये मैं ज्योंको त्यों सब कथा सुनाता हूँकि राजा नृग तो नितप्रति गौदान किया ही करते थे, पर रोज प्रातःही न्हाय संध्या पूजाकरके सहस धौली, धूमरी, काली, पीली, भूरी, कबरी गौ मँगाय रूपे के खुर, सौने के सींग ताँबे की पीठ समेत पाटम्बर उढ़ाय संकल्पी और उनके ऊपर बहुतसा अन्न धन ब्राह्मणों को दिया, वे ले अपने घर गये फिर राजा उसी तरह गौदानकरने लगा, तो एक गाय पहले दिन की सङ्कल्पी अनजान अजान में आय मिली सो भी राजा ने उन गायों के साथ दान कर दी ब्राह्मण ले अपने घरको चला । आगे दूसरे ब्राह्मणने अपनी गौ पहचान बाट में रोकी और कहा यह गाय मेरी है

मुझे कल राजा के यहाँसे मिलीथी भाईतू इसे क्योंलिये जाता है। वह ब्राह्मणबोला कि इसे तो मैं अभी राजा के यहाँ से लेकर चला आता हूँ तेरी कहाँसे हुई। महाराज! वे दोनों ब्राह्मण मेरी मेरी कर झगड़ने लगे, अन्त में झगड़ते २ वे दोनों राजाके पासगये राजा ने दोनोंकी बात सुन हाथ जोड़े अति बिनती कह कहा।

कऊ लाख रुपैया तुम लेउ। गैया यह काहु को देउ॥

इतनी बातके सुनतेही झगड़ालू ब्राह्मण भारी क्रोधकर बोलेकि महाराज! गाय हमने जितने स्वस्ति बोल के ली सोई करोड़ रुपये पाने से भी हम न देंगे वह तो हमारे प्राण के साथ हैं। महाराज! पुनि राजा ने उन ब्राह्मणों के पावों पड़ अनेक तरह फुसलाया समझाया पर उन तामसी ब्राह्मणों ने राजा का कहना न माना, निदान महा क्रोध कर इतनी कह दोनों ब्राह्मण गाय छोड़ चले गये कि महाराज! गाय आपने सङ्कल्प कर हमें दी और हमने स्वति बोल हाथ पसार ली वह गाय रुपये लेकर नहीं दी जाती, अच्छा तो तुम्हारे यहाँ रही तो कुछ चिन्ता नहीं, महाराजा! ब्राह्मणों के जाते पहले तो राजा नृग अति उदास हो मन ही मन में कहने लगा कि यह अधर्म मुझ से अनजाने में हुआ है सो कैसे छूटेगा। पीछे अति दान पुण्य करने लगा कितने एक दिन बीते राजा नृग काल वश हो मर गया। उसे यम के गण धर्मराज के पास ले गये। धर्मराज राजा को देखते ही सिहासन से उठ खड़ा हुआ पुनि भाव भक्ति कर आसन पर बैठाय अति हित कर बोला महाराज! तुम्हारा पुण्यहै बहुत और पाप है थोड़ा कहो पहले क्या भुगतोगे?

सुन नृग कहत जोरि कर हाथ। मेरे धर्म टरे जनि नाथ॥
पहले मैं भुगतोंगौ पाप। तन धरि कें सहियों संताप॥

इतनी बात के सुनते ही धर्मराज ने राजा नृग से कहा कि महाराज! तुमने अनजाने में जो दान दी हुई गाय फिर दान दो, उसी पाप से आपको गिरगिट हो बन बीच गोमती तीर, अन्धे कुए में रहना होगा, जब द्वापर के अन्त में श्री कृष्णचन्द्र अवतार लेंगे तब तुम्हें वह मोक्ष देंगे, महाराज! इतना कह वह धर्मराज चुप हो रहा और राजा नृग उसी समय गिरगिटहो अन्धे कुएमें जा गिरा और जीव भक्षण कर वहाँ रहने लगा। आगे युग बीते द्वापर के अन्तमें श्रीकृष्ण

ने अवतार लिया और ब्रजलीला कर द्वारिकाको गये और उनके बेटे पोते भये तब एकदिन कितने एक श्रीकृष्णजी के बेटे पोते मिल अहेर को गये और बन में अहेर करते करते प्यासे भये तब वे बनमें जल ढूँढ़ते ढूँढ़ते उसी अन्धे कुए पर गए जहाँ राजा नृग गिरगिट का जन्म ले रहता था और कुए में झाँकते ही एक ने पुकार के सब से कहा अरे भाई इस कुएमें कितना बड़ा एक गिरगिट है इननीबात के सुनते सब दौड़ आए और कुएमें पनघट पर खड़े हो लगे फेंट पगड़ी मिलाइ लटकाइ लटकाइ उसे काढ़ने आपस में यों कहनो लगे कि भाई इसे बिन कुए से निकाले हम यहाँ से न जाँयगे महाराज जब वह पगड़ी फेंटी को रस्सी से न निकला तब उन्होंने गाँव से सन सूत मूँज चाम की मोटी भारी बरतें मँगवाई और कुए में फाँस गिरगिट को बाँध बल कर खेंचने लगे पर वह वहाँ से मसका भी नहीं तब किसी ने द्वारिका में जाय श्री हरि से कहा महाराज ! बन में अन्धे कुए के भीतर एक बड़ा भारी मोटा गिरगिट है उसे कुँवर काढ़ हार गये पर वह नहीं निकलता इतनी बात के सुनते ही हरि उठि धाये और चले २ यहाँ आये जहाँ सब लड़के गिरगिट निकाल रहे थे। प्रभु को देखते ही सब लड़के बोले कि पिताजी देखो यह कितना बड़ा गिरगिट है हम बड़ी देर से निकाल रहे हैं पर यह निकलता नहीं, महाराज इस बचन को सुन श्रीकृष्णजी ने कुए में उतर उसके शरीर से चरण लगाया तो वह देह छोड़ अति सुन्दर पुरुष हुआ।

भूपति रूप रह्यौ गहि पांय। हाथ जोड़ विनवै शिर नाय॥

कृपासिन्धु ! आपने बड़ी कृपा की जो इस महा विपत्ति में आय मेरी सुध लो। श्रीशुकदेवजी बोले कि राजा ! जब वह मनुष्य रूप हो प्रभु से इस भाँति की बातें करने लगा तब यादवों के बालक और हरि के बेटे पोते अचरज कर श्री कृष्णचन्द्र से पूछने लगे कि महाराज ! यह कौन है और किस पाप से गिरगिट हो यहाँ रह रहा था सो कृपा कर कहौ तो हमारे मन का सन्देह जाय। उस काल प्रभु आय कुछ न कह राजा से बोले—

अपनों भेद कहैं समुझाय। जैसे सबै सुनें मन लाय॥
को हौ आप कह तें आये। कौन पाप ये काया पाये॥
सुनि नृप कहै जोरि दोउ हाथ। तुम सब जानत हौ यदुनाथ॥

उस पर आप पूछते हो तो कहता हूँ मेरा नाम है राजा नृग, मैंने अनगिनत गौ ब्राह्मणों को आपके निमत्त दीं। एक दिन की बात है कि मैंने कितनी एक गाय संकल्प कर ब्राह्मणों को दी, दूसरे दिन उन गायों में से एक गाय फिर आई सो मैंने और गायों के साथ अनजाने दूसरे दिन द्विजको दान करदी। जो वह लेकर निकला तो पहले ब्राह्मण ने गौ पहचान उससे कहा कि यह गाय मेरी है मुझे कल राजा के यहाँ से मिली है तू क्यों लिये जाता है। वह बोला मैं अभी राजा के यहाँ से लिये चला आता हूँ तेरी कैसे हुई वे दोनों विप्र इसी बात पर झगड़ते २ मेरे पास आये मैंने उन्हें समझाया और कहा कि एक गाय के पलटे मुझसे लाख गौ लो और तुम में से कोई यह हट छोट दो, महाराज मेरा कहा उन दोनों ने न माना निदान गौ छोड़ क्रोध कर दोनों चले गये मैं पछिताय २ मन मार बैठ रहा अन्त समय यम के दूत मुझे धर्मराज के पास ले गए धर्मराज ने मुझसे पूछा कि राजा तेरा धर्म है बहुत, पाप है थोड़ा कहो पहले क्या भुगतोगे मैंने कहा पाप। इस बात के सुनते ही धर्मराज बोले कि राजा तैंने ब्राह्मण को दीनी हुई गाय फिर दान की इस अधर्म से तू गिरगिट हो पृथ्वी पर आय गौमती तीर बन के बीच अन्धे कूप में रह द्वापर के अन्त में श्रीकृष्ण अवतार ले तेरे पास आवेंगे तब तेरा उद्धार होगा महाराज तभी से मैं गिरगिट रूप इस अन्ध कूप में पड़ा आपके चरण कमलों का ध्यान करता था अब आय आपने मुझे महा कष्ट से उबारा और भवसागर से पार उतारा, इतना कह राजा नृग तो विदा हो बिमान में बैठ बैकुण्ठ को गया और श्रीकृष्णचन्द्र जी सब बाल गोपालों को समझाय कहने लगे कि—

विप्रकोप जिन कोऊ करौ। मत कोऊ अन्श विप्र कौ हरौ॥
मन संकल्प ठियो जिनराखो। सच्चे बचन विप्रसों भाखो॥
बिप्रन के दियों फेर जो लेही। ताकों दँड इतौ यम देही॥
विप्रन के सेवक ह्वै रहिवो। सब अपराध बिप्र के सहिबो॥
बिप्रद्धि मानेसों मोहि माने। बिपन अरु मोहि भिन्न न जानो॥

जो मुझमें और ब्राह्मण में भेद जानेगा सो नरक में पड़ेगा और जो विप्र कोमानेगा वह मुझे पावेगा और निःसन्देह परमधाम को जावेगा महाराज यह

बात कह श्रीकृष्णजी सब को वहाँ से ले द्वारिकापुरी पधारे।

अध्याय-६६

[बलराम बृन्दावन गमन]

श्रीशुकदेवजी बाले कि महाराज एक समय श्रीकृष्णचन्द्र और बलराम मणिमय मन्दिर में बैठे थे कि बलदेवजी ने प्रभु से कहा भाई जब बृन्दावन में कंस ने बुलाबा भेजा था और हम मथुरा को चले थे सब गोपियों और नन्द यशोदा से हमने तुमने यह बचन दिया था कि हम शीघ्र ही आइ मिलेंगे सोवहाँ न जाइ द्वारिका में आइ बसे हमारी सुरत करते होंगे जो आप आज्ञा करें तो हम जन्म भूमि देख आवें और उसका समाधानकर आवें प्रभु बोलेकि अच्छा इतनी बात के सुनते ही बलरामजी सबसे बिदा हो हल मूसल ले रथ पर चढ़ सिधारे। महाराज बलराम जी जिस पुर नगर गाँव में जाते थे वहाँ के राजा आगे बढ़अति आदर कर इन्हें ले जाते थे और ये एक२ का समाधान करते चले जाते थे कितने एक रोज में चलते २ बलरामजी अवन्तिकापुरी पहुँचे। आगे गुरु से बिदा हो

विद्यागुरु को कियौ प्रणाम। दिन दस तहाँ रहे बलराम॥

नन्दजी का बलदेवजी को गले लगाना

बलदेव जी चले चले गोकुल में पधारे तो देखते क्या हैं कि बन में चारों ओर गायें मुँह बाये बिन तृण खाये श्रीकृष्णचन्द्रजी की सुरत किए बाँसुरी की तानमें मन दिये रँभाती हाँकती फिरती हैं तिनके पीछे २ ग्वाल बाल भी यश गाते प्रम

रङ्ग राते चले जाते हैं और जिधर तिधर नगर के निवासी लोग प्रभु के चरित्रऔर लीला बखान रहेहैं महाराज जन्म भूमि में जाय व्रजवासियों और गायों की यह अवस्था देख बलरामजी करुणाकर नयनों में नीर भर लाये आगे२ रथ की ध्वजा पताका देख श्रीकृष्णचन्द्र और बलराम जी का आना जान सब ग्वाल बाल दौड़ आये बलराम प्रभू के आते ही लगे एक २ के गले लगने बड़े प्रेम से कुशल क्षेम पूछने किसी ने जा नन्द यशोदा से कहा कि बलराम जी आये हैं यह समाचार पाते ही नन्द यशोदा बड़े२ गोप और ग्वाल उठ धाये और इन्हें दूरसे आते देख बलरामजी दौड़कर नन्दराय के पावों पर जाय गिरे तब नन्दजी ने अति आनन्द कर नयनों में जल भर कर बड़े प्यार से बलरामजी को कंठ से लगाया और वियोग का दुःख गमाया पुनि प्रभु ने—

गहे चरण यशुमति के जाय । अति हितकर उरलिये लगाय॥
भुज गरि भेंट कंठ गहि रही । लोचन ते जल सरिता बही ॥

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी ने राजा से कहा कि महाराज । ऐसे मिलजुल नन्दरायजी बलराम जी को घर में ले जाय कुशलक्षेम पूछने लगे कि कहो उग्रसेन बसुदेव आदि वंशज और श्रीकृष्णचन्द्र आनन्द से हैं हमारी भी सुरतिकरते हैं, बलरामजी बोले आपकी कृपा से सब आनन्द मङ्गल से हैं और सदा सर्वदा आपका गुण गाते रहते हैं । इतना बचन सुन नंदराय चुप रहे पुनि यशोदा रानी श्रीकृष्णजी की याद कर लोचन में नीर भर अति व्याकुल हो बोली कि बलदेव हमारे नयनों के तारे श्रीकृष्ण जी अच्छे हैं । बलराम जी ने कहा बहुत अच्छे हैं पुनि नन्द नन्दरानी कहनेलगे बलदेव ! जबसे यहाँसे सिधारे तबसे हमारी आँखों के सामने अन्धेरा हो रहा है हम आठ पहर उन्हीं का ध्यान किये रहती हैं और वे हमारी सुरत भुलाय द्वारिका में जाय रहे और देखौ बहन देवकी रौहिणी हमारी प्रीति छोड़ कर वहाँ ही बैठी हैं ।

मथुरा से गोकुल ढिग जान्यो । बसे दूर तब ही मन मान्यो ॥
भेटत मिलन न आवत हरी । फिर न मिले ऐसी उन करी ॥

महाराज ! इतना कह जब यशोदा रानी अति व्याकुल हो रोने लगी तब बलराम ने समझाय बहुत आशा भरोसादे उसको धीरज बँधाय पुनि आप भोजन

Post Graduate Library

कर पान खाय घर से बाहर निकलेतो देखते हैं कि सब ब्रजयुवतियाँ तन छीन मन मलीन छूटे केश मैले भेष जीहारे घर बार की सुरत बिसारे, प्रेम रङ्गराती, बिरह में ब्याकुल जिधर जिधर नजर चली जाती है महाराज ! बलराम जी को देखते ही अति प्रसन्नहो सब दौड़ी आईं और दंडवत् कर हाथ जोड़ चारों ओर खड़ी हो लगी पूछने और कहने कि कहो बलराम सुख धाम अब कहाँ बिराजते हैं हमारे प्राण सुन्दर श्याम कभी हमारी याद करते हैं बिहारी ने राज-पाट पाय पिछली रीति सब बिसारी जब से यहाँ से हरि गये हैं तब से एक बार उद्धव के हाथ योग का सन्देशा कह पठाया फिर किसी की सुध न ली अब जाय समुद्र माँहि बसे सो काहे को किसी की सुध लेंगे इतनी बात के सुनते ही एक गोपी बोलीकि सखी हरि की प्रीति का कौन परेखा उनका तो देखा सबसेयहालेखा।

ये का॰ को नाहिन ईठ। मात पिता को दीनी पीठ॥
राधा बिन रहते नहिं घरी। सोऊ है बरसाने परी॥

हम अपने घर बार छोड़, सुत पति त्याग हरि से नेह लगाय क्या फल पाया निदान स्नेही नाव पर चढ़ा बिरह समुद्र माँझ छोड़ गये अब सुनते हैं कि द्वारिका में जाय प्रभु ने बहुत ब्याह किये और सोलह सहस्र एक सो राजकन्या भौमासुर ने घेर रक्खी थीं, तिन्हें भी कृष्ण ने लाय ब्याही अब उनसे भी बेटे पोते नाता भये उन्हें छोड़ यहाँ क्यों आवेंगे यह सुन एक गोपी बोली कि सखी तुम हरि की बात का कुछ पछितावा ही मत करो क्यों कि उनके सर्वगुण उद्धवजी ने आप ही बताये थे इतनी कह पुनि बोली कि अली मेरी बात मानों तो अब—

हलधरजी के परसों पाँय। रहि हैं इनही के गुणगाय॥
ये हैं और श्याम नहिं गात। करि है नहिं कपट की बात॥

महाराज ऐसे बलराम जी ने कह सब ब्रज युवतियों को आज्ञा दी कि आज मधु मास की रात्रि है तुम श्रृङ्गार कर बन में आओ तुम्हारे साथ रास करेंगे ऐसे कह साँझ समय बन को सिधारे, तिन के पीछे सब ब्रजयुवतियाँ भी सुथरे वस्त्र आभूषण पहन नख शिख से श्रृङ्गार कर बलदेवजी के पास पहुँची।

ठाढ़ी भईं सबै शिर नाय। हलधर छबि नहिं बरणी जाय॥
यों कह पाँय परी सुन्दरी। लीला राम करो रस भरी॥

महाराज इतनी बातके सुनते ही बलराम ने हूँ किया हुँकार करते ही रास की सब वस्तु आय उपस्थित हुई तब तो सब गोपियाँ सोच संकोच तज अनुराग कर बीणा, मृदंग, करताल, उपङ्ग मुरली आदि सब यंत्र ले ले लगी बजाने गाने और थेइ थेइ कर नाच नाच बल्देव प्रभु को रिझाने, उन का बजाना नाचना गुन देख मग्न हो वारुणी पान कर बलदेव जी सब के साथ मिल गाने नाचने और अनेक अनेक भाँति के कुतूहल कर सुख देने लेने लगे उस काल देवता गन्धर्व यक्ष किन्नर अपनी अपनी स्त्रियाँ समेत आय आय विमान पर बैठ प्रभु गुण गाय आकाश से फूल बरसाते से चन्द्रमा तारामण्डल समेत रास मण्डलका सुख देख देख किरणों में अमृत बरसाता था पवन भी थम रहा था। इतनी कथा सुनाय श्री शुकदेव जी बोले कि महाराज इसी भाँति बलरामजी ने ब्रज में रह चेत्र वैसाख दो महीने रात्रि को तो ब्रजयुवतियों के साथ रास विलास किया और कई दिन को हरि कथा सुनाय नन्द यशोदा का सुख दिया। उसी में एक दिन, रात्रि समय विश्राम करते समय बलरामजी ने जो—

नदी तीर करके बिश्रामा। बैठे तहाँ कोप कर रामा॥
यमुना तू इतही बहो आय। सहसधार कर मोहि न्हवाय॥
जे न मानिहौ कहौ हमारा। खण्ड खण्ड जल करौं तिहारौ॥

महाराज जब बलरामजी की बातें अभिमान कर यमुना ने अनसुनी की तब तो इन्हों ने क्रोध कर उसे हल से खींच लिया और स्नान किया, उसी दिन से वहाँ यमुना अब लक टेढ़ी है, आगे न्हाइ श्रम मिटाय बलराम जी सब गोपियों को ले सुख दे साथ ले चले और नगर में आये तहाँ—

गोपी कहैं सुनों ब्रज नाथ। हमहूँ को ले चलिये साथ॥

यह बात सुन बलरामजी गोपियों को आशा भरोसा दे धीरज बँधाय बिदा कर स्वयं बिदा हो नन्द यशोदा के पास गये पुनि उन्हें भी समझाय बुझाय धीरज बँधाय कई दिन रह बिदा हो द्वारिका चले गये।

अध्याय—६७

(पोण्ड्रक वध)

श्री शुकदेवजी बोले कि महाराज! काशीपुरी में एक पौन्ड्रक नाम का राजा सोई महाबली व प्रतापी था तिसने विष्णुका वेष किया और छल बल कर

सब का मन हर लिया। सदाँ पीतबसन, बैजन्ती माल, मुक्तामाल, मणि माल पहने रहै और शंख चक्र, गदा, पद्म लिये दो हाथ काष्ट के लिये एक घोड़े पर काष्ठ ही का गरुण धरे उस पर चढ़ा डोले वह बासुदेव पौण्ड्रक कहावे और सब से आपको पुजावै। जो राजा उसकी आज्ञा न मानें उस पर चढ़ जाय फिर मार उजाड़ उसे अपने बश में रक्खे। इतनी कथा कह शुकदेवजी बोले कि हे राजन्! उसका यह आचरण देख सुन देश देश नगर नगर गाँव २ घर में लोग चरचा करने लगे कि बासुदेव ब्रजभूमि के बीच यदु कुल में प्रगट हुए थे सो द्वारिका पुरी में बिराजते हैं, अब काशी में ये हुआ है, दौनों में हम किसे सच्चा जानें, और मानें महाराज! देश देश में यह चर्चा हो रही थी कि कुछ संधान पाप बासुदेव पौण्ड्रक एक दिन अपनी सभा में आय बोला—

काहे कृष्ण द्वारिका रहे। बाको वासुदेव जग कहे।
भक्त हेतु ही भू अवतरयौ। मेरौ वेष तहाँ तिनधरयौ॥

इतनी बात कर एक दूत को बुलाय उसने ऊँच नीच की बातें सब समझाय बुझाय द्वारिकापुरी में श्रीकृष्णचन्द्रजी पास भेज दिया कि यातो जो मेरा भेष बनाये फिरते हो सो छोड़दो नहीं तौ लड़ने का बिचार करौ। आज्ञा पाते ही दूतबिदा हो काशी से चला चला द्वारिकापुरी आ पहुँचा और श्रीकृष्णजी की सभा में जा उपस्थित हुआ प्रभु ने उससे पूछा कि तू कौन और कहाँ से आया है? वह बोला मैं बासुदेव पौण्ड्रक का दूत हूँ काशीपुरी से स्वामीका पठाया कुछ सन्देशा कहने आपके पास आया हूँ सो कहता हूँ। श्रीकृष्णचन्द्रजी बोले अच्छा कह! प्रभु के मुख से यह बचन निकलते ही दूत खड़ा हाथ जोड़ कहने लगा कि महाराज! बासुदेव पौण्ड्रक ने कहा है कि जगत का कर्ता तो मैं हूँ तू कौन है जो मेरा वेष बनाय जरासिंध के डर से भाग द्वारिका में जाय रहा है, कै तो मेरा बाना छोड़ शीघ्र मेरी शरणागत हो नहीं तो तेरे यदवंशियों समेत तुझे मार डालूँगा मेरा वही काम है कि जब जब असुर मेरे भक्तों को आयसताते हैं तब २ मैं अवतार ले भूमि का भार उतारता हूँ।

तोय कहा यम आया लेन। भाषत तू जो ऐसे बैन॥
मारें कहा तोय हम नीच। आयो है कपटीके बीच॥

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी ने राजा परीक्षित से कहा कि महाराज! बासुदेव पौण्ड्रक का दूत तो इस ढब की बात करता है और श्रीकृष्णचन्द्र रत्न-सिंहासन पर बैठे यादवों की सभामें हँस २ कर सुनते थे कि इसबीच कोई यदुवंशी बोल उठा जो तू बशीठ न होता तो बिना मारे न छोड़ते दूत को मारना उचित नहीं महाराज! जब यदुवंशी ने यह बात कही, तब श्रीकृष्णजी ने उस दूत को निकट बुलाय समझाय के कहा कि तू जाय अपने बासुदेव से कह कि कृष्ण ने कहा कि मैं तेरा बाना छोड़ शरण आता हूँ सावधान हो इतनी बातके सुनते ही दूत दण्डवत कर विदा हुआ और श्रीकृष्णजी भी अपनी सेना ले काशीपुरीको सिधारे दूत ने जाय पौण्ड्रक से कहा कि महाराज! मैंने द्वारिका में जाय आपका सन्देश सब कृष्ण को सुनाया, उन्होंने सुनकर कहा कि तू अपने स्वामी से जाय कहै कि सावधान रहै मैं उसका बाना छोड़ शरण लैने आता हूँ बसीठ यह बात कहता ही था कि किसी ने आय कहा कि महाराज! आप निश्चिन्त क्या बैठे हो श्रीकृष्णजी अपनी सेना ले चढ़ आये इतनी बात के सुनते ही बासुदेव पौण्ड्रक उसी भेष से अपना सब कटक ले चढ़ आया और चला २ श्रीकृष्णजी के सन्मुख आया तिसके साथ और भी काशी के राजा चढ़ दौड़े, दोनों ओर के दल खड़े हुए। जुझाऊ बाजे बजने लगे, शूर वीर लड़ने और कायर खेत छोड़ २ अपना जीव ले ले भागने लगे उस काल युद्ध करता २ कालवश हो बासुदेव पौण्ड्रक प्रभुके सन्मुख आया तब किसी ने श्रीकृष्णचन्द्र से पूछा कि महाराज! इस भेष से कैसे मारोगे, प्रभु ने कहा कपटी के मारने का कुछ दोषनहीं, सोई हरि ने सुदर्शन चक्र को आज्ञा दी, उसने जाते ही जो भुजा काष्ट कीथी सो उखाड़ ली, साथ में गरुड़ भी टूटा और तुरङ्ग भागा, जब बासुदेव पौण्ड्रक नीचेगिरा तब सुदर्शन चक्र ने उसका सिर काट फेंका।

कपट शीश नृप पौण्ड्रक मारयौ। शीश जाँय काशी में धारयौ॥
तहाँ हतौ राजा रनिवासु। देखत शीश सुन्दरी तासु॥
रोवै यों कह चीखें मार। यह गत कहा भई करतार॥
तुम तो अजर अमर ह्वै गये। कैसे प्राण पलक में दये॥

महाराज! रानियों का रोना सुन सुदक्षिण नाम उसका बेटाथा सो वहाँ आय

बापका शिर कटा देख अति क्रोध कर कहने लगा कि जिसने मेरे पिता को मारा है उससे बिना पलटा लिये न रहूँगा इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोलेकि महा राज बासुदेव पौण्ड्रक को मार श्रीकृष्णचन्द्रजी अपना सब कटक ले द्वारिकापुरी सिधारे और उसका बेटा अपने बाप का बैर लेने को महादेवजी की अति कठिन तपस्या करने लगा, इतने में कितने एक दिन में प्रसन्न हो महादेवजी ने आय कहा कि माँग वह बोला महाराज ! मुझे यह बर दीजै कि श्रीकृष्णसे अपने पिता का बैर लूँ शिवजी बोले कि अच्छा जो तू बैर लिया चाहता है तो एक काम कर उल्टे वेद मन्त्रों से यज्ञ कर इससे एक राक्षसी अग्नि से निकलेगी उससे जो तू कहेगा सो करेगी,इतना बचन शिवजीके मुखसेसुन महाराज वह जाय ब्राह्मणों को बुलाय वेदी रच तिल जौ चीनी आदि सब होम का सामान ले हव्य बनाइ, लगा उल्टे बेद मन्त्र पढ़ २ होम करने, निदान यज्ञ करते करते अग्नि कुण्ड से कृत्या नाम राक्षसी निकली तो श्रीकृष्णजी के पीछे ही पीछे नगर देश गाँव जलाती द्वारिका पहुँची और लगी द्वारिकापुरी को जलाने नगर को जलता देख सब यदुवंशी भय खाय श्रीकृष्ण के पास जा पुकारे कि महाराज। इस आग से कैसे बचेंगे, यह तो सारे नगर को जलाती चली आती है प्रभु बोलेकि तुम किसी बात की चिंता मत करो, यह कृत्यानाम राक्षसी काशीसे आई है मैं अभी इसका उपाय करता हूँ, इतना कह श्रीकृष्णजी ने सुदर्शन चक्र को आज्ञा दी कि इसे मार भगाओ इसी समय जाय काशीपुरी को जलाय आवो,हरिकी आज्ञा पातेही सुद-र्शनचक्र ने कृत्या को मार भगाया और बात के कहते ही काशीकोजलायआया।

अध्याय–६८

द्विविन्द कपि वध

श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज जैसे बलराम सुखधाम रूपनिधानने द्विविद कपि मारा तैसेही मैं कथा कहता हूँ तुम चित्तदे सुनो,एकदिन द्विविद जो सुग्रीवका मन्त्री और मयंद कपिका भाई व भौमासुर का सखाथा सो कहनेलगाकि एकशूल मेरे मनमें है सो अब तक खटकता है, यह बात सुन किसी ने पूछा कि महाराज सो क्या वह बोला कि जिसने मेरे मित्र भौमासुर को मारा तिसे मारूँ तो मेरे मन का दुःख जाय महाराज इतना कह उस समय अति क्रोध कर द्वारिकापुरी को

चला श्रीकृष्णचन्द्र का देश उजाड़ता, लोगों को दुःख देता, जहाँ तहाँ ऋषि मुनि देवताओं को दुख देता और उपाधि करता द्वारिकापुरी में जा पहुँचा और

बलराम जी का द्विविद बानर से युद्ध

अल्प तनुधार श्रीकृष्ण के मन्दिर पर जा बैठा उसको देख सब सुन्दरी मन्दिरके भीतर किवाड़ दे दे जाइ छिपीं तब तो वह मन ही मन यह बिचार कर बलराम जी के समाचार पाय रेवती गिर पर गया।

पहले हलधर कौ वध करौं। पीछे प्राण कृष्ण के हरौं॥

जहाँ बलदेवजी स्त्रियों के साथ बिहार करते थे महाराज छिप कर वह वहाँ क्या देखता है बलरामजी सब स्त्रियों को साथ ले एक सरोवर के बीच अनेक २ भाँति की लीला कर गाय २ न्हाय रहे हैं, यह चरित्र देख द्विविद एक पेड़ पर जाय चढ़ा और किल कारियाँ मार २ घुड़क २ लगा डाल २ पर कूद २ फिर चरित्र करने और जहाँ मदिरा का भरा कलश और सब के चीर धरे थे तिन पर लगा हँगने मूतने, बन्दर को सब सुन्दरी देखते ही डर कर पुकारी कि महाराज यह कपि कहाँ से आया जो हमें डरपा २ हमारे वस्त्रों पर हँग मूत रहा है इतनी बात के सुनते ही बलदेव जी सरोवर से निकले जो हँस डेला चलाया तो वह इन को मतवाला जान महा क्रोध कर किलकारी मार नीचे आया आते ही उसने मद का घड़ा जो तीर पर धरा था सो लुढ़काय दिया और सारे चीर फाड़ टूक टूक कर डाले तब तो क्रोध कर बलराम जी ने हल मूसल सँभाला और वह भी पर्वत सम हो प्रभु के सोंही युद्ध करने को आय उपस्थित हुआ इधर से वह मूसल

चलाते थे और उधर से वह पेड़ पर्वत ।

महा युद्ध दोऊ मिल करै । नेक न दोऊ ठोर ते टरै ॥

महाराज ये दोनों बली अनेक २ प्रकार घात कर निधड़क लड़ते थे पर देखने वालों का मारे भय के प्राण ही निकलता था, निदान बलदाऊ प्रभु ने सब को दुखित जान द्विविद को मार गिराया उसके मरते ही सुर नर मुनि सब के जी में आनन्द हुआ और दुःख छूट गया ।

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी ने राजा परीक्षित से कहा कि महाराज त्रेता युग से यह बन्दर ही था तिसे बलदेवजी ने मार उद्धार किया, आगे बलराम सुखधाम सब को साथ ले वहाँ से सुख पूर्वक श्रीद्वारिकापुरी में आये और द्विविद के मारने के समाचार सब यदुवंशियों को कह सुनाये ।

अध्याय–६९

श्रीशुकदेवजी बोले कि राजा अब मैं दुर्योधन की बेटी लक्ष्मणा के विवाह की कथा कहता हूँ कि जैसे साम्ब हस्तिनापुर जाय उसे ब्याह लाये । महाराज राजा दुर्योधन की पुत्री लक्ष्मणा जब ब्याहने योग्य हुई तब उस के पिता ने सब देश के नरेशों को पत्र लिख लिख कर बुलाया और स्वयम्बर किया, स्वयम्बर के समाचार पाय श्रीकृष्णचन्द्र का पुत्र जो जाम्बन्ती से साम्ब नाम था वह भी वहाँ गया । साम्ब क्या देखता है कि देश देश के नरेश साफ सुथरे वस्त्र, आभूषण, रत्नजटित भषन पहने अस्त्र शस्त्र बाँधे, स्वयम्बर के बीच पाँति २ खड़े हैं और उनके पीछे उसी भाँति सब कौरव भी, जहाँ तहाँ बाहर बाजे बज रहे हैं भीतर माँगलिक लोग मङ्गलाचार कर रहे हैं सब के बीच राजकुमारी मात पिता की प्यारी मन हा मन यों कहती हार लिये आँखों की सी पुतली फिरती है कि मैं किसे बरूँ महाराज जब यह सुन्दरी शीलवन्ती, रूपवती माला लिए लाज किये फिरते २ साम्ब के सन्मुख आई तब उन्हों ने शोच संकोच तज निर्भय हो उसे हाथ पकड़ रथ में बैठाय अपनी बाट ली सब राजा खड़े देखते रह गये और कर्ण द्रौण शल्य भूरिश्रवा, दुर्योधन आदि सारे कौरव भी उसी समय कुछ न बोले पुनि अति क्रोध कर आपस में कहने लगे कि देखो उसने क्या बुरा काम किया

(साम्ब विवाह)

साम्ब के माला डालन क लिय लक्ष्मण का सन्मुख आना

कि जो रस में आय के अनरस किया कर्ण बोला यदुवंशियों की टेव है कि जहाँ तहाँ शुभ काज में जाते हैं तहाँ उपाधि ही करते हैं।

इतनी बात सुनते ही सब कौरव महा क्रोध कर अपने २ अस्त्र शस्त्र ले यों कह चढ़ दौड़े कि देखें वह कैसा बली है जा हमारे आगे से कन्या ले निकल जायगा और बीच बाट में साम्ब को जा घेरा, आगे दौनों ओर से अस्त्र शस्त्र चलने लगे, निदान कितनी एक बेर लड़ने से साम्ब का सारथी मारा गया और वह नीचे उतरा तब ये उसे धर पकड़ बाँध के लाये व सभा के बीचों बीच खड़ा कर यों उन्होंने इस से पूछा कि अब तेरा पराक्रम कहाँ गया, यह बात सुन वह लजाय रहा इतने में नारद जी ने आय राजा दुर्योधन समेत सब कौरवों से कहा कि यह साम्ब नाम का श्री कृष्णचन्द्र का पुत्र है तुम इस से कुछ मत कहो जो होना था सो हुआ अभी इस का समाचार पाय दल साज आवेंगे कृष्ण बलराम से जो कहना सुनना हो उन से कह सुन लीजो लड़के से कुछ कहना तुम्हें किसी भाँति उचित नहीं इसने लड़क बुद्धि की तौ की। महाराज! इतना बचन कह नारद जी वहाँसे बिदाहो द्वारिकापुरीको गये और राजा उग्रसेन की सभा में जाखड़ेभये।

बैठते ही नारदजी बोले कि महाराज! कौरवों ने साम्ब को बाँध महा दुख दिया और देते हैं जो इस समय जाय उसकी शीघ्र सुधि लो तो ठीक नहीं तो साम्ब का बचना कठिन है।

इस बात के सुनते ही राजा उग्रसेन ने अति कोप कर यदुवंशियों को कहा कि तुम अभी हमारा कटक ले हस्तिनापुर चढ़ जावो और कौरवों को मार साम्ब को छुड़ा ले आवो। राजा की आज्ञा पाते ही ज्यों सब दल चलने को उपस्थित हुआ त्यों ही बलरामजी ने जाय कर राजा उग्रसेन से समझाय के कहा कि महाराज! आप उन पर सैना न पठाइये मुझे आज्ञा कीज मैं जाय उन्हें उलाहना दे साम्ब को छुड़ा लाऊँ देखूँ उन्होंने किस लिये साम्ब को पकड़ बाँधा इस बात का भेद बिन मेरे गये न खुलेगा, इतनी बात के सुनते ही राजा उग्रसेन ने बलरामजी को हस्तिनापुर जाने की आज्ञा दी और बलदेवजी कितने एक बड़े २ पण्डित ब्राह्मण और नारद मुनि को साथ ले द्वारिका से चले चले हस्तिनापुर में पहुँचे उस समय दाऊजी ने नगर के बाहर बाड़ी में डेरा कर नारदजी से कहा कि महाराज हम यहाँ उतरे हैं आप जाय कौरवों से हमारे आने का समाचार कहियो, प्रभु की आज्ञा पाय नारदजीने नगरमें जाय बलरामजी के आने का समाचार सुनाया।

सुनके सावधान सब भये। आगे होय लैन तहाँ गये॥
भीषम द्रोणकर्ण मिल चले। लीन्हे बसन पटम्बर भले॥
दुर्योधन यों कह कर धायौ। मेरो गुरू संकर्षन आयौ॥

इतनी कथा कह श्रीशुकदेव जी ने राजा परीक्षित से कहा कि महाराज! सब कौरवों ने उस बाड़ी में जाय बलराम जी से भेंट की और सब की कुशल क्षेम, पूँछ पूँछा कि महाराज! आपका आना कैसे हुआ? ऐसी उन के मुख से यह बात निकलते ही बलराम जी बोले कि महाराज! उग्रसेन के पठाये सन्देश लेके तुम्हारे पास आये हैं, कौरव बोले कहो बलदेव जी ने कहा कि राजाजी ने कहा है कि तुम्हें हम से विरोध करना उचित न था।

तुम हो बहुत सो बालक एक। कियो युद्ध तज ज्ञान विवेक॥
ऐसों गर्व तुम्हें अब भयौ। समझ बूझ वाको दुख दयौ॥

महाराज! इतनी बात के सुनते ही कौरव महा कोप कर बोले कि बलरामजी बस करो अधिक बड़ाई उग्रसैन की मत करौ हम से यह सुनी नहीं जाती, चार दिन की बात है कि उग्रसैन को कोई जानता मानता न था, जब से हमारे यहाँ सगाई की तभी से प्रभुता पाई, जो द्वारिकापुरी में बैठा राज्य पाय पिछली सब

बात गँवाय जो मन मानता है सेा कहता है वह दिन भूल गया कि मथुरा में ग्वाल गूजरों के साथ रहता खाता था जैसा हमने साथ खिलाय सम्बन्ध कर राज दिलवाया तिसका फल हाथों हाथ पाया जो किसी पूरे पर गुण करते तेा वह जन्म भर हमारा गुण मानता, इतनी कथा कह श्री शुकदेवजी बोलेकि महाराज! ऐसे अनेक २ प्रकार की बातें कर कर्ण, द्रौण, भीष्म, दुर्योधन, शल्य आदि सब कौरव गर्व कर उठ २ अपने घर गये और बलराम जो उनकी बात सुन २ हँस २ वहाँ बैठे मन ही मन यों कहते रहे कि इनको राज्य और बलका गर्व भया है जो ऐसी ऐसी बात करते हैं मेरा नाम बलदेव नहीं, जो सब कौरवोंको नगर समेत जमुना में न डुबाऊँ। तब बलदेवजो अति क्रोधकर सब कौरवों को नगर समेत हल से खेंच यमुना तीर पर ले गये और चाहें कि डुबायें त्योंही अति घबराय सब कौरव आय हाथ जोड़ शिर नाय गिड़गिड़ाय बिनती कर बोले कि महाराज! हमारा अपराध क्षमा कीजै हम आपकी शरण आये, अब बचाय लीजै जा कहोगे सो करेंगे सदा राजा उग्रसेन की आज्ञा में रहेगे, इतनी बात के सुनते ही बलरामजी का क्रोध शान्त हुआ जेा हल से खेंच नगर यमुना तीर पर लाये थे सेा वहीं रक्खा तिसी दिन से हस्तिनापुर यमुना तीर परहै पहले वहाँ न था। फिर उन्होंने साम्ब को छोड़ दिया और राजा दुर्योधन ने बिधिसे साम्बको कन्या दान किया और उसके यौतुक में बहुत कुछ सङ्कल्प किया इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी ने कहा महाराज! ऐसे बलरामजी हस्तिनापुर जाय कौरवों का गर्वगँवाय भतीजे को छुड़ाय ब्याह लाये, उस काल सारी द्वारिकापुरीमें आनन्द हेा गया और बलदेवजी ने हस्तिनापुरी का सर्व समाचार ब्यौरा समेत समझाय राजा उग्रसेन के पास जा कहा।

अध्याय–७०

(नारद माया दर्शन]

श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! एक समय नारदजी के मन में आई कि श्रीकृष्णचन्द्र सोलह सहस्र एक सौ आठ रानो ले कैसे गृहस्थाश्रम करते हैं सो चलकर देखना चाहिये, इतना विचार द्वारिकापुरी में आये तो नगर के बाहर आ क्या देखते हैं कि कहीं बाड़ियों में नाना भाँति के बड़े २ ऊँचे बृक्ष फल फूलों से

भरे खड़े झूम रहे हैं तिन पर कपोत, कीर, चातक, मयूर आदि पक्षी मन भावनी बोलियाँ बैठे बोल रहे हैं कहीं सुन्दर सरोवर में कमल खिले हुए तिन पर भोरों के झुण्ड के झुण्ड गूँज रहेहैं तीर में हँस सारस समेत कोलाहल कर रहे हैं कहीं फुलवाड़ियों में माली मीठे २ स्वरों से गाय २ ऊँच नीच नीर चढ़ाय क्यारियों में जल सींच रहे हैं कहीं इन्दारां बाड़ियों पर रहट चला रहेहैं और पनघट पर पनिहारियों के ठट के ठट लगे हैं तिन की शोभा कुछ वर्णी नहीं जाती वह देखती बन आये महाराज! यह शोभा वन उपवन की निरखि नारद जी पुरी में जाय देखें तो अति सुन्दर कंचन के मणिमय मन्दिर जगमगाय रहे हैं तिनपर ध्वजा पताका फहराय रही हैं, दरवाजे दरवाजे तोरण बन्दनवार बँधी हैं दरवाजे २ पर केले के खम्भ और कंचन के खम्भ सपल्लव भरे धरे हैं, घर २ की जाली झरोखे माखों से धूपका धुआँ निकल श्याम घटा सी मडराय रही है, उसके बीच, सोने के कलश कलशियाँ बिजली सी चमक रही हैं. घर २ पूजा पाठ होम यज्ञ दान हो रहें ठौर ठौर भजन, सुमिरण, गान, कथा पुराण की चर्चा चल रही हैं जहाँ तहाँ यदुवंशी इन्द्रकी सी छबि किये बैठे हैं और सारे नगर में सुख छाय रहा है।

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी राजा परीक्षित से कहने लगे कि महाराज नारदजी पुरी में जाते हो मग्न हो कहने लगे कि प्रथम किस मन्दिर में जाऊँ जहाँ श्रीकृष्णचन्द्र को पाऊँ महाराज! मनही मन इतना कह नारद जी पहले रुक्मिणीजी के मन्दिर में गये वहाँ श्री कृष्णचन्द्र विराजमान थे इन्हें देख खड़े भये रुक्मिणी जी झारी भर लाईं प्रभु ने पाँव धोय आसन पर बैठाय धूप दीप नैवेद्य से पूजा की फिर हाथ जोड़ नारदजी से कहा।

जा घर चरण साधु के परे। ते नर सुख सम्पत अनुसरे।
हमसे कुटम्बी तारण हेतु। घर ही आय दरश तुम देतु॥

महाराज! प्रभु के मुख से इतना बचन निकलते ही कि जगदीश तुम चिरंजीव रहो यह आशीष दे नारदजी जाम्बती के मन्दिर में गये और श्री जाम्वती के समीप देखा कि हरि पाँसासार खेल रहे हैं नारदजी के देखते ही जो उठे तो नारदजी आशीर्वाद दे उलटे फिरे पुनि सत्यभामा के यहाँ गये तो देखा कि श्री-

कृष्णजी बैठे तेल लगवाइ रहे हैं वहाँसे चुपचाप नारदमुनिजी फिर आये इसलिये कि शास्त्रों में लिखा है तेल लगाने के समय न राजा प्रणाम करे न ब्राह्मण आशीष दे आगे नारदजी कालिन्दी के घर गये कि, हरि सो रहे हैं महाराज कालिन्दी ने नारदजी को देखते ही हरि को पाम दबाय जगाया प्रभु जागते ही ऋषि के निकट जाय दण्डवत् कर हाथ जोड़ बोले कि साधुओं के चरण तीर्थ जल के समान हैं जहाँ पड़ें वहाँ पवित्र करते हैं यह सुन तहाँ से भी आशीष दे नारदजी खड़े हुए और मित्र बिन्दा के धाम गये तहाँ देखा कि ब्रह्मभोज हो रहा है और श्रीकृष्ण परोसते हैं नारदजी को देख प्रभु ने कहा कि महाराज जो कृपा कर आये हो तो आप भी प्रसाद ले हमें उच्छिष्ट कीजै और घर पवित्र कीजे नारदजी ने कहा, महाराज मैं थोड़ा फिर आऊँ फेर आऊँगा ब्राह्मणों को जिमा लीजै पुनि ब्रह्म शेष आय मैं पाऊ यों सुनाय नारदजी बिदा हो सत्या के गेह पधारे, वहाँ क्या देखते कि श्री बिहारी भक्त हितकारी आनन्द से बैठे बिहार कर रहे हैं यह चरित्र देख नारद मुनि उलटे पाँवों फिरे पुनि भद्रा के स्थान पर गये तो देखा कि हरि भोजन कर रहे हैं वहाँ से फिरे तो लक्ष्मणा के गेह पधारे तहाँ देखा प्रभु स्नान कर रहे हैं। इतनी कथा सुनाय श्री शुकदेवजी बोले कि महाराज! इसी भाँति नारद मुनिजी सोलह सहस्र एक सौ आठ घर फिरे पर बिन श्रीकृष्णजी के कोई घर न देखा, जहाँ देखा तहाँ हरि को गृहस्थाश्रम का सुखभोग ही करते देखा, बह यह चरित्र लखि–

नारद के मन अचरज एह। कृष्ण बिना नहिं कोई गेह॥
जा घर जाऊ तहाँ हरि पियारी। ऐसी प्रभु लीला विस्तारी॥

महाराज! जब नारदजी अचम्भा कर कहे ये बैन तब बोले प्रभु श्रीकृष्ण जी कि नारद, तू अपने मन में कुछ खेद मत कर, मेरी माया अति प्रबल है और सारे संसार में फैल रही है, जब यह मुझे ही मोहती है तो दूसरों की क्या सामर्थ्य है जो इसके हाथ से बचे और जगत में आय इनमें न रचे।

तब नारदजी बोले जो आपकी भक्ति सदा मेरे चित में रह और मेरा मन माया के बस न होय विषय की बासना न रहे ऐसा वरदान दीजै। हे राजा इतना कह नारद जी प्रभु से बिदा हो दण्डवत् कर वीणा बजाते हरि गुण गाते अपने स्थान को गये और श्रीकृष्णचन्द्रजी द्वारिका में लीला करते रहे।

अध्याय-७१

(राजा युधिष्ठिर का सन्देश)

श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज ! एक दिन श्रीकृष्णचन्द्र रात के समय श्रीरुक्मिणीजी के साथ बिहार करते थे और रुक्मिणीजी आनन्द मग्न बैठी प्रीतम का चन्द्रमुख निरख २ सुख लेती थी कि इस बीच रात व्यतीत भई चिड़ियाँ चुहचुहाईं, सब लोग जागे और अपना २ गृहकाज करने लगे उस काल रुक्मिणीजी तो हरि के समीप से उठ संकोच किए घर की टहल टकोर करने लगी और श्रीकृष्णचन्द्रजी देह शुद्ध कर हाथ मुँह धोय स्नान कर जप तप ध्यान पूजा तर्पण से निश्चिन्त होइ ब्राह्मणों को नाना प्रकार के दान दे नित्य कर्म से सुचित हो बालभोग पाय पान, लौंग, इलायची जावित्री जायफल के साथ खाय सुथरे वस्त्र आभूषण मंगवाय पहन शस्त्र लगाइ उग्रसेन के पास गये पुनि जुहार कर यदुवंशियों की सभा के बीच आय रत्न सिंहासन पर बिराजे।

महाराज ! उसी समय एक ब्राह्मण ने आय द्वारपाल से कहा कि तुम श्रीकृष्णचन्द्रजी से जाकर कहो कि एक ब्राह्मण आपके दर्शन की अभिलाषा किए द्वार पर खड़ा है जो प्रभु की आज्ञा पावै तो भीतर आवै ब्राह्मण की बात सुन द्वारपाल ने भगवान् से जाकर कहा कि महाराज ! एक ब्राह्मण आपके

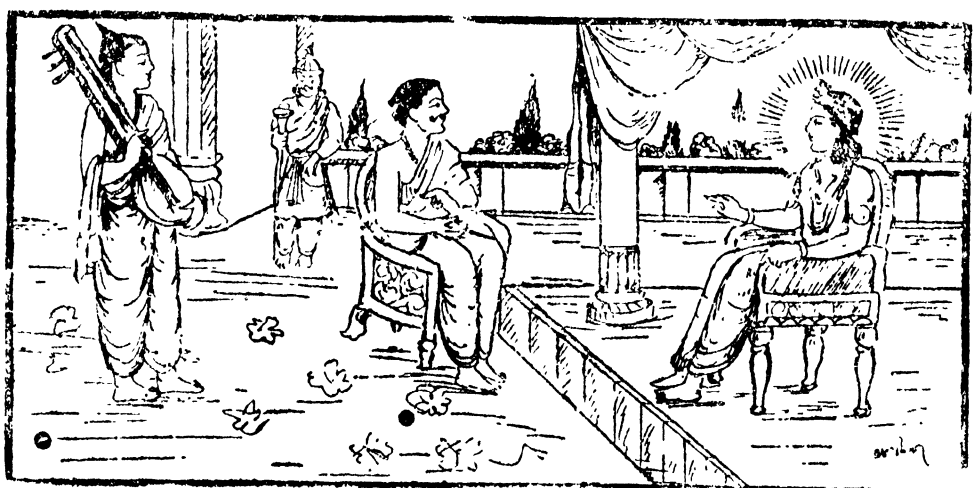

जरासिन्धु के अत्याचारों से पीड़ित बीस सहस्र राजाओं का ब्राह्मण द्वारा श्रीकृष्ण को संदेश भेजना

दर्शन की अभिलाषा किए पौरि पर खड़ा है आज्ञा पावै तो आवे हरि बोले अभी लावो। प्रभु के मुख से बात निकलते ही द्वारपाल हाथों हाथ ब्राह्मण को

सन्मुख ले गए, बिप्र को देख श्रीकृष्णचन्द्र सिंहासन से उतर दंडवत् कर आगे बढ़ हाथ पकड़ उसे मन्दिर को लेगये और रत्न सिंहासन पर अपने पास बिठाय पूछने लगे कि कहो देवता आपका आना कहाँ से हुआ और किस कार्य के हेतु पधारे ब्राह्मण बोला कृपासिंधु ! दीनबन्धु मैं मगध देश से आया हूँ और बीस सहस्र राजाओंका संदेशलाया हूँ। प्रभु बोलेसो क्या ब्राह्मणने कहा महाराज जिन बीस सहस्त्र राजाओं को जरासिंध ने पकड़ हथकड़ियाँ बेड़ियाँ दे रक्खी हैं तिन्होंने मेरे हाथ यह संदेशा कहला भेजा है दीनानाथ तुम्हारी मर्यादा की यह रीति है कि जब असुर तुम्हारे भक्तों को सताते हैं तब २ तुम अवतार ले भक्तों की रक्षा करते हो। हे नाथ ! हिरण्यकश्यप से प्रहलाद को छुड़वाया और गज को ग्राह से छुटाया तैसेही दयाकर अब हमें इस महा दुष्ट से छुड़वायें। हम महाकष्ट में हैं तुम बिन और किसी की सामर्थ नहीं जो इस महाविपत्ति से निकालें और हमारा उद्धार करै।

महाराज इतनी बात के सुनते ही प्रभु दयालु हो बोले कि हे देवता तुम अब चिन्ता मत करौ उनकी चिंता मुझे है इतनी बातके सुनते ही ब्राह्मण संसोष कर श्रीकृष्णचन्द्रजी को आशीष देने लगा इस बीच नारद जी आ उपस्थित हुए प्रणाम कर श्रीकृष्णचन्द्र ने उनसे पूछा कि नारदजी तुम सब ठौर जाते आते हो कहो हमारे भाई युधिष्ठर आदि पाँचों पाँडव इन दिनों कहाँ बसे हैं और क्या करते हैं बहुत दिन से हमने उनके कुछ समाचार नहीं पाये इससे हमारा चित्त उन्हीं में लगा है नारदजी बोले महाराज मैं उन्हीं के पास से आया हूँ, हैं वे तो कुशल क्षेमसे पर इन दिनों राजसूयज्ञ करनेके लिए निपट भावित हो होरहे हैं और घड़ी २ यहो कहते हैं कि बिना श्रीकृष्ण की सहायता हमारा यज्ञ पूरा न होगा इससे हमारा मेरा कहा मानिए तो--

पहले उनकौ यज्ञ सँवारौं। पीछे अनत कहूँ पग धारौ॥

महाराज इतनी बात नारद जी के मुख से सुनते ही प्रभु ने उद्धव जी को बुलाय के कहा कि—

उद्धव तुम हो सखा हमारे। मन आँखहु ते कबहुँ न न्यारे॥
दुहु ओर की भारी भीर। पहले कहाँ चलें कहु वीर॥

उतै राजा सङ्कट में भारी । दुख पावत किये आश हमारी ॥
इते पाण्डव मिल यज्ञ रचायौ । ऐसे कह प्रभु वचन सुनायौ ॥

अध्याय-७२

श्रीकृष्ण का हस्तनापुर गवन

श्री शुकदेवजी बोले कि, महाराज पहिले तो श्रीकृष्णचन्द्रजी जो राजाओं का सन्देश लाया था । उस ब्राह्मण को इतना कह बिदा किया, कि देवता तुम हमारी ओर से राजाओं से कहो कि तुम किसी बात की चिंता मत करो । हम बेग ही आय तुम्हें छुड़ाते हैं, महाराज यह बात कह श्रीकृष्ण ब्राह्मण को बिदा कर उद्धवजी को साथ ले राजा उग्रसेन शूरसेन की सभा में गये और उन्हों ने सब समाचार उनके आगे कहे, ये सुन चुप हो रहे इतने में उद्धवजी बोले कि महाराज ये दोनों काज कीजै पहले राजाओं को जरासंध से छुड़ाइ लीजै पीछे चलकर यज्ञ सवारिए, क्यों कि राज सूयज्ञ का काम बिना राजा और कोई नहीं कर सकता और वहाँ बीस सहस्त्र नृप इकट्टे हैं उन्हें छुड़ाओगे तो वे सब गुणवान यज्ञ का काज बिना बुलाये जाकर करेंगे । महाराज ! और कोई दशों दिशा जीत आवेगा तो भी इतने राजा इकट्ठे न पावेगा इससे अब हस्तिनापुर को चलिये पाँडवों से मिल जो काम करना हो सो करिये, राजा जरा-

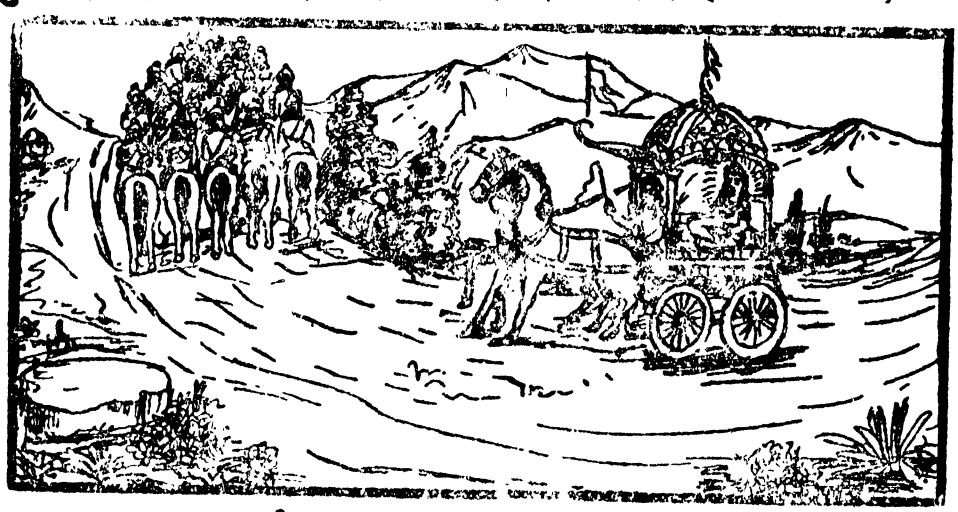

(श्रीकृष्ण का हस्तिनापुर को प्रस्थान)

सिंधु दानी और गौ ब्राह्मणों को मानने और पूजने वाला है, जो कोई उससे जाकर जो माँगता है सो पाता है, वह झूँठ नहीं बोलता है उसमें दस सहस्त्र

हाथी का बल है उसके बल के समान भीमसैन का बल है, हे नाथ ! जो तुम चलो तो भीमसैन को साथ ले चलो मेरी बुद्धि में आता है कि उसकी मृत्यु भीमसैन के हाथ है। इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षित से कहा कि राजा जब उद्धवजी ने ये बातें कहीं तब श्रीकृष्णजी ने राजा उग्रसेन, शूरसेन से विदा हो सब यदुवंशियों से कहाकि कटक सजाओ हम हस्तिनापुरको चलेंगे, इस बात के सुनते ही युदवंशी सेना साज ले आये और प्रभुजी आठों पटरानियों समेत कटक के साथ हो लिये। और धूमधाम से चले २ हरि सब समेत हस्तिनापुर के निकट पहुँचे इस में किसी ने राजा युधिष्ठिर से जाकर कहा कि महाराज कोई नृपति सेना ले बड़ी भीड़ से आपके देश पर चढ़ आया बेग ही उसे देखिये नहीं तो उसे यहाँ पहुँचा ही जानिये महाराज इस बात को सुनते ही राजा युधिष्ठिर ने अति भय खाय अपने नकुल सहदेव दोनों छोटे भाइयों को यह कह प्रभु के सन्मुख भेजाकि तुम देख आवो किकौन राजा चढ़ आयाहै, राजाकी आज्ञापातेही-

सहदेव नकुल देख फिर आये। राजा को यह बचन सुनाये॥
प्राणनाथ आये हैं हरी। सुनि राजा चिन्ता परि हरी॥

आगे अति आनन्द कर राजा युधिष्ठिर ने भीम अर्जुन को बुलाय के कहा कि भाई ! तुम चारों भाई आगे जाय श्रीकृष्णचन्द्र आनन्दकन्द को ले आओ, महाराज ! राजा की आज्ञा पाय और प्रभु का आना सुन वे चारों भाई अति प्रसन्न हो भेंट पूजा की सामिग्री और बड़े २ पण्डितों को साथ ले गाजे बाजे से प्रभु को लैन चले, निदान अति आदर मान से मिल वेद की विधि से भेंट पूजा कर चारों भाई श्रीकृष्णजी को सब समेत नगरमें ले आये राजा युधिष्ठिर ने प्रभु से मिल अति सुख मान और अपना जीवन सफल जाना। आगे बाहर भीतर सबने सब से मिल यथायोग्य परस्पर सम्मान किया और नयनों को सुख दिया। घर बाहर सारे नगर में आनन्द होगया श्रीकृष्णचन्द्र वहाँ रह सबों को सुख देने लगे।

अध्याय—७३

श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज ! एक दिन श्रीकृष्णचन्द्र ऋषि मुनि ब्राह्मण क्षत्रियों की सभा में बैठे थे कि राजा युधिष्ठिर ने आप बिनती कर सिर नाय के कहा कि शिव गिरंचि के ईश तुम्हारा ध्यान करते हैं सदा सुर मुनि

ऋषि योगीश तुम हो अलख अगोचर अभेद कोई नहीं जानता है भेद महाराज! इतनी कह पुनि राजा युधिष्ठर बोले कि हे दीनदयालु आपकी दया से मेरे सब

(भीमसैन का जरासिन्धु की टाँग पकड़ कर चीरना)

काम सिद्ध हुए पर एक ही अभिलाषा रही, प्रभु बोले सो क्या राजा ने कहा कि मेरा यही मनोरथ है कि राजसूय यज्ञ कर आपको अर्पण करूँ इतनी बात के सुनते ही श्रीकृष्णचन्द्र प्रसन्न होकर बोले कि राजा यह तुम ने भला मनोरथ किया इससे सुर, नर, मुनि ऋषि सब सन्तुष्ट होंगे यह सब को भावता है और इसका करना तुम्हें कुछ कठिन नहीं, क्यों कि तुम्हारे भाई अर्जुन, भीम, नकुल, सहदेव बड़े प्रतापी और अतिबली हैं संसार में अब कोई ऐसा नहीं जो इनका सामना करे, पहले इन्हें भेजिये किये जाय दशों दिशाओं के राजाओं को जीत अपने वशकर आवें पीछे आप निश्चिन्ताई से यज्ञ कीजिये। महाराज प्रभुके मुख से जो इतनी बात निकली त्यों ही राजा युधिष्ठिर ने अपने चारों भाइयों को बुलाय कटक दे चारों को चारों ओर भेजदिया, दक्षिणको सहदेव पधारे, पश्चिम को नकुल सिधारे, उत्तर को अर्जुन धाये, पूर्वमें भीमसैनधाये। आगे कितनेएक दिन के बीच महाराज वे चारों हरि प्रताप से सारे द्वीप नौखंड जीत दशों दिशाओं के राजाओं को वश कर अपने साथ ले आये, उसकाल युधिष्ठिर ने हाथ जोड़ श्रीकृष्णचंद्रजी से कहा कि महाराज! आपकी सहायता से यह काम तो हुआ अब क्या आज्ञा होती है, तब उद्धवजी बोले कि धर्मावतार! सब देशके तो नरेश आये पर अब एक मगध देश का राजा जरासिंधु ही आपके वश का नहीं और

जब तक वह वशमें न होगा तब तक यज्ञ भी करना सफल न होगा महाराज जरासिंधु राजा बृहद्रथ का बेटा महाबली महा प्रतापी और अति दानी धर्मात्मा है हर किसी को सामर्थ्य नहीं जो उसका सामना करे इस बातको सुन जो राजा युधिष्ठिर उदास हुए तो श्रीकृष्णचन्द्र बोले कि महाराज आप किसी बात की चिंता न कीजे भाई भीम, अर्जुन समेत हमें आज्ञा दीजै, कै तो छलबल कर उसे पकड़ लावें कै मार आवें, इस बात के सुनते ही राजा युधिष्ठिर ने दोनों भाइयों को आज्ञा दी तब हरिने उन दौनों को अपने साथ ले मगधदेश को बाट ली, आगे पन्थ में श्रीकृष्णजी ने अर्जुन और भीमसैन से कहा कि—

बिप्र रूप पुर पग धारिय। छलबल कर बैरी दुत मारिय॥

महाराज! इतनी बात कह श्रीकृष्णजीने ब्राह्मण का वेश किया उनके साथ भीम, अर्जुन ने भी विप्र वेश किया त्रिपुण्ड किये पुस्तक काँखों में लिये अति उज्वल स्वरूप, सुन्दररूप, बनठनकर ऐसे चले कि जैसे तीनों गुण सत, रज, तम, देह धरि जाते होंय कितने एक दिनों में चले २ वे मगध देशमें पहुँचे और दोपहर के समय राजा जरासिंध की पौर पर जा खड़े हुए, इनका वेष देख पौरियोंनें अपने राजा से जा कहा कि महाराज! तीन ब्राह्मण अति दीन कुछ बाँधा किये द्वार पर खड़े हैं, हमें क्या आज्ञा होती है? महाराज! बात के सुनते ही राजा जरासन्ध उठ आया और इन तीनों को प्रणाम कर अति मान सम्मान से घर में ले गया। आगे वह इन्हें सिंहासन पर बैठाय आप सन्मुख हाथ जोड़ खड़ा हो देख देख मन में यह सोच बोला कि

याचक जो द्वारे पर आवै। बड़ो भूप सोउ अतिथि कहावै॥
बिप्र नहीं तुम योधा बली। बात न कछू कपट की भली॥
छिपे न छत्रिय कान्ति तिहारी। दीखत शूरवीर बलधारी॥
तेजवन्त तुम तीनों भाई। शिव बिरंचि हरि से बरदाई॥
तुम्हरी इच्छा हो सो करौ। अपवाचा तें नहिं मैं टरौ॥
मागौ सो ही दै हौं दान। सुत सुन्दरी सर्वस्व परान॥

जरासिन्धु की इस बातके सुनते ही श्रीकृष्णचन्द्रजी ने कहाकि महाराज किसी समय राजा हरिश्चन्द्र बड़ा दानी होगया है जिसकी कीर्ति संसार में अबतक छा रही है, सुनिये एकसमय राजा हरिश्चन्द्रके देशमें अकाल पड़ा और अन्न बिन

सब लोग मरने लगे तब राजा ने अपना सर्वस्व बेच सब को खिलाया जब देश नगर, धन गया और राजा निर्धन हो रहा तब एक दिन साँझ समय वह तो कुटुम समेत भूखा बैठा था कि इतने में विश्वामित्र ने आय इसका सत्य देखने को यह बचन कहा महाराज मुझे धन दीजे और कन्यादान का सा फल लीजे, इस बचन को सुनते ही जो कुछ घरमें था सेा ला दिया पुनि ऋषि ने कहा महाराज मेरा काम इतने में न होगा फिर राजा ने दास दासी बेचकर धन ला दिया पुनि ऋषि ने कहा धर्ममूर्ति ! इतने धन से मेरा काम न सरा अबमैं किसके पास जाय माँगूँ मुझे तो संसार में तुझसे अधिक धनवान धर्मात्मा कोई नहीं दृष्टि आता है एकश्वपच नाम चाँडाल माया पात्र है कहो तो जा धनमाँगू पर इसमें भीलाज आती है ऐसे दानी राजा को याच उसको क्या याचूँ, महाराज इतनी बात के सुनते ही राजा हरिश्चन्द्र विश्वामित्र को साथ ले उस चाँडाल के घर गये और उन्होंने उससे कहा कि भाई तू हमें एक वर्ष के लिये गहने धर और मुनि का मनोरथ पूरा कर। शुपच बोला।

कैसे टहल हमारी करिहों। राजस तामस मन ते हरिहों॥
तुम नृप तेज महा बलधारी। नीच टहल है खरी हमारी॥

महाराज ! हमारे यहाँ तेा यही काम है कि श्मशानमें जाय चौकी दे और जो मृतक आवै उससे कर ले पुनि हमारे घर बार की चौकसी करे तुम से यह हो सके तो रुपये दूँ और तुम्हें बन्धक रखलूँ। राजा ने कहा कि अच्छा मैं वर्ष भर तुम्हारो सेवा करूँगा तुम इन्हें रुपये दो। इतना बचन राजाके मुख से निकलते ही श्वपच ने विश्वामित्र को रुपये गिन दिये वह ले अपने घर गये और राजा वहाँ उसकी सेवा करने लगा, कितने दिन पीछे कालवश हेा राजा हरिश्चन्द्र का पुत्र रोहिताश्व मरगया उसकाल रानी मरघटमें गई और ज्यों चिता बनाय अग्नि संस्कार करने लगी त्यो ही राजा ने आय कर माँगा।

रानी बिलख कहै दुख पाय। देख समुझि दिल में तुम राय॥

यह हमारा पुत्र रोहिताश्व है और कर देनेको मेरे पास और तेा कुछ नहीं यही एक चीर है जा पहने खड़ी हूँ राजा ने कहा इसमें मेरा कुछ वश नहीं है स्वामी के कार्य पर खड़ाहूँ जो स्वामीका कार्य न करूँगा तो मेरा सत्य जायगा।

महाराज इस बात के सुनते ही रानी ने ज्योंही चीर उतारने को आँचल पर हाथ डाला त्यों ही तीनों लोक काँप उठे, त्योंही भगवान ने राजा रानी का सत्य देख पहले एक विमान भेज दिया और पीछे आय दोनों का उद्धार किया। महाराज! जब बिधाता ने रोहिताश्व को जिलाया राजा रानी को पुत्र समेत विमान पर बिठाय वैकुण्ठ जाने की आज्ञा की तब राजा हरिश्चन्द्र ने हाथ जोड़ भगवान से कहा कि हे दीनबन्धु! पतित पावन दीन दयालु मैं श्वपच बिना बैकुण्ठ धाट में कैसे जा करूँ विश्राम, इतना बचन और राजाके मनका अभिप्राय जान श्रीभक्तहितकारी करुणासिन्धु हरिने श्वपचकोभी राजारानीऔर कुँवरकेसाथतारा।

वहाँ हरिश्चन्द्र अमर पद पायो। यहाँ युग२ वंश चलिआयो॥

महाराज! यह प्रसङ्ग जरासिन्धको सुनाय श्रीकृष्णचन्द्रजो ने कहा कि महाराज और सुनिये, कि रंतिदेव ने ऐसा तप किया कि अड़तालीस दिन बिना पानी आहार के था और जिस समय पानी पीने बैठा तिससमय कोई प्यासा आयाइसने वह नीर न पी उस तृषावन्त का पिलाया, उस जलदान से उसने मुक्ति पाई पुनि राजा बलि ने अति दान किया तो पाताल का राज्य लिया और अबतक उसका यश चला आता है। फिर देखिये कि उद्दालक मुनि छठे महीने अन्न खाते थे, एक समय खाते बिरियाँ उनके यहाँ कोई अतिथि आया, उन्होंने अपना भोजन आप न खाय भूखे को खिलाया और आप क्षुधाही में मरे, निदान अन्नदान करने से बैकुण्ठ को गये बिमान पर चढ़कर गये पुनि एक समय सब देवताओं को साथ ले राजा इन्द्र ने जाय दधीच से कहा महाराज! हम वृत्रासुर के हाथसे अब बच नहीं सकते जो अपनी अस्थि हमें दीजेतो उसके हाथ से बचें नहीं तो बचना कठिन है क्योंकि बिना तुम्हारे हाड़ के आयुध के किसी भाँति वह मारा न जायगा। महाराज! इतनी बात के सुनते ही दधीचिने शरीर गाय से चटवाय जाँघ का हाड़ निकाल दिया। देवताओं ने उस अस्थि का बज्र बनाया और दधीचि ने प्राण गवाया और बैकुण्ठ धाम पाया।

ऐसे दाता भए अपार। तिनको यश गावत संसार॥

हे राजा यों कह श्रीकृष्णचन्द्रजी ने जरासिन्ध से कहाकि महाराज! जसे आगे और युग में धर्मात्मा दानी राजा हो गये हैं तसे अब इस कालमें तुमहो,

उन्होंने याचकों को अभिलाशा पूरी की तुम हमारी आशा पुजावो कहा है।

दो० याचक कहा न माँगई, दाता कहा न देय। गृह सुत सुन्दरि लोभ नहिं, तनु शिर दे यश लेय॥

इतना बचन प्रभु के मुख से निकलते ही जरासिन्ध बोला कि याचक को दाता की पीर नहीं होती तो भी दानी अपनी प्रकृति नहीं छोड़ता, इसमें सुख पावे कि दुख हरिने कपट रूप धर बामन बन बलि के पास जाय तीन पग पृथ्वी माँगी उस समय शुक्र ने बलि को चेताया तो भी राजा ने प्रण को न छोड़ा।

देह समेत मही तक दई॥ ताकी जग में कीरत भई॥
याचक विष्णु कहा यश लीन्हों॥ सर्बस ले तौऊ हठ कीन्हों॥

इससे तुम पहले अपना नाम भेद कहो जब जो माँगोगे सो मैं दूँगा श्रीकृष्ण चन्द्र बोले कि हम क्षत्रिय हैं बासुदेव हमारा नाम है तुम भली भाँति हमें जानते हो और ये दोनों अर्जुन भीम हमारे फुफेरे भाई हैं हम युद्ध करने को तुम्हारे पास आये हैं हमसे युद्ध कीजै हम यही तुमसे माँगने आये हैं। महाराज यह बात श्री कृष्णचन्द्र से सुन जरासिन्धुहँस कर बोला कि मैं तुझ से क्या लड़ूँ तू मेरे सों ही भाग चुका है और अर्जुन से भी न लड़ूँगा क्यों कि यह विदर्भ देश गया था तहाँ नारी का भेष करके रहा भीमसेन से कहो तो इससे लड़ूँ यह मेरे समानका योद्धा है इससे लड़ने में मुझे कोई लाजन हीं।

पहले तुम सब भोजन करो। पीछे मल्ल अखाड़े लड़ो॥
भोजन दे नृप बाहर आयो। भीमसेन तहँ बोलि पठायो॥
अपनी गदा ताहि सिन दई। गदा दूसरी आपुन लई॥
दोहा–जहाँ सभा मण्डप बन्यो, बैठे जाय मुरारि।
जरासिन्धु अरु भीम तहँ, भये ठाढ़ इक बार॥

महाराज! जिस समय दोनों बीर अखाड़े में खम ठोक गदा तान ध्वजा पलट झूमकर सन्मुख आये, उस काल ऐसे जनाये कि मानों दोमतङ्ग मतवाले उठधाये। आगे जरासन्ध ने भीमसेन से कहा कि पहले गदा तू चला क्योंकि तू ब्राह्मण का भेष ले मेरी पौरी में आया था। इससे पहलेमैं प्रहार न करूँगा। यह बात सुन भीमसेन बोलेकि राजा हमराये धर्मयुद्ध है इससे यह ज्ञान न होना चाहिये जिसका जो चाहे सो पहले शस्त्र प्रहार करे महाराज उन वीरों ने परस्पर एक ही साथ गदा चलाई और युद्ध करने लगे।

अङ्ग बचाय उछरि पग धरें । झटपटाहि गदा गदा सों लरें ॥
खटपट चोट गदा भयकारी । लागत शब्द कुलाहल भारी ॥

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी ने राजा परीक्षित से कहा कि महाराज ! इसी भाँति दोनों बली दिन भर तो युद्ध करते और साँझ को घर आय एक साथ भोजन विश्राम करते, ऐसे नित लड़ते २ सत्ताईस दिन भये तब एक दिन उन दोनों के लड़ने के समय श्रीकृष्णचन्द्रजी ने मनहीमन बिचाराकि यह यों न माराजायगा क्यों कि जब यह जन्मा था तब दो फाँक हो जन्मा था, उस समय जरा राक्षसी ने आय जरासन्ध का मुँह और नाक मूँदा तब दोनों फाँक मिल गईं यह समाचार सुन उसी समय उनके पिता बृहद्रथ ने ज्योतिषियों को बुलाय के पूछा कि कहो इस लड़के का नाम क्या होगा और कैसा होगा । ज्योतिषियों ने कहा कि महाराज ! इसका नाम जरासन्ध हुआ और यह बड़ा प्रतापी अजर और अमर होगा, जबतक इसकी संधि न फटैगी तब तक यह किसी से न मारा जायगा । इतना कह ज्योतिषी बिदा हो चले गये, महाराज ! यह बात श्रीकृष्णचन्द्रजी ने मन ही मन सोची और अपना बल दे भीमसेन को तिनुका चीर सैन से जताया कि इसे इस रीति से चीर डालो, प्रभु के चिताते ही भीमसेन ने जरासन्ध को पकड़ कर दे मारा और एक जाँघ पर पाँय दे दूसरा पाँव हाथ से पकड़ यों चीर डाला जैसे कोई दातुनचीर डाले, जरासन्ध के मरते ही सारे नगर में आनन्द छा गया उसी बिरियाँ जरासन्ध की नारी रोती २ श्रीकृष्णचन्द्रजी के सन्मुख खड़ी हो हाथ जोड़ बोली कि धन्य धन्य हे नाथ ! तुमने जो ऐसा काम किया कि जिसको सर्वस दिया तुमने उसका प्रान लिया, जो जन तुम्हें सुत, वित्त समय देवे उनसे तुम करतेहो ऐसा ही स्नेह ।

कपट रूप कर छल बल कियौ । जगत माँय तुम यह यश लियो ॥

महाराज ! जरासन्ध की नारी ने जब करुणा कर करुणानिधान के आगेहाथ जोड़ बिनती कर यों कही तब प्रभु ने दयालु हो पहले जरासन्ध की क्रिया की, पीछे उनके सुत सहदेव को बुलाय राजतिलक दे सिंहासन पर बिठाय के कहा पुत्र नीति सहित राज्य कीजो, और ऋषि, मुनि, गौ, ब्राह्मण, प्रजा की रक्षा कीजो ।

अध्याय-७४

श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज ! राजपाट पर बैठाय समझाय श्रीकृष्णचन्द्रजी ने सहदेव से कहा कि राजा ! अब तुम जाय उन राजाओं को लेआओ जिन्हें तुम्हारे पिता ने पहाड़ की कन्दरा में मूँद रक्खा है, इतना बचन प्रभु के मुख से सुनते ही जरासन्ध पुत्र सहदेव बहुत अच्छा कहकर कंदरा के निकट जाय उसके मुख से शिला उठाय बीस सहस्र आठ सौ राजाओं को निकाल हरि के सन्मुख लाय, हथकड़ियाँ बेड़ियाँ पहने, गले में लोहे की तौख डाले नख केश बढ़ाये, तन क्षीन मलीन मैले वेष, राजा प्रभु के सन्मुख पंक्ति बाँधे खड़े हो हाथ जोड़ बिनती कर बोले हे कृपासिन्धु ! दीनबन्धु आपने भले समय आय हमारी सुधि ली,नहीं तो हम सब मर चुके थे तुम्हारा दर्शन पाया हमारे जीमें जी आया पिछला दुख गँवाया महाराज ! इस बात के सुनते ही कृपासागर श्रीकृष्णचन्द्र जी ने उस पर दृष्टि की तो बात की बात में सहदेव ने उनको ले जाय हथकड़ी बेड़ी कटवाय, क्षौर करवाय न्हिलाय धुलाय, षटरस भोजन खिलवाया वस्त्र आभूषण पहराय अस्त्रशस्त्र बँधवाय पुनि हरिके सोंहीं लिवाय लाया,उसकाल श्रीकृष्ण जी ने उन्हें चतुर्भुज रूप हो शंख, चक्र, गदा, पद्म धारण कर दर्शन दिया प्रभु का स्वरूप भूप देखते ही हाथ जोड़ बोले हे नाथ ! तुम संसारके कठिन बन्धन से जीव को छुड़ाते हो तुम्हें जरासन्ध की बन्दिसे हमें छुड़ाना क्या कठिनथा? जैसे आपने कृपाकर इस कठिन बंदिसे छुड़ाया तैसेही अब हमें गृह कूप से निकाल काम लोभ मोहसे छुटाइये जो हम एकांतमें बैठ आपका ध्यानकरें और भवसागर से तरें।

श्रीशुकदेवजी बोले कि जब सब राजाओं ने ऐसे ज्ञान युक्त बचन कहे तब श्रीकृष्णचन्द्रजी प्रसन्न हो बोले कि सुनो जिनके मन में मेरी भक्ति है वे निस्संदेह भक्ति पावेंगे; बंध मोक्ष मन ही का कारण है जिनका मन स्थिर है तिन्हें चर और बन समान हैं, तुम और किसी बात की चिंता मत करौ आनन्द से नीति सहित राज्य करो प्रजा को पालो, गौ, ब्राह्मणकी सेवा में रहो झूँठ मत भाषो काम,क्रोध लोभ,अभिमान तजो,भावभक्तिसे हरिकोभजो तुमनिस्संदेह परमपद पावोगे, संसार में आय जिसने अभिमानकियावहबहुत न जीया, देखो अभिमाननेकिसेनखोदिया।

सहस बाहु अति बली वखान्यो । परशुराम ताको बलनास्यो ॥
बैन रूप रावण हो गयो । गर्व आपने सो नशि गयो ॥
भौमासुर बाणासुर कंस । भये गर्व ते ही विध्वन्श ॥
श्री मद गर्भ करो जन कोय । त्यागे वे सो निर्धन होय ॥

ऐसे कह श्रीकृष्ण जी ने सब राजाओं से कहा कि, अब तुम अपने २ घर जावो कुटुम्ब से मिल अपना राजपाट सँभाल हमारे हस्तिनापुर पहुँचते ही राजा युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में शीघ्र आवो महाराज ! इतने बचन के मुखसे निकलतेही सहदेवने सब राजाओं को जाने का सामान जितना चाहिये था उतनी बात की बात में ला उपस्थित किया, वे प्रभु से विदा हो अपने २ देश को गये और श्रीकृष्णचन्द्रजी भी सहदेव को साथले भीम, अर्जुन सहित वहाँ से चले आनंद मङ्गल से हस्तिनापुर आये । आगे प्रभु ने राजा युधिष्ठिर के पास जाय जरासन्धके मारने का समाचार और सब राजाओं के छुड़ाने का ब्यौरा कह सुनाया। इतने ही में सब राजा भी अपनी २ सेना ले भेंट सहित आय पहुँचे और राजा युधिष्ठिर को भेंट दे श्रीकृष्णचन्द्रजी की आज्ञा ले हस्तिनापुर के चारों ओर ठहरे और यज्ञ की टहल के हेतु उपस्थित हुये ।

—✲✲✲—

अध्याय ७५

श्रीशुकदेवजी बोलेकि राजा ! जैसे यज्ञ राजा युधिष्ठिरने किया और शिशुपाल मारा गया तैसेमैं सर्व कथा कहताहूँ तुम चितदे सुनो।बीस सहस्र आठसौ राजाओं के आते ही चारों ओर के जितने राजाथे क्या सूर्यवंशी क्या चन्द्रवंशी उतने सब आय हस्तिनापुर में उपस्थित हुए । उस समय श्रीकृष्णचन्द्र और राजा युधिष्ठिर ने मिल कर सब राजाओं का सब भाँति से शिष्टाचार कर सन्मान किया, और हर एक को एक एक काम यज्ञ का सोंपा, आगे श्रीकृष्णचन्द्र जी ने राजा युधिष्ठिर से कहा कि महाराज ! भीम, अर्जुन, सहदेव सहित हम पाँचों भाई तो सब राजाओं को साथ ले ऊपर टहल करें, और ऋषि मुनि ब्राह्मणों को बुलाय यज्ञ आरम्भ कीजे, महाराज ! इस बात को सुनते ही राजा युधिष्ठिर ने सब मुनि ब्राह्मणों को बुला कर पूछाकि महाराज ! जो वस्तु यज्ञ में चाहिये सो आज्ञा कीजे महाराज ! इस बात के सुनते ही ऋषि मुनि ब्राह्मणों ने ग्रन्थ देख देख यज्ञ की

सामिग्री सब एक पत्र पर लिख दीं और राजाने वोही मँगवाय उनके आगे धरवादी ऋषि मुनि ब्राह्मणों ने यज्ञ की वेदी बनाई चारों वेद के सब ऋषि, मुनि ब्राह्मण वेदी के बीच आसन बिछाय २ जा बैठे पुनि शुद्धि होय स्त्री सहित गाँठ जोड़ राजा युधिष्ठिर भी जा बैठे और द्रोणाचार्य,कृपाचार्य,धृतराष्ट्र दुर्योधन,शिशुपाल आदि जितने योद्धा और बड़े २ राजा थे वे भी आन बैठे ब्राह्मणों ने स्वतिबाचन,गणेश पुजवाय,कलश घटस्थापन किया राजा ने भारद्वाज, गौतम, वशिष्ट, विश्वामित्र, वामदेव, पाराशर, कश्यप, व्यास आदि बड़े २ ऋषि मुनि, ब्राह्मणों को वरण किया और राजा से यज्ञ का सङ्कल्प करवाय होम को आरम्भ कराया महाराज!मन्त्र पढ़२ऋषि मुनि ब्राह्मण आहुति दैनेलगे और देवता प्रत्यक्ष हाथ बढ़ाय२ लेने लगे।उस समय ब्राह्मण वेद पाठ करतेथे और सब राजा होमकी सामिग्री ला ला देते और राजा युधिष्ठिर होम करते कि यज्ञ निर्द्वन्द पूर्ण हुआ राजाने पूर्णाहुति दी और यज्ञ से निश्चिन्त हो राजा युधिष्ठिरने सहदेवजीको बुला कर पूछा कि—

पहिले पूजा किसकी कीजै। अच्छै तिलक कौन को दीजै।
कौन बड़ो देवन का ईश। ताहि पूजि हम नावें शीश॥

सहदेवजी बोलेकि महाराज! सब देवों के देव हैं बासुदेव, कोई नहीं जानता इनका भेद यह ब्रह्मा रुद्र इन्द्र के ईश हैं इन्हीं को पहले पूजि नवाइये शीश, जैसे तरुवर की जड़ में जल देने से सब शाखें हरी होती हैं तैसे ही हरि की पूजा करने से सब देवता सन्तुष्ट होते हैं। लेते हैं अवतार तनु धर करते हैं लोक व्यवहार।

बन्धु कहत घर बैठे आवे। अपनी माया मोहि भुलावै॥
महा मोह हम प्रेम भुलाने। ईश्वर कूँ भ्राता कर जाने॥
इनसे बड़ो न दीखे कोई। पूजा प्रथम इन्हीं की होई॥

महाराज! इस बात के सुनते ही सब ऋषि मुनि और राजा बोल उठे कि राजा!सहदेवजीने सत्य कहा, प्रथम पूजन योग्य हरिही हैं तब तो राजा युधिष्ठिरने श्रीकृष्णजी को सिंहासन पर बिठाय आठों पटरानियों समेत चन्दन, अक्षत, पुष्प, धूपदीप नैवेद्य कर पूजा की पुनि सब देवताओं, ऋषियों मुनियों और राजाओं की पूजा की रङ्ग २ के जोड़े पहिनाये, चन्दन केशर की खौरें फूलों के हार पहराये सुगन्धि लगाययथायोग्य राजाने सबकी अनुसंहारकी श्रीशुकदेवजी बोलेकिराजा,

हरि पूजन सब को सुख दयौ। शिशुपाल को शीश सुन गयौ॥

कितनी एक बेर तक शिर झुकाये मन ही मन कुछ सोच विचार करता रहा, निदान कालवश हो अति क्रोध कर सिंहासन से सभा के बीच निसंकोच निडर हो बोलाकि इस सभा में धृतराष्ट्र, दुर्योधन कर्ण, द्रोणाचार्यआदि सब बड़े ज्ञानी मानी हैंपर इस समय सब की मति मारी गई बड़े २ मुनीश बैठे रहे और नन्द गोप के सुत की पूजा भई और कोई कुछ न बोला, जिसने ब्रज मेंजन्म ले ग्वाल बालों की झूँठन खाई तिसी की इस सभा में भई प्रभुताई बड़ाई।

जिसने गोपी और ग्वालों से स्नेह किया इस सभा में तिसही को सबसे बड़ा साधू बनाय दिया पर नारि से जिसने छलबल कर प्रेम किया सबने मता कर उसी को पहले तिलक दिया, ब्रज में इन्द्र की पूजा जिसने उठाई और परवत की पूजा ठहराई पुनि पूजा की सब सामिग्री गिरि के निकट लिवाय ले जाय मिस कर आप ही खाई तो भी उसे लाज न आई जिसकी जाति पाँति और माता पिता कुल धर्म का नहीं ठिकाना तिसको अलख अविनाशी कर सबने माना।

इतनी कथा सुनाय श्री शुकदेवजी ने राजा परीक्षित से कहा कि महाराज! इसी भाँति से कालवश हो राजा शिशुपाल अनेक २ प्रकार की बुरी बातें श्रीकृष्ण चन्द्रजी को कहता था और श्रीकृष्ण सभा के बीच सिंहासन पर बैठे सुन एक बात पर एक लकीर खेचते थे, इस बीच भीष्म, कर्ण द्रौण और बड़े २ राजा हरिनिन्दा सुन अति क्रोध कर बोलेकि अरे मूर्ख तू सभामैं बैठा हमारे सन्मुख प्रभुकी निन्दा करता है। रे चाँडाल! चुप रह नहीं तो अभी पछार मार डालते हैं। महाराज! यह कह शस्त्र ले २ सब राजा शिशुपाल के मारने को उठ धाये उस समय श्रीकृष्णचन्द्र आनन्दकंद ने सबको रोक कर कहा कि तुम इस पर शस्त्र मत डालो खड़े२ देखो, यह आप से आप मरजाता है, मैं इसके सौ अपराध सहूँगा, क्योंकि मैंने वचन हारा है सौ से बढ़ती न सहूँगा इसलिये मैं रेखा काढ़ता हूँ, महाराज! इतनी बात के सुनते ही हाथ जोड़ श्रीकृष्णचन्द्रजी से पूँछा कि कृपानाथ! इसका क्या भेद! जो आप इसके सौ अपराध क्षमा करियेगा। सो कृपाकर हमें समझाइये तो हमारे मनका सन्देह जाय, प्रभु बोले कि जिस समय यह जन्मा था तिस समय इसके तीन नेत्र

और चार भुजा थीं, यह समाचार इसके पिता दमघोशने पाय ज्योतिषियों और बड़े २ पन्डितों को बुला कर पूछा कि यह लड़का कैसा हुआ इसका बिचार कर मुझको उत्तर दो। राजा की बात सुनते ही पण्डित और ज्योतिषियों ने शास्त्र को बिचार के कहा महाराज! यह बड़ा बली और प्रतापी होगा और यहभी हमारे बिचार में आता है कि जिसके मिलने से एक आँख और दो बाँह गिर पड़ेगी यह उसी के हाथसे मारा जायेगा। इतना सुनके इसकी माँ महादेवी शूरसेन बसुदेव की बहन हमारी फूफी अति उदास भई और आठों पहर पुत्र की ही चिन्ता में रहने लगी। कितने एक दिन पीछे एक समय पुत्रको लिये पिताके घर मथुरा आई और इसे सब से मिलाया जब यह मुझ से मिला और इसकी एक आँख और दो बाहु गिर पड़ी, तब फूफी ने मुझे बचन बद्ध कर के कहा कि इस की मौत तुम्हारे हाथ है तुम इसे मत मारियो मैं यह भीख तुम से माँगती हूँ। मैंने कहा अच्छा सौअपराध तक हम इसके न गिनेंगे। इसके उपरान्त अपराध करेगा तो हनेंगे। हम से यह बचन ले फूफी सब से बिदा होकर पुत्र सहित अपने घर गई कि सौ अपराध क्यों करेगा जो कृष्ण के हाथ से मरेगा।

राजसूययज्ञ शिशुपाल मोक्ष

महाराज इतनी कथा सुनाइ श्री कृष्णचन्द्रजी ने सब राजाओं के मन का भ्रम मिटाय उन लकीरों को गिना जो एक२ अपराध पर खींची थी गिनते ही सौ से बढ़ती हुई तभी प्रभु ने सुदर्शन चक्र को आज्ञा दी उसने झट शिशुपाल का शिर काट डाला उसके धड़ से जो ज्योति निकली सो एक बार तो आकाश

को धाई फिर आय सब के देखते २ श्रीकृष्णचन्द्र के मुख में समाई यह चरित्र देख सुर नर मुनि जयजयकार करने लगे और लगे पुष्प वर्षावने उस काल श्री मुरारी भक्त हितकारी ने तीसरी मुक्ति दी और उसकी क्रिया की। इतनी कथा सुन राजा परीक्षित ने श्रीशुकदेवजी से पूछा कि महाराज तीसरी मुक्ति प्रभु ने किस भाँति दी, सो मुझे समझाय के कहिये।

श्रीशुकदेवजी बोलेकि राजा एकबार यह हिरण्यकश्यप हुआ प्रभुने नरसिंह अवतार ले तारा, दूसरी बेर रावण भया तो हरिने अवतारले इसका उद्धार किया अब तीसरी बिरियाँ यह अब है इसीसे तीसरी मुक्ति भई। इतनी सुन राजा ने मुनि से कहा कि महाराज! अब आगे कथा कहिये। श्रीशुकदेवजी बोले कि राजा यज्ञके हो चुकने पर राजा युधिष्ठिर ने सब राजाओं को स्त्री सहित वस्त्र पहनाय ब्राह्मणों को अनगिनती दान दिए, खर्चने का काम यज्ञ में दुर्योधन का था जिसने द्वेषकर एक ठौर के अनेक दान दिए इसमें उसका यश हुआ तो भी वह प्रसन्न न था। इतनी कथा कह शुकदेवजीने परीक्षित से कहाकि महाराज! यज्ञ के पूर्ण होते ही श्रीकृष्णचन्द्रजी राजा युधिष्ठिर से विदा हो सब सेना ले कुटुम्ब सहित हस्तिनापुर से चले द्वारिका पधारे। प्रभु के पहुँचते ही घर२ मङ्गला चार होने लगे और सारे नगर में आनन्द छागया।

अध्याय-७६

दुर्योधन मान मरदन

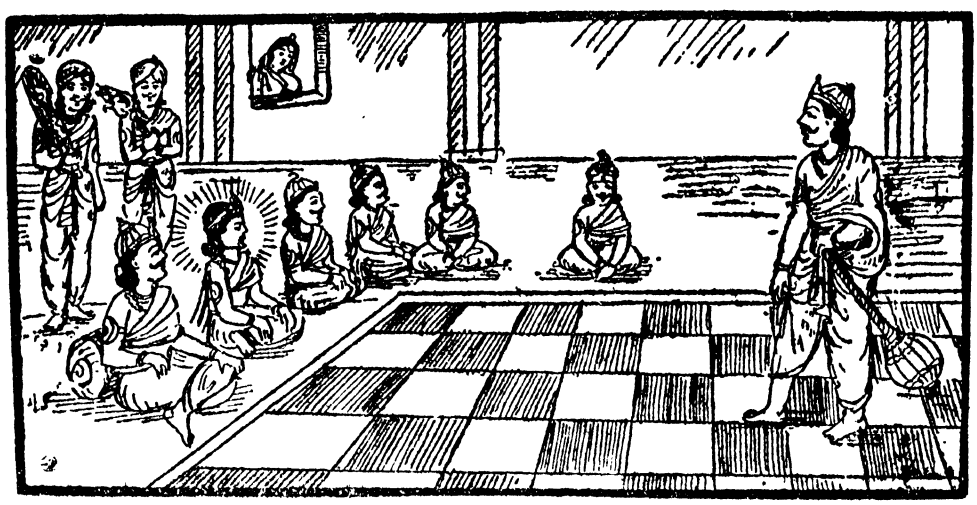

राजा परीक्षित बोले कि महाराज ! राजसूय यज्ञ होने से सब कोई प्रसन्न हुए दुर्योधन अप्रसन्न हुआ इसका कारण क्या है ? सो तुम मुझे समझायके कहो तो मेरे मन का भ्रम जाय। श्रीशुकदेव जी बोले कि राजा ! तुम्हारे पितामह बड़े ज्ञानी थे उन्हों ने यज्ञ में जिन्हें जैसा देखा तैसा काम दिया भीमको भोजन करवाने का अधिकार दिया पूजा पर सहदेव को रखा धन लाने को नकुल रहे सेवा करने अर्जुन ठहरे श्रीकृष्णचन्द्र जी ने पाँव धोने और झूँठी पत्तल उठाने का काम लिया दुर्योधन को द्रव्य बाँटने का काम दिया और जितने राजाथे तिन्होंने एक २ काज बाँट लिया। महाराज सब निष्कपट यज्ञकी टहल करतेथे पर राजा दुर्योधन जो काम करता था इससे वह एक की ठौर अनेक उठाता था, निज मन में यह बात ठान के कि इनका भण्डार टूटे तो अप्रतिष्ठा होय पर भगवत कृपा से अप्रतिष्ठा न होती बल्कि यश होता था। और वह यह भी न जानता था कि मेरे हाथ में चक्र है एक रुपया दूँगा ता चार इकट्ठे होंयगे। इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले कि राजन् ! अब आगे की कथा सुनिये श्रीकृष्णजी के पधारते ही राजा युधिष्ठिर ने सब राजाओं को खिलाय पिलाय पहराय अति शिष्टाचार कर बिदा किया। वे दल सजा अपने २ देश को सिधारे आगे राजा युधिष्ठिर कौरव और पाँडवोंको ले गङ्गा स्नान कर बाजे गाजे से नीरमें पैठ उन के साथ सबने स्नान किया। पुनि न्हाय न्हिलाय संध्या पूजन से निश्चिन्त होय वस्त्र आभूषण पहन सबको साथ लिये युधिष्ठिर कहाँ आते हैं कि जहाँ पर मय दैत्य ने अति सुन्दर सुवर्ण रत्न जटित मन्दिर बनाये थे महाराज ! राजा युधिष्ठिर राज सिंहासन पर बिराजे। उस काल गन्धर्व गुण गाते थे, चारण बन्दीजन यश बखानते थे, सभा के बीच पातुर नृत्य करती थी। घर बाहर मङ्गली लोग मङ्गलाचार करते थे, और राजा युधिष्ठिर की सभा इन्द्रकी सी सभा हो रही थी इस बीच में राजा युधिष्ठिर के आने का समाचार पाय राजा दुर्योधन भी कपट स्नेह किये वहाँ मिलन को बड़ी धूम धाम से आया।

इतनी कथा कह शुकदेवजी ने राजा परीक्षितसे कहा कि महाराज जो वहाँ मय ने चौक बीच ऐसा काम काम किया था कि जो कोई जाता था तिसे थल में

जल का भ्रम होता था और जलमें थल का। महाराज जो राजा दुर्योधन मन्दिर में उठा तो उसे थल देख जल का भ्रम हुआ। अपने वस्त्र उठाय लिये। आगे बढ़ जल देख उसे थल का धोखा हुआ जो पाँव बढाये तो उसके कपड़े भीजे। यह चरित्र देख सब सभा के लोग खिलखिला उठे। राजा युधिष्ठिर ने हसी को रोक मुँह फेर लिया। महाराज! सब के हस पड़ते ही दुर्योधन अति लज्जित हो महा क्रोध कर उल्टा फिर गया। सभामें बैठ कहने लगा कि कृष्ण का बल पाय युधिष्ठिर को अति अभिमान हुआ है, आज सभामें बैठ मेरी हँसीकी। इसका पलटा मैं न लूँ और उसका गर्व न तोड़ू तो मेरा नाम भी दुर्योधन नहीं।

अध्याय-७७

[शाल्व दैत्य वध]

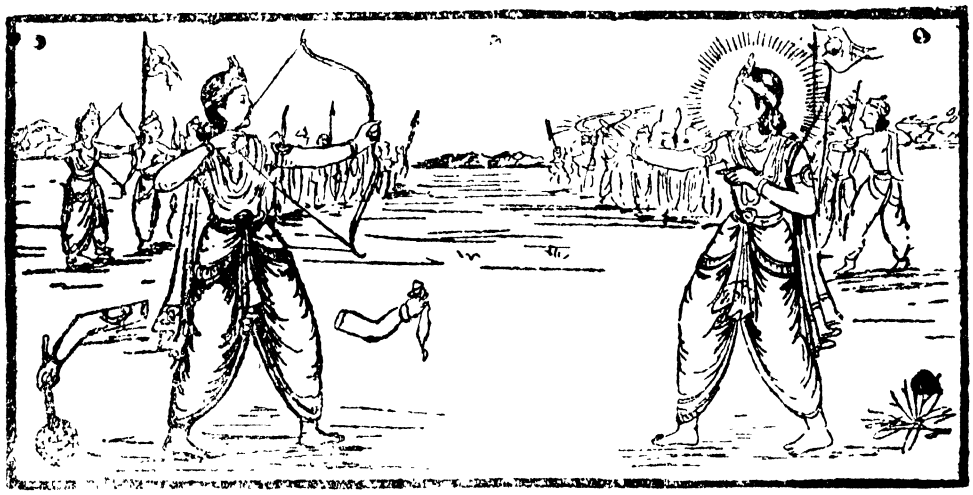

श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! जिस समय श्रीकृष्णचन्द्रजी और बलरामजी हस्तिनापुर में थे तिसी समय शाल्व नाम दैत्य शिशुपाल का साथी जो रुक्मिणी के विवाह में श्रीकृष्णचन्द्रजी के हाथ की मार खाय भागा था सो मन ही मन इतनी बात बिचारने लगा कि अब मैं अपना बैर यदुवंशियों से लूँगा और वह महादेवजी की तपस्या करने लगा।

इन्द्रिय जीत सबै वश कीन्ही। भूख प्यास सब ऋतु सहलीनी॥
ऐसी बिधि तब लाग्यो करन। सुमिरे महादेव के चरन॥
नित उठ मुठी रेत ले खाय। करै कठिन तप व मन लाय॥
वर्ष के याही बिधि गयो। तब ही महादेव वर दयो॥

कि आज से अजर अमर होगया और एक रथ मायाका तुझे मय दैत्य बना देगा तू जहाँ जाना चाहेगा वह तुझे वहाँ ले जायगा। उस रथ को त्रिलोकी में मेरे वर से सब ठौर जाने की सामर्थ्य होगी। महाराज सदाशिव ने जो वर दिया तो एक रथ उसके सन्मुख आ खड़ा हुआ वह शिवजी को प्रणाम कर रथ पर चढ़ द्वारिकापुरी को धर धमका। वहाँ जाय नगर वासियों को अनेक२ भाँति की पीड़ा उपजाने लगा इसके डर से सब नगर निवासी अति भयमान हो भाग राजा उग्रसेन के पास जा पुकारे कि महाराज की दुहाई दैत्य ने आय नगर में अति धूम मचाई जो इस भाँति उपाधि करेगा तो कोई जीता न रहेगा, महाराज ! इतनी बात सुनते ही राजा उग्रसेन ने प्रद्युम्न और साम्ब को बुलाय के कहा कि देखो हरिका पीठा ताक के यह असुर आया है प्रजा को दुख देने, तुम इसका कुछउपाय करो राजा की आज्ञा पाय प्रद्युम्नजी सब कटक ले रथ पर बैठ नगर के बाहर लड़वे जा उपस्थित हुए और सबको भयातुर देख बोले कि तुम किसी प्रकार की चिंता मत करो, मैं हरि प्रताप से इस असुर को बात की बात में मारे देता हूँ इतना बचन कह कर प्रद्युम्नजी सेना ले शस्त्र पकड़ जो उसके सन्मुख खड़े हुए तो उसने ऐसी माया की कि दिन को रात होगई। प्रद्युम्न ने तेज बाण चलाय यों महा अन्धकार को दूर किया ज्यों सूर्य का तेज होके दूर करे,पुनि कई एक बाण उन्होंने ऐसे मारे कि उसका रथ अस्त व्यस्त होगया और वह खड़ा होकर कभी भाग जाता था कभी आय अनेक राक्षसी माया उपजाय लड़ता था और प्रभु की प्रजा को अति दुख देता था। इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षित से कहा महाराज दोनों तरफ से महायुद्ध होता था कि इसी बीच एकाएकी शाल्वदैत्य के मन्त्री द्युमान ने आय प्रद्युम्नजी की छाती में एक गदा ऐसी मारीकि ये मूर्छा खाय गिरे, इनके गिरते ही वह किलकारी मारके पुकारा मैंने श्री कृष्णजीको मारा महाराज ! यादव राक्षसों से महायुद्ध कररहे थे,उसीसमय प्रद्युम्न जी को मूर्छित देख दारुण सारथी का बेटा उन्हें रथ में डाल रण से भागा और नगर में ले आया, चैतन्य होते ही प्रद्युम्न ने अति क्रोध कर सूत से कहा—

ऐसो नाहि उचित रहि तोहि। जान अचेत भगायो मोहि॥
रथ तज कर तू लाया यान। यह तो नहिं शूरन का काम॥

यदुकुल में ऐसा नहिं कोय। तज के खेत जो भाग्यो होय॥

क्या तैंने कभी मुझे भागते देखा था, जो तू आज मुझे रण से भगाय लाया, यह बात जो सुनेगा सो मेरी हँसी और निन्दा करेगा। तैंने यह काम भला न किया जो बिना काम कलङ्क का टीका लगा दिया। महाराज! इतनी बात सुनते ही सारथी रथ से उतर सन्मुख खड़ा हो हाथ जोड़ शीश नवाय बोला-हे प्रभु! तुम सब नीति जानते हो, ऐसा संसार में कोई धर्म नहीं जिसे तुम नहीं जानते। कहा है-

महाराज! ऐसे कह सूत प्रद्युम्नजो को जल के निकट ले गया, वहाँ जाय उन्हों ने मुख हाथ पाँय धोय सावधान हो कवच टोप पहन धनुष बाण सँभाल सारथी से कहा भला भया सो भया पर तू अब वहाँ ले चल जहाँ द्युमान यदुवंशियों से युद्ध कर रहा है। इस बात के सुनते ही सारथी बातकी बात में रथ वहाँ ले गया जहाँ वह लड़ रहा था। जाते ही उन्हों ने ललकार कर कहा कि इधर उधर क्या लड़ता है, मेरे सन्मुख हो तो तुझे शिशुपाल के पास भेजूँ। यह बचन सुनते ही वह जो प्रद्युम्न पर आय टूटा तो कई एक बाण मार उन्हों ने उसे मार गिराया और साम्ब ने असुर दल काट २ समुद्र में डुबोय दिया।

इतनी कथा कह श्री शुकदेवजी बोले कि महाराज! जब असुर दल से युद्ध करते २ द्वारिकापुरी में सब यदुवंशियों को सत्ताईस दिन हुए, तब अन्तर्यामी श्रीकृष्णचन्द्रजो ने हस्तिनापुरी में बैठे २ द्वारिका की दशा देख देख राजा युधिष्ठिर से कहा कि महाराज! मैंने रात्रि में स्वप्न देखा कि द्वारिका में महा उपद्रव हो रहा है और सब यदुवंशी अति दुखी हैं, इससे अब आप आज्ञा दो तो हम द्वारिका को प्रस्थान करें। यह बात सुन राजा युधिष्ठिर ने हाथ जोड़ कहा कि जो प्रभु की इच्छा इतना बचन सुन श्रीकृष्ण और बलराम सब से बिदा हो जा पुर के बाहर निकले तो क्या देखते हैं कि बाँई ओर एक हरिणी दौड़ी जाती है और सोंहो श्वान खड़ा शिर झाड़ता है, यह अशगुन देख हरि ने बलरामजी से कहा कि भाई! तुम सबको साथ ले पीछे से आवो मैं आगे चलता हूँ। हेराजा भाई से यों कह श्रीकृष्णजी आगे जाय रणभूमि में क्या देखते हैं कि असुर यदु-

वंशियों के चारों ओर से बड़ी मार मार कर रहे हैं और वे निपट घबराय २ शस्त्र चला रहे हैं। यह चरित्र देख हरि जा वहाँ खड़े हो कुछ भावित हुएतो बलदेवजी भी आ पहुँचे उस काल श्रीकृष्णचन्द्रजी ने बलराममी से कहा कि भाई ! तमजाय नगर और प्रजाकी रक्षा करो मैं इन्हें मारकर आताहूँ, प्रभुकी आज्ञा पाय बलदेव जी ता पुरी में पधारे और आप हरि वहाँ रण में गये जहाँ प्रद्युम्न शाल्वसे युद्धकर रहे थे, यदुपति के आते ही शंख ध्वनि हुई और सब ने जाना कि श्रीकृष्णचन्द्र आये, महाराज ! प्रभु के आते ही शाल्व अपना रथ उड़ाय आकाशमें लेगयाऔर वहाँ से अग्नि सम बाण वर्षा करने लगा, उस समय श्रीकृष्णजी ने सोलह बाण गिनकर ऐसे मारे कि उसका रथ और सारथी उड़ गया और वह तड़ फड़ाय नीचे गिरा। गिरते ही सँभल कर एक बाण उसने हरि की बाम भुजा में मारा और पुकारा कि कृष्ण खड़ा रह,मैं युद्ध कर तेरा बल देखता हूँ तैंने तो शंखासुर और शिशुपाल आदि बड़े बड़े बलवान योधा छल बल करके मारेहैं पर अब मेरे हाथ से तेरा बचना कठिन है।

यह बात सुन जो श्रीकृष्णचन्द्रजी ने इतना कहा रे मूर्ख अभिमानी ! कायर कूर क्षत्रिय जो हैं गंभीर शूरवीर,वेपहले किसीसे बड़ा बोल नहीं बोलते इतनासुन उसने दौड़कर हरि पर एक गदा क्रोध कर चलाई सो प्रभु ने सहज स्वभाव ही काट गिराई पुनि श्रीकृष्णजी ने उसके एक गदा मारी वह खाय माया की ओट में जाय दो घड़ी मूर्छित हुआ फिर कपट रूप बनाय प्रभू के सन्मुख आय बोला—

दोहा—माय तुम्हारी देवकी, पठयो योह अकुलाय।
शत्रु शाल्व बसुदेव को, पकरे लीये जाय॥

महाराज ! वह असुर ऐसे कह वहाँ से जाय माया का बसुदेव बनाय बाँध लाया और श्रीकृष्णजी के सोंही आय बोला रे कृष्ण ! देख तेरे पिता को बाँध लाया और अब इसका शिर काट सब यदुवंशियों को मार समुद्र में डालूँगा, पीछे तुझे मार एक छत्र राज करूँगा महाराज ! ऐसे कह उसने माया के बसुदेव का सिर श्रीकृष्णचन्द्रजी के देखते २ काट डाला बरछीके फलपर रख सबको दिखाया वह माया का चरित्र देख पहले प्रभूको मूर्छा आई,पुनि देह सँभाल मनहीमन कहने

लगे कि ये क्यों कर हुआ जो यह बासुदेव को बलरामजी के रहते हुए द्वारिका से पकड़ लाया क्या वह उससे भी बली है जो उनके सन्मुख से बलदेवजीको निकाल लाया ? महाराज ! इसी भाँति की अनेक २ बातें कितनी एक बेर लग आसुरी माया में आय प्रभु ने की और महाभावित रहे । निदान ध्यान कर प्रभु ने देखा तो आसुरी माया का भेद पाया तब तो श्रीकृष्णचन्द्र जी ने उसे ललकारा । यह सुन वह आकाश को गया और लगा वहाँ से प्रभु पर शस्त्र चलाने इसी बीच श्रीकृष्णचन्द्रजी ने कई एक बाण ऐसे मारे कि वह रथ समेत समुद्र में गिरा, गिरते ही सँभल गदा ले प्रभु पर झपटा तब तो हरिने उसे क्रोधकर सुदर्शन चक्र से मार गिराया, ऐसे कि जैसे कि सुरपति ने बृत्रासुरको मार गिराया था । महाराज ! उसके गिरते ही उसके शीशकी मणि निकल पृथ्वी पर गिरी और ज्योति श्रीकृष्णजी के मुख में समाई । ——

अध्याय–७८

श्रीशुकदेवजी बोले कि राजा ! अब मैं शिशुपल के भाई दन्तवक्र और विदूरथ की कथा कहता हूँ । जब से शिशुपाल मारा गया तब से वे दोनों श्रीकृष्णजी से अपने भाई का पलटा लेने का विचार किया करते थे, निदान शाल्व और द्युमान के मरते ही अपना सब कटक ले द्वारिकापुरी पर चढ़ आये, चारों ओर से घेरने लगे अनेक २ प्रकार के मन्त्र और शस्त्र चलाने ।

परी नगर कोलाहल भारी । सुनि पुकार रथ चढ़े मुरारी ॥

आगे श्रीकृष्णचन्द्रजी नगर के बाहर जाय वहाँ खड़े हुये कि जहाँ अति कोप किये शस्त्र लिये वे दोनों असुर लड़ने को उपस्थित थे, प्रभु के देखते ही दन्तवक्र महा अभिमान कर बोला कि रे कृष्ण! तू पहले अपना शस्त्र चलायले, पीछे मैं तुझे मारूँगा । इतनी बात मैंने इसलिये कहा कि मरते समय तेरे मनमें अभिलाषा न रहे कि मैंने दन्तवक्र पर प्रहार न किया तूने तो बड़े २ बली मारे हैं पर अब मेरे हाथ से जीता न बचेगा । महाराज ! ऐसे कितने एक दुष्ट बचन कह दन्तवक्र ने प्रभु पर गदा चलाई सो हरिने सहज ही काट गिराई, पुनि दूसरी गदा ले हरि से महा युद्ध करने लगा, तब तो भगवान ने उसे मारगिराया और

उसका तेज निकल प्रभु के मुखमें समाया आगे दन्तवक्र का मरना देख विदूरथ ज्यों युद्ध करने को चढ़ आया त्योंही श्रीकृष्णजीने सुदर्शनचक्र चलाया विदूरथका शिर मुकुट कुण्डल समेत काट गिराया पुनि असुर दलको मारभगाया। उसकाल-

पुनि सब बोले कि महाराज! आपकी लीला अपरम्पार है कोई इसका भेद नहीं जानता, प्रथम हिरण्यकश्यप और हिरण्याक्षभये पीछे रावण और कुम्भकर्ण अब यह दन्तवक्र और शिशुपाल हो आये, तुमने तीनों वेर इन्हें मारा और परम मुक्ति दी। इससे तुम्हारी गति कुछ किसी से जानी नहीं जाती महाराज! इतनी कह देवता तो प्रभु को प्रणाम कर चले गये और हरि बलराम जी कहने लगे कि भाई कौरव और पाँडवों से हुई लड़ाई, अब क्या करें बलदेवजी बोले कृपा कर आप हस्तिनापुर को पधारिये तीर्थ-यात्रा कर पीछे से मैं भी आता हूँ इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! यह बचन सुन श्रीकृष्णचन्द्र जी ही कुरुक्षेत्र को पधारे जहाँ कौरव और पाँडव महाभारत युद्ध करते थे। और बलराम जी तीर्थयात्रा को निकले। सब तीर्थ करते २ बल्देवजी नैमिषारण्य में पहुँचे, तो वहाँ क्या देखते हैं कि एक ओर ऋषि मुनि यज्ञ रच रहे हैं और एक ओर ऋषि मुनियों की सभामें सिंहासन पर बठे सूतजो कथा बाँच रहे हैं इनको देखते हो शौनकादिक सब मुनि ऋषियों ने उठ कर प्रणाम किया और सूतजी सिंहासन पर गद्दी लगाय बैठा देखता रहा महाराज! सूतजीके न उठने परही बलरामजी ने शौनाकदिक सब ऋषिमुनियों से कहा कि इस मूर्ख को किसने वक्ता किया और ब्यास आसन दिया? वक्ता चाहिये भक्ति मन्त्र विवेकी और ज्ञानी यह है गुणहीनकृपण और अति अभिमानी पुनि चाहिये निर्लोभी और परमार्थी यह है महा लोभी और अपस्वार्थी ज्ञानीनहीं हीन अविबेकी को यह ब्यास गद्दी फबती नहीं इसे मारे तो क्या पर यहाँसे निकाल देना चाहिये इस बात के सुनते ही शौनकादिक बड़े २ ऋषि आय बिनती कर बोले कि महाराज! तुम हो वीर धीर सकल धर्म नीति के जानने वाले, और यह है कायर और अविवेकी अभिमानी अज्ञानी इसका अपराध क्षमा कीजै। क्योंकि इस ब्यास गद्दी पर बैठा है ब्रह्मा के यज्ञधर्म के लिए यहाँ स्थापित किया है।

आपन गर्व मूढ़ मत धरयो । उठ परनाम मोहि नहिं करयो॥
यही नाथ याको अपराधु । परी चूक है तो वह साधु ॥
सूतहि मारे पातक होय । जग में भली कहै नहि कोय ॥
निष्फल बचन न जाय हमारो । यह तुमनिज मनमाँहिविचारो॥

महाराज ! इतनी बात के सुनते ही बलराम जी ने एक कुश उठाय सहज स्वभाव से सूत को मारा, उसके लगते ही वह गिर गया यह चरित्र देख शौनकादिक मुनि ऋषि हाहाकार कर उदास हो बोले कि महाराज जो बात होनी थी सो हुई पर आप कृपाकर हमारी चिंता मेटिये ! प्रभु बोले तुम्हें किस बातकी इच्छा है सो तुम कहो हम पूरी करें मुनियों ने कहा महाराज ! हमारे यज्ञ करने में किसी बात का विघ्न न हो यही हमारी प्रार्थना है सो आप पूरा कीजै और जगतमें यश लीजै इतना बचन मुनियोंके मुखसे निकलतेही अन्तर्यामी बलरामजीने सूतके पुत्र को बुलाय व्यास गद्दीपर बैठायके कहाकि यह अपने बापसे अधिक बुद्धिमान होगा और मैंने इसे अमर पद दे चिरंजीव किया, अब तुम निश्चन्ताई से यज्ञ करो ।

—❀❀—

अध्याय-७९

बलराम तीर्थ यात्रा गमन

श्रीशुकदेवजी बोलेकि महाराज ! बलरामजीकी आज्ञा पाय शौनकादिक सब ऋषि मुनि अति प्रसन्नहो यज्ञ करने लगेतो इल्वलका बेटाआय महाक्रोधकरबादल समगर्जा, बड़ी भयङ्कर अतिकाली आँधी चलाने लगा आकाशसे रुधिर और मल मूत्र वर्षाने,और अनेक२ उपद्रव मचाने महाराज! राक्षसको यहअनीति देख बलदेव ने हलमूसल का आवाहन किया । वे आय उपस्थित हुए, पुनि महाक्रोध कर प्रभु जी ने इल्वल को हल से खेंच एक मूसल उसके शिर पर ऐसा मारा कि—

फटयौ मस्तक छूटे प्रान । रुधिर प्रवाह भयो तिह यान ।
कर भुज डार पड़यो बिकरार । निकरे लोचन राते पार ॥

इल्वल के मरते ही सब मुनियों ने अति संतुष्ट हो बलदेव जी की पूजा को और बहुत सी वस्तु भेंट दी, फिर बलराम सुखधाम वहाँ से बिदा हो तीर्थ यात्रा को निकले तो महाराज ! सब तीर्थ कर पृथ्वी की प्रदक्षिणा करते करते

वहाँ पहुँचे जहाँ कि कुरुक्षेत्र में दुर्योधन और भीमसेन महायुद्ध करते थे और पाँडवों समेत श्रीकृष्णचन्द्र और बड़े बड़े राजा खड़े देखते थे। बलरामजी के जाते ही दोनों ने प्रणाम किया, एक ने गुरू जान दूसरे ने बन्धु मान महाराज! दोनों को लड़ता देख बलरामजी बोले—

सुभट समान प्रबल दोऊ बीर। अब संग्राम तजहु तुम धीर॥
कुरु पाण्डव को राखहु बन्श। बन्धु मित्र सब भये विध्वंश॥
दोऊ सुनि बोले शिर नाय। अब रण से उतर्‌यौ नहिं जाय॥

दुर्योधन और भीम का गदा युद्ध

पुनि दुर्योधन बोलाकि गुरुदेव! मैं आपके सन्मुख झूँठ नहीं भाषता आप मेरी बात मन दे सुनिये यह जो महा भारत युद्ध होता है और जो लोग मारे गये हैं सो तुम्हारे भाई श्रीकृष्णचन्द्रजी के मत से। पाँडव केवल श्रीकृष्णजी के बल से लड़ते हैं नहीं तो इनकी क्या सामर्थ्य थी जो ये कौरवों से लड़ते ये तौ हरि के वश ऐसे हो रहे हैं कि जैसे काठ की पुतली नटुए के वश होय जिधर वह चलावें तिधर चलें। उनको यह उचित न था जो पाँडवों की सहायता करें और हमसे इतना द्वेष करें, दुःशासन की भीमसेन से भुजा उखड़वाई और मेरी जाँघ में गदा लगवाई तुमसे अधिक हम क्या कहैं इस समय—

यह बचन दुर्योधन के मुख से सुनते ही श्रीयुत बलराम जी श्रीकृष्णचन्द्रजी के निकट आये कि तुम भी उपाधि कराने में कुछ घाट नहीं और बोले कि भाई तुमने ये क्या किया, जो युद्ध करवा के दुःशासनका भुजा उखाड़वाई और

दुर्योधन की जाँघ कटवाई यह धर्म युद्ध की रीति नहीं है कि कोई बलवान हो और किसी की भुजा उखाड़ के कटि के नीचे अस्त्र चलावे हाँ धर्म युद्ध यह है कि एक दूसरे को ललकार सन्मुख शस्त्र करे। श्रीकृष्णचन्द्र बोले भाई! तुम नहीं जानते ये कौरव बड़े अधर्मी अन्याई हैं, इनकी अनीति कुछ कही नहीं जाती पहले इन्होंने दुःशासन, शकुनो, भगदत्त के कहे से जुआ कपट कर राजा युधिष्ठिर का सर्वस्व जीत लिया, दुःशासन द्रोपदी का हाथ पकड़ लाया इससे उसके हाथ भीमसेन ने उखाड़े ,दुर्योधन ने सभा के बीच द्रौपदी से जाँघ पर बैठने को कहा इससे उसकी जाँघ तोड़ी गई। इतना कह पुनि श्रीकृष्णचन्द्र बोले भाई तुम नहीं जानते इसी भाँति की जो अनीति कौरवों ने पाँडवों के साथ की है, सो हम कहाँ तक कहैं, इससे यह महाभारत की आग किसी रीति से न बुझेगी तुम इसका कुछ उपाय मत करो, महाराज इतने बचन जब प्रभु के मुख से निकलते ही बलरामजी कुरुक्षेत्र से चले द्वारिकापुरी में आये और उग्रसेन राजा शूर सेन से भेंटकर हाथ जोड़ कहने लगे कि महाराज! आपके पुण्य प्रताप से हम तीर्थयात्रा तो कर आये पर एक अपराध हमसे हुआ। राजा उग्रसेन बोले सो क्या? बलरामजी ने कहा महाराज! नैमिषारण्य में जाय हमने सूत को मारा जिसकी हत्या लगी है, अब आप की आज्ञा होय तो पुनि नैमिषारण्य में जाय यज्ञ के दर्शन कर फिर तीर्थ में न्हाय हत्या का पाप मिटाय आवें पीछे ब्राह्मण भोजन करवाय जाति को जिमावें? जिससे जगमें यश पावें।राजा उग्रसेन बोले अच्छा आप हो आइये,महाराजकी आज्ञा पाय बलरामजी कितने एक यदुवंशियो को साथले नैमिषारण्य क्षेत्र जाय स्नान दान कर शुद्ध हो आय पुनि पुरोहितको बुलाय होम करवाय ब्राह्मण जिमाय जाति को खिला लोक रीति कर पवित्र हुए इतनी कथा कह श्री शुकदेवजी बोले कि महाराज!

जो यह चरित सुने मन लाय। ताके सब ही पाप नशाय॥

—****—

अध्याय—८०

श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! अब मैं सुदामा की कथा कहता हूँ कि जैसे वह प्रभु के पास गया और दरिद्र कटा सो मन दे सुनों, दक्षिण दिशा की

सुदामा द्वारिका गमन

ओर है एक द्रविण देश, तहाँ बिप्र और वणिक बसते थे नरेश। जिन के राज्य में घर घर होता था भजन सुमिरण और हरि का ध्यान पुनि सब करते थे तप, यज्ञ धर्म और साधु सन्त, गौ, ब्राह्मण, सन्मान।

ऐसे बसें सबै तिहि ठौर। हरि बिन कछु न जाने ओर॥

किसी देश में सुदामा नाम ब्राह्मण श्रीकृष्णचन्द्र का गुरु भाई अति दीन, धन हीन, तन छीन, महा दरिद्र ऐसा कि जिसके घर में घास न खाने को कुछ पास न रहताथा। एक दिन सुदामाकी स्त्री निर्धनतासे अति घबड़ाय महादुख पाय पति के निकट जाय अति भय खाय डरती, काँपती,बोली कि महाराज!अब इस दरिद्र के हाथ से महा दुख पाती हूँ, जो अब इसे धोया चाहिये,तो मैं एक उपाय बताऊ, ब्राह्मण बोला सो क्या। उसने कहा तुम्हारे परम मित्र त्रिलोकी नाथ द्वारिका वासी श्रीकृष्णचन्द्र, आनन्द कन्द हैं, जो उनके पास जाओ तो यह दरिद्र जाय। क्यों कि वे अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष के दाता हैं महाराज! जब ब्राह्मणी ने ऐसे समझाय के कहा तब सुदामा बोले कि हे प्रिये! बिना दिये श्रीकृष्णचन्द्रजी भी किसी को कुछ नहीं देते। मैं भली भाँति से जानता हूँ कि जन्म भर मैंने किसी को कभी कुछ नहीं दिया बिना दिए कहाँसे पाऊँगा, हाँ तेरे कहने से जाऊँगा, तो श्रीकृष्णचन्द्रजी के दर्शन कर आऊँगा, इस बात के सुनते ही ब्राह्मणी ने अति पुराने, स्वेत वस्त्र में थोड़े से चावल बाँध ला दिये,

प्रभु की भेंट के लिये और डोर लोटा और लाठी ला आगे धरी, तब सुदामा डोर लोटा काँधे पर डाल चावल की पोटली काँख में दबाय, लाठी हाथ में ले, श्रीगणेश को मनाय, श्रीकृष्णचन्द्रजो का ध्यान धर, द्वारिकापुरी को पधारे। महाराज ! बाट में चलते चलते सुदामा मन ही मन कहने लगा कि भला धन तो मेरे प्रारब्ध में नहीं, पर द्वारिका जाने से श्रीकृष्णचन्द्रजी आनन्द कन्द का दर्शन करूँगा। इसी भाँति सोच बिचार करता सुदामा तीन पहर के बीच द्वारिकापुरी में पहुँचा तो क्या देखता है कि नगर के चारों ओर समुद्र है और बीच में पुरी वह पुरी कैसी है कि, जिसके चहुँओर बन उपवन, फूल फल रहे हैं, तड़ाग, बापी, इन्दारों पर रहैंट परोहे चल रहे हैं, ठौर ठौर गायों के यूथ चर रहे हैं तिनके साथ ग्वाल बाल न्यारे ही कौतूहल कर रहे हैं।

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज ! सुदामा उपवन की शोभा निरख पुरी के भीतर जाय देखे तो कंचन के मणि मय मन्दिर महा सुन्दर जगमगा रहे हैं। ठाँव ठाँव अथाइयों में यदुवंशी इन्द्र की सी सभा किए बैठे हैं। हाट बाट चौहाटों पर नाना प्रकार की वस्तु बिक रही हैं। घर२ जिधर तिधर गौ दान, हरि भजन, और प्रभु का यश गान हो रहा है और सारे नगर निवासी महा आनन्द में हैं, महाराज ! यह चरित्र देखता २ और श्रीकृष्णजी को पूछता २ सुदामा प्रभु की सिंह पौरि पर खड़ा हुआ। इसने किसीसे डरते२ पूछा कि श्रीकृष्णचन्द्रजो कहाँ बिराजते हैं, उसने कहा कि देवता आप मंदिर के भीतर जावो सन्मुख श्रीकृष्णजी रत्नसिंहासन पर बैठे हैं। महाराज ! इतना बचन सुन सुदामा जो भीतर गये तो देखते ही श्रीकृष्णचन्द्रजो सिंहासनसे उतर आगे बढ़ भेंटकर, अति प्यार से हाथ पकड़ उसे लेगये, पुनि सिंहासन परबैठाय पाँव धोय चरणामृत लिया। आगे चंदन अक्षत लगाय, पुष्प चढ़ाय, धूप दीप से प्रभु ने सुदामा की बड़े ही आदर भाव से पूजा की।

इतना हरि करि जोरे हाथ। कुशल क्षेम पूछत यदुनाथ॥

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजो ने राजासे कहाकि महाराज ! यह चरित्र देख रुक्मिणी समेत आठों पटरानियाँ और सब यदुवंशी जो उस समय वहाँ थे

मन ही मन यों कहने लगे कि इस दरिद्री दुर्बल मलीन वस्त्रहीन ब्राह्मण ने ऐसा क्या अगले जन्ममें पुण्य किया जो त्रिलोकीनाथने इसे इतना मान दिया महाराज अन्तर्यामी श्रीकृष्णचन्द्र उस काल सब के मन की बात समझ कर उनका सन्देह मिटाने को सुदामा से गुरु के घर की बात करने लगे कि, भाई ! तुम्हें वह सुध है जो एक दिन गुरु पत्नी ने ईंधन लेने को भेजा था और जब बनमें ईंधन ले गठरिया बाँध शिर पर धर घरको चले,तब आँधी और मेह आया और लगा मूसला धार जल बरसने । जल थल चारों ओर भर गये हम तुम भीग कर महा दुख पाय जाड़ा खाय रात भर लुक के बृक्ष के नीचे रहे भोर ही गुरुदेव ढूँढ़ते२ बन में आये और अति करुणा कर आशीष दे हमें तुम्हें अपने साथ घर लिवाय लाये।

इतनी कथा कह श्रीकृष्णचन्द्रजी बोले कि भाई जब से तुम गुरुदेव के यहाँ से बिछुड़े तब से हम ने तुम्हारा समाचार न पाया कि कहाँ थे और क्या करते थे अब आय दर्शन दिखाय तुमने हमें महासुख दिया और घर पवित्र किया सुदामा बोला हे कृपासिन्धु दीनबन्धु स्वामी अन्तर्यामी तुम सब जानों हो कोई बात संसार में ऐसो नहीं जो तुम से छिपी है।

--✲✲--

अध्याय-८१

(सुदामा दरिद्र संहार)

श्रीशुकदेवजी बोले कि हे राजन अन्तर्यामी श्रीकृष्णचन्द्रजीने सुदामाजी की बात सुन और उनके मनोरथ समझ हँस कर कहा कि भाई भाभो ने हमारे लिए क्या भेंट भेजी है सो देते क्यों नहीं, काँख में किस लिए दबाय रखा है। यह बचन सुन सुदामा यों सकुचाय शिर झुकाय रहा और प्रभु ने उठ चिउटा की पोटली उसकी काँख से निकाल ली पुनि खोल उसमें से अति रुचिकर दो मुट्ठी चावल खाये और ज्योंही तीसरी मुट्ठी भरी त्योंही रुक्मिणीजी ने हरिका हाथ पकड़ा और कहा कि महाराज आपने दो लोक इसे देदिये आप अपने रहने को कोई ठौर रक्खोगेकि नहीं ये ब्राह्मण सुशील,कुलीन,अति बैरागी महा त्यागी सा दृष्टि आता है क्योंकि इसे वैभव पाने में कुछ हर्ष न हुआ इससे मैंने जाना

कि, ये लाभ हानि समान जानते हैं, न इन्हें जानेका सोच न पानेकी प्रसन्नता है इतनी बात रुक्मिणी के मुख से निकलते ही श्रीकृष्णचन्द्र जी ने कहा कि हे प्रिये ये मेरा परम मित्र है इसके गुण मैं कहाँ तक बखानूँ यह सर्वदा मेरे स्नेह में मग्न रहता है और उसके आगे संसार के सुख को तृणवत समझता है, इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी ने कहा कि महाराज ऐसे अनेक प्रकार की बातें कर प्रभु रुक्मिणी को समझाय सुदामा को मन्दिर में लिवा ले गये और षटरस भोजन करवाय पान खिलाय हरि से सुदामा को सुन्दर सेज पर बैठाया। वह पथ का हारा थका तो था ही सेज पर सुख पाय सो गया।

प्रभु ने विश्वकर्मा को बुलाय समझाय के कहा कि तुम अभी जाय सुदामा के मन्दिर अति सुन्दर कंचन रत्नके बनाय तिनमें अष्टसिद्धि नवनिधि धर आओ जो इसे किसी बात की इच्छा न रहे। इतना बचन प्रभु के मुख से निकलते ही विश्वकर्मा वहाँ जाय बात की बात में महल बनाय आया और सुदामा हरि के पास विदा होने गया उस समय श्रीकृष्णचन्द्रजी मुखसे तो कुछ न बोल सके पर प्रेम में मग्न हो आँखें डब डबाय शिथिल हो देख रहे, सुदामा बिदा हो प्रणाम कर अपने घर को चला और पन्थ में जाय मनही मन बिचार करने लगा भला किया जो मैंने हरि से कुछ न माँगा जो उनसे कुछ माँगता सो वे देते तो सही पर मुझे लोभी लालची समझते। कुछ चिंता नहीं, ब्राह्मणोको मैं समझा दूँगा, श्री कृष्णचन्द्रजी ने मेरा अति सन्मान किया और मुझे निर्लोभी जाना यही मुझे बहुत है। महाराज! ऐसे सोच बिचार करता २ सुदामा अपने गाँव आया तो क्या देखता है कि न गाँव है न वह टूटी मढ़ैया, वहाँतो एक इन्द्रपुरी सी बसी है। देखते ही सुदामा अति दुखित हो कहने लगा कि हे नाथ तुमने यह क्या किया, एक दुख तौ था ही दूसरा और दिया, यहाँ से मेरी झोंपड़ी क्या हुई और ब्राह्मणी कहाँ गई, किससे पूँछूँ और कहाँ ढूँढूँ? इतना कह द्वारपर जाय सुदामा ने द्वारपाल से पूछा कि यह मन्दिर किसका है? तब द्वारपाल ने कहा कि श्रीकृष्ण जी के मित्र सुदामा जी का, यह बात सुन जो सुदामा कुछ कहनेको हुआ तो भीतर से देख उसकी ब्राह्मणी अच्छे वस्त्र आभूषण पहन नख शिखसे श्रृङ्गार किये पान

स्नाय सुगन्धि लगाइ सखियों को साथ लिये पति के निकट आई ।

पाँयन परि पीताम्बर डारे । हाथ जोरि के बचन उचारे ॥
ठाढ़ें क्यों मन्दिर पग धारो । मन से सोच करो तुम न्यारो॥
तुम पीछे विश्वकर्मा आये । तिन मन्दिर पलमाँहि बनाये ॥

महाराज ! इतनी बात ब्राह्मणी के मुख से सुन सुदामा जी मन्दिर में गये और अति वैभव देख महा उदास भये ब्राह्मणी बोली स्वामी धन पाय लोग प्रसन्न होते हैं, तुम उदास हुए,इसका क्या कारण है, सो कृपा कर कहिये जो मेरे मन का सन्देह जाइ । सुदामा बोला कि हे प्रिये ! यह माया बड़ी ठगनी है, इसने सारे संसार को ठगा है ठगती है और ठगेगी सो प्रभुने मुझे दी, और मेरे प्रेम की प्रतीत न की मैंने उनसे कब माँगी थी जो उन्होंने मुझे दी, इसी से मेरा चित्त उदास है ब्राह्मणी बोली स्वामी ! तुमने तो श्रीकृष्णजी से कुछ न माँगा था, पर अन्तर्यामी घट घट की जानते हैं मेरे मन में धनकी बासना थी सो प्रभु ने पूरी की तुम अपने मन में कुछ मत समझो ।

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी ने राजा परीक्षित से कहा कि महाराज इस प्रसङ्ग को जो सदा सुने, सुनावेगा सो जन संसार में आय दुःख कभी न पावेगा । और अन्त काल में बैकुण्ठ धाम जाय सुक्ख पावेगा ।

—**—

अध्याय-८२

(श्रीकृष्ण मथुरा कुरुक्षेत्र गमन)

श्रीशुकदेवजी बोले कि राजा ! अब मैं प्रभु के कुरुक्षेत्र जानेकी कथा कहता

हूँ। तुम चित्त दे सुनो कि जैसे द्वारिका से सब कुछ यदुवंशियों को साथ ले श्री कृष्णचन्द्र और बलराम तो सूर्यग्रहण न्हाने कुरुक्षेत्र गये राजा ने कहा महाराज! आप कहिये मैं मन दे सुनता हूँ, पुनि शुकदेवजी बोले कि महाराज! एक समय सूर्यग्रहण का समाचार पाय श्रीकृष्णचन्द्र और बलदेवजी ने राजा उग्रसैनके पास जाय कहा कि महाराज! बहुत दिन पीछे सूर्यग्रहण आया है जो इस पर्व पर कुरुक्षेत्र में समय दान पुण्य करिये, सहस्र गुण होय, इतनी बात के सुनते ही यदुवंशियों ने श्रीकृष्णजी से पूछा कि महाराज कुरुक्षेत्र ऐसा तीर्थ कैसे हुआ? सो कृपाकर हमको समझाय के कहो। श्रीकृष्ण बोले कि सुनो जमदग्नि ऋषि बड़े ज्ञानी तपस्वी थे, तिनके तीन पुत्र हुए उनमें बड़े परशुराम सो वैराग्य ले घरछोड़ चित्रकूट जाय रहे और सदा शिवजी की तपस्या करने लगे, लड़कों के होते ही जमदग्नि ऋषि गृहस्थआश्रम छोड़ वैराग्य ले स्त्री सहित बनमें जाय कर तप करने लगे, उनकी स्त्री का नाम रेणुका सो एक दिन अपनी बहन को नौतने गई। उसकी बहन राजा सहस्रार्जुन की स्त्री थी नौता देते ही अहङ्कार कर राजा सहस्रार्जुन की रानी रेणुकाकी बहन योंहँसकर बोलीबहन! तुम हमेंहमारे कटक समेतजिमाय सको तो नौता दो नहीं तौ न दो। यह बात सुन रेणुका अपनासा मुँह ले चुप चाप वहाँ से उठ अपने घर आई, इसे उदास देख जमदग्नि ऋषिने पूछाकि आज क्या है जो तू अनमनी हो रही है। महाराज! बातके पूछते ही रेणुकाने रोकर सब ज्यों की त्यों बात कही, सुनते ही जमदग्नि ऋषि ने स्त्री से कहा कि अच्छा तू जायके अभी अपनी बहिन को कटक समेत नौत आ। पति की आज्ञा पाय रेणुका बहन के पास आई, उसकी बहन ने अपने स्वामी से कहा कि कल तुम्हें हमें दल समेत जमदग्नि के यहाँ भोजन करने जाना है। स्त्री की बात सुन कह वह हँस चुप हो रहा भोर होते ही जमदग्नि उठकर राजा इन्द्रके पास गये और कामधेनु माँग लाये पुनि सहस्रार्जुन को बुलाय लाये वह कटक समेत आयातिसे जमदग्निने इच्छा भर भोजन खिलाया। कटक समेत भोजनकर राजा सहस्रार्जुन अति लज्जित हुआ और मन ही मन कहने लगा इसने इतने लोगोंकी सामिग्री रात भर में कहाँ से पाई और कैसे बनाई? इसका भेद कुछ नहीं जाना जाता।

इतना कह बिदा होय उसने घर जाय एक ब्राह्मणको जमदग्नि ऋषि के घर भेजा कि इसका भेद लावो कि उसने किसके बल से एकदिन के बीच मुझे कटक समेत नौत जिमाया। इतनी बात के सुनते ही ब्राह्मण भेद पाय सहस्त्रार्जुन से कहा कि महाराज ! उसके घर में कामधेनु गौ है उसी के प्रभाव से तुम्हें एक दिन में नौत जिमाया, यह समाचार पाय सहस्त्रार्जुन ने उसी ब्राह्मण से कहा देवता ! तुम जाय हमारी ओर से जमदग्नि ऋषि से कहो कि सहस्त्रार्जुन ने गाय माँगी है इस बात के सुनते ही वह ब्राह्मण सन्देशा ले ऋषि के पास गया और उसने सहस्त्रार्जुन की बात कही ऋषि बोले कि यह गाय हमारी नहीं जो हम दें। यह तो राजा इंद्र की है इसे हम नहीं दे सकते तुम जाय अपने राजा से कहो, बात के सुनते ही ब्राह्मण ने राजा सहस्त्रार्जुन से कहा कि महाराज ऋषि ने कहा कि कामधेनु हमारी नहीं यह तो राजा इन्द्र की है उसे हम नहीं दे सकते। इतनी बात ब्राह्मण के मुख से निकलते ही सहस्त्रार्जुनने अपने कितने एक योद्धाओंको बुलाय के कहा तुम अभी जाय जमदग्नि के घर से कामधेनु खोल लाओ यह आज्ञा पाय योद्धा ऋषि स्थान पर गये और कामधेनु को खोल जमदग्नि के घर से चले तो ऋषि ने दौड़ कर बाट में जाय कामधेनु को रोका, समाचार पाय क्रोध कर सहस्त्रार्जुन ने ऋषि को काट डाला कामधेनु भाग इन्द्र के यहाँ गई। रेणुका आय पति के आगे खड़ी भई।

उस काल रेणुका का बिलखना बिलाप करना और रोना सुन दशों दिशा के दिग्पाल काँप उठे और परशुरामजी का तप करते आसन डिगा और ध्यान छूटते ही ज्ञान कर परशुरामजी अपना कुठार ले वहाँ आये जहाँ पिता की लाश पड़ी थी और माता खड़ी रोती थी देखते ही परशुराम जी को महा कोप हुआ, इतने में रेणुका ने पति के मारे जाने का सब भेद पुत्र को रोरो कह सुनाया यह सुनते ही परशुरामजी इतना कह कि माता पहले मैं अपने पिता के बैरी को मार आऊँ तब आय पिता को उठाऊँगा, सहस्त्रार्जुन की सभा में पहुँचे। उसे देखते ही परशुराम कोप कर बोले—

अरे क्रूर कायर कुल द्रोही। तात मारि दुख दीन्हों मोही॥

ऐसे कह जब फरसा ले परशुराम जी महा क्रोध में आये तब वह भी धनुष

बाण ले इनके सों ही खड़ा हुआ दोनों बली महायुद्ध करने लगे निदान लड़ते २ परशुराम ने चार घड़ी के बीच सहस्रार्जुन को मार गिराया पुनि उसका कटक चढ़ आया तिसे भी उन्होंने उसी के पास काट डाला फिर वहाँ से आय पिता की गति करी और माता को समझाय पुनि उसी ठौर परशुराम जी ने रुद्र यज्ञ किया तभी से वह स्थान कुरु क्षेत्र कहकर प्रसिद्ध हुआ वहाँ जाकर जो कोई दान स्नान तप यज्ञ करता है उसका सहस्र गुना फल प्राप्त होता है।

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी ने राजा परीक्षित से कहा कि महाराज! इस प्रसङ्ग के सुनते ही सब यदुवंशियों ने प्रसन्न हो श्रीकृष्णचन्द्र जी से कहा कि महाराज! शीघ्र कुरुक्षेत्र को चलिये, अब बिलम्ब न करिये क्यों कि पर्व पर पहुँचना चाहिये, बात के सुनते ही श्रीकृष्णचन्द्र और बलराम जी ने राजा उग्रसेन से पूछा कि महाराज! सब कोई कुरुक्षेत्र चलेंगे। यहाँ पुरी की चौकसी कौन करे? राजा उग्रसेन ने कहा अनिरुद्ध को रख चलिये राजा की आज्ञा पाय प्रभुने अनिरुद्ध जी को बुलाय समझा कर कहा कि बेटा तुम यहाँ रहो, गौ-ब्राह्मण की रक्षा करो और प्रजा को पालो हम राजाजी के साथ सब यदुवंशियों को ले कुरुक्षेत्र न्हाय आवें। अनिरुद्धजी ने कहा जो आज्ञा महाराज! एक अनिरुद्धजी को पुरी की रखवारी में छोड़ शूरसेन बसुदेव, उद्धव, अक्रूर कृतवर्मा आदि छोटे बड़े यदुवंशी राजा उग्रसेन के साथ कुरुक्षेत्र चलने को उपस्थित हुए। प्रभु के पहुँचते ही राजा उग्रसेन ने वहाँसे डेरा उठाया राजा इन्द्रकी भाँति बड़ी धूम धाम से आगे को प्रस्थान किया। इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! कितने एक दिनों में चले २ श्रीकृष्णचन्द्र सब यदुवंशियों समेत आनन्द मङ्गल से कुरुक्षेत्र में पहुँचे, वहाँ जाय पर्व में सबने स्नान किया और यथाशक्ति हर एक ने हाथी, घोड़ा रथ, पालकी अस्त्र, शस्त्र, आभूषण, अन्न धन दान दिया, पुनि वहाँ सबों ने डेरा डाला। महाराज! श्रीकृष्णचन्द्र और बलरामजीके कुरुक्षेत्र के जानेका समाचार पाय चारों ओरके राजा कुटुम्ब सहित अपनी२ सब सेना लेले वहाँ आये और श्रीकृष्ण बलराम जी से मिले पुनि सब कौरव पाँडव भी अपना अपना दल ले ले सकुटुम्ब वहाँ आय मिले उस काल कुन्ती और द्रौपदी यदु-

वंशियों के रनिवास में जाय सब से मिली, कुन्ती ने भाई के सन्मुख जाय कहा कि भाई ! मैं बड़ी अभागी जिस दिन से हरी गई उसी दिन से दुख उठाती हूँ तुमने जब से ब्याह दी तब से मेरी सुधि कभी न ली और रामकृष्ण जो सब के सुखदाई, उनको भी दया कुछ न आई। महाराज ! इस बात के सुनते ही करुणा कर आँखें भर बसुदेव जी बोले कि बहन ! मुझे क्या कहती है इसमें मेरा कुछ वश नहीं। कर्म की गति जानी नहीं जाती, हरि इच्छा प्रबल है, देखो कंस के हाथ मैंने भी क्या क्या दुख न पाया। महाराज ! इतना कह बहन को समझाय बुझाय बसुदेवजी वहाँ गये जहाँ सब राजा उग्रसेन की सभा में बैठे थे और राजा दुर्योधन आदि बड़े २ नृप और पाण्डव उग्रसेन ही की बड़ाई करते थे कि राजा तुम बड़भागी हो जो सदा श्रीकृष्णचन्द्र जी का दर्शन पाते हो और जन्म का पाप गँवाते हो; इतना कह श्री शुकदेवजी बोले कि महाराज ऐसे सब राजा आये राजा उग्रसेन की प्रशंसा करते थे, और वे यथा योग्य सबका समाधान करते थे। इतने में श्रीकृष्ण बलराम जी का आना सुन नन्द उपनन्द जी सकुटुम्ब सब गोप गोपी ग्वाल बाल समेत आन पहुँचे। स्नान दान से निविर्ति हो नन्द जी वहाँ गये जहाँ पुत्र सहित बसुदेव बिराजते थे, इन्हें देखते ही बसुदेवजी उठ कर मिले और दोनों ने परस्पर प्रेम कर ऐसे सुख माना कि जैसे कोई वस्तु पाय सुख माने आगे बसुदेवजी ने नन्दराय से ब्रज को सब बातें कह सुनाई, जैसे नन्दरायजी ने श्रीकृष्ण बलराम को पाला था, महाराज ! इस बात के सुनते ही नन्दरायजी के नयनों में नीर भर गया वसुदेवजी का मुख देख रहे, उस काल श्रीकृष्ण बलरामजी प्रथम नन्द यशोदाजी को यथायोग्य दण्डवत् प्रणाम कर पुनि मेघवालों से जाय कर मिले। जहाँ गोपियों ने आय हरि का चन्द्र मुख निरख निरख अपने नयन चकोरों को बहुत सा सुख दिया और जीवन का फल लिया।

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोलेकि महाराज ! बसुदेव देवकी, रोहिणी श्रीकृष्ण बलराम से मिल जो कुछ प्रेम नन्द उपनन्द यशोदा गोपी ग्वाल वालों ने किया, सो मुझ से कहा नहीं जाता, वह देखते ही बनि आवे। निदान सबको

स्नेह में निपट अति व्याकुल देख श्रीकृष्णचन्द्रजी बोले कि सुनो—

मेरी भक्ति जो प्राणी करे। भवसागर निश्चय सो तरे॥
तनमन धन तुम अर्पण कीन्हों। नेह निरंतरकर मोहिचीन्हों॥

जैसे तेज जल, अग्नि, पृथ्वी, आकाश का देह में वास करें, तैसे सब घट में भरा है प्रकाश श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज ! जब श्रीकृष्णचन्द्रजी ने यह सब भेद कह सुनाया तब सब ब्रजवासियों को धीरज आया।

—✻✻—

अध्याय ८३

श्रीकृष्णा पत्नि व द्रोपदी सम्वाद

श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज ! द्रोपदी और श्रीकृष्णचन्द्रजी की स्त्रियों में परस्पर बातें हुईं सो प्रसङ्ग मैं कहता हूँ तुम सुनो, एक दिन कौरव और पाँडवों की स्त्रियाँ श्रीकृष्णजी की नारियों के पास बैठी और गुण गाती थीं इसमें कुछ वार्ता जो चली तो द्रौपदी ने रुक्मिणी से कहा सुन्दरी ! कह तूने श्रीकृष्णजी को कैसे पाया। श्रीरुक्मिणीजी बोली, मेरे पिता का तो मनोरथ था कि मैं अपनी कन्या श्रीकृष्णचन्द्रजी को दूँ और भाई ने राजा शिशुपाल के देने को किया, वह बरात ले ब्याहने को आया और श्रीकृष्णचन्द्रजी को मैंने ब्राह्मण भेज बुलाया, ब्याह के दिन मैं जो गौरी की पूजा कर घर को चली तो श्रीकृष्णचन्द्र जी ने सब असुर दल के बीच से मुझे उठाय के रथ में बैठाय अपनी बाटली तिस

पीछे समाचार पाय सब असुर दल प्रभु पर आय टूटा, सो हरि ने सहज ही मार भगाया पुनि मुझे ले द्वारका पधारे वहाँ जाते ही राजा उग्रसेन, शूरसेन बसुदेवजी ने वेद की विधि से श्री कृष्णचन्द्रजी के साथ मेरा ब्याह किया, विवाह के समाचार पाय मेरे पिता ने बहुत सा यौतुक भिजवाय दिया। इतनी कथा कह श्री शुकदेवजी ने राजा परीक्षित से कहा कि महाराज! उसी प्रकार द्रोपदी ने सत्यभामा, जाम्बवती, कालिंदी, भद्रा, सत्या मित्रबिंदा लक्ष्मणा आदि श्रीकृष्णजी की सोलह सहस्र एक सौ आठ पटरानियों से पूछा और एक एक ने सब समाचार अपने अपने विवाह के ब्यौरे समेत कहा।

—***—

अध्याय ८४

बासुदेव कृत यज्ञ वर्णन

श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! अब मैं सब ऋषियों के आने का और बसुदेवजी के यज्ञ करने की कथा कहता हूँ तुम चित्त दे सुनों महाराज एक दिन राजा उग्रसेन, शूरसेन, बसुदेव, श्रीकृष्ण, बलराम, सब यदुवंशियों समेत सभा किये बैठेथे और सब देश२ के नरेश वहाँ उपस्थित थे कि इसी बीच श्रीकृष्णचन्द्र आनन्द कन्द के दर्शन की अभिलाषा कर व्यास, बसिष्ट, बामदेव, विश्वामित्र पाराशर, भृगु, पुलस्त्य, भारद्वाज, मार्कण्डेय आदि अट्ठासी सहस्र ऋषिवहाँ आये तिनके साथ नारदजी आये। उन्हें देखते हो सभा सब उठ खड़ीहुई, पुनि सब दंडवत कर पाटम्बर के पाँवड़े डाल सबको सभा में ले गये, श्रीकृष्णजी ने सब को आसन पर बैठाये पाँव धोय चरणामृत लेलिया और सभापर छिड़ककर फिर चंदन अक्षत, धूप, दीप, नैवेद्य कर भगवान ने सबकी पूजा कर परिक्रमा की, पुनि हाथ जोड़ सन्मुख खड़े हो हरि बोले कि धन्य भाग्य हमारे जो आपने आय घर बैठे दर्शन दिया साधुका दर्शन गङ्गा स्नान के समान है, जिसने साधुका दर्शन पायाउसने जन्म २ का पाप गमाया। इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज!

श्री भगवान बचन जब कहे। तब सब ऋषी बिचारत रहे॥

प्रभूजो ज्योतिस्वरूप और सकल सृष्टि कर्त्ता हो के जब यह बात कहे तब प्रभूकी क्या चलाई, मनही मन जब मुनियों ने इतना कहा तब नारद जी बोले—

ये आप ही ब्रह्मा हो उपजाते हैं, विष्णु हो पालते, शिव हो संहारते हैं, इनकी गति अपरम्पार है साधुओं को सुख देने को और दुष्टों को मारने को और सनातन धर्म चलाने को बार २ अवतार ले प्रभु आते हैं महाराज ! जो इतनो बात कह नारदजी सभा से उठने को हुए तो बसुदेवजी सन्मुख आय हाथ जोड़ बिनती कर बोले कि हे ऋषिराज ! मनुष्य संसार में कर्म बन्धन से कैसे छूटेसो कृपाकर कहिए महाराज ! यह बात बसुदेवजी के मुख से निकलतेही सब ऋषि मुनि नारदजीका मुख देख रहे नारदजो ने मुनियों के मनका अभिप्राय समझकर कहा कि देवताओ तुम इस बात का अचरज मत करो, श्रीकृष्णजी की माया प्रबल है, इसने संसार को जीत रक्खा है। इसी से बसुदेवजी ने यह बात कही और दूसरे ऐसा भी कहा है जो जन जिसके समीप रहता है वह उसका गुण प्रभाव और प्रताप माया के वश हो नहीं जानता जैसे—

गङ्गावासी अन्तहि जाई। तज के गंग कूप जल न्हाई॥
यों ही यादव भये अयाने। नाहीं कछुक कृष्ण पति जाने॥

इतनी बात कह नारदजी ने मुनियों के मन का सन्देह मिटाइ बसुदेव जी से कहा कि महाराज ! शास्त्र में कहा है जो नर तीर्थ, दान, तप, ब्रत यज्ञ करता है सो संसार के बन्धन से छूट कर मुक्ति पाता है, इस बातके सुनते ही प्रसन्न हो बसुदेवजी ने बात की बात में सब यज्ञ की सामिग्री मँगवाय उपस्थित की और ऋषियों से और मुनियों से कहा महाराज ! कृपा कर यज्ञ को प्रारम्भ कीजिये महाराज ! बसुदेव जो के मुख से इतना बचन निकलते ही ब्राह्मणों ने यज्ञ का स्थान बनाइ सँवारा इस बीच स्त्रियों समेत बसुदेव जी वेदी में जाय बैठे राजा और यादव यज्ञ की टहल में आ उपस्थित हुए। इतनी कथाकह श्रीशुकदेवजी ने राजा परिक्षित से कहा कि महाराज जिस समय बसुदेवजो वेदी में जाय बैठे उस काल वेद की विधिसे मुनियों ने यज्ञ को आरम्भ किया और लगे वेद मन्त्र पढ़ २ कर आहुती देने और देवता सब भाग आय लेने, इतने में यज्ञ पूर्ण हुआ और बसुदेवजी ने पर्णाहुति दे ब्राह्मणों को पाटम्बर पहिराय अलंकार, रत्न, धन बहुत सा दिया, उन्होंने वेद मन्त्र पढ़ २ आशीर्वाद दिया आगे सब देश के नरेशों

को भो बसुदेव जी ने पीताम्बर पहिराये और जिमाये पुनि उन्हें यज्ञ की भेट कर विदा हो अपनी२ बाट लो। महाराज! सब राजाओं के जाते ही नारदजी समेत सारे ऋषि भी विदा होने लगे उस समय की बात कुछ कही नहीं जाती। इधर तो यदुवन्शी करुणा कर अनेक २ प्रकार की बात करते थे और उधर सब ब्रजवासी उस को बखानते निदान बसुदेवजी श्रीकृष्ण बलरामजी ने सब समेत नन्दरायजी को समझाय बुझाय वस्त्राभूषण पहराय और बहुत सा धन दे विदा किया इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! इसी भाँति श्रीकृष्णचन्द्र और बलराम जी पर्व न्हाय यज्ञ कर सब समेत द्वारिकापुरी में आये तो घर घर मङ्गल होने लगे। —❀—

अध्याय–८५

[देवकी मृतक पुत्रानयन]

श्रीशुकदेव जी बोले कि महाराज! द्वारिकापुरी के बीच एक दिन श्रीकृष्णचन्द्रजी और बलरामजी बसुदेव जी के पास गये तो वे इन दोनों भाइयों को देख यह बात मन में बिचार कर उठ खड़े हुए कि कुरुक्षेत्र में नारद जी ने कहा था कि श्रीकृष्णचन्द्रजो जगतके कर्त्ता दुःख हर्ताहैं और हाथ जोड़ बोले हे प्रभो! तुम्हारी माया है प्रबल, उसने सारे संसार को भुलाय रक्खा है। त्रिलोकी में सुर, नर, मुनि ऐसा कोई नहीं जो उसके हाथ से बच गया हो महाराज! इतना कह पुनि बसुदेव जी बोले कि कृपा नाथ!

महाराज ऐसे कह बसुदेव जी बोले कि हे कृपासिन्धु दीनबन्धु! जैसे आपने अनेक लोगों को तारा तैसे कृपा कर मेरा भी निस्तार कीजे जो भवसागरसे पार हो अनेक गुण गाऊँ। श्रीकृष्णजी बोले हे पिता तुम ज्ञानी होय पुत्रों की बड़ाई क्यों करते हो? टुक आप ही मन में बिचार करो कि भगवान् की लीला अपरम्पार है उसका पार किसी ने आज तक नहीं पाया। देखो वह–

घट घट माहिं ज्योति है रहै। ताही सो जग निर्गुण कहै॥
आपहिं सिरजे आपहि रहै। रहै मिल्यो बाँच्यो नहिं परै॥

महाराज! इतनी बात श्रीकृष्णजी के मुखसे निकलते ही बसुदेवजी मोह वश

होय चुप कर हरिका मुख देख रहे, तब प्रभु वहाँ से चले माताके निकट गये तो पुत्र का मुख देखते ही देवकी जी बोली हे कृष्णचन्द्र ! एक दुख मुझे जब तब शाले है, प्रभु बोले सो क्या ? देवकी जी ने कहाकि पुत्र ! तुम्हारे छः बड़े भाई जो कंस ने मार डाले हैं उनका दुख मेरे मन से नहीं जाता ।

श्रीकृष्ण का अपने छै मृतक भाइयों को पातालपुरी से वापिस लाकर देवकी को सोंपना ।

श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज ! बात के सुनते ही श्रीकृष्णजी इतनी कह पातालपुरी को गये कि माता ! तुम अब मत कुढ़ो मैं अपने भाइयों को अभी जाय ले आता हूँ, प्रभु के जाते ही समाचार पाय राजा बलि आय अति धूम-धाम से पाटम्बर पाँवड़े डाल निज मन्दिर में लिवाय लेगया । आगे सिंहासन पर बिठाय राजा बलि ने चन्दन, अक्षत पुष्प चढ़ाय धूप दीप से कृष्णजी की पूजा की पुनि सन्मुख खड़ा हो हाथ जोड़ स्तुति कर बोला कि महाराज ! आप का आना यहाँ कैसे हुआ । हरि बोले कि राजा ! सतयुग में मरीचिनाम एक ऋषि बड़े ब्रह्मचारी, ज्ञानी सत्यवादी और हरि भक्त थे । उनकी स्त्री का नाम उरना, उसके छः बेटे थे । एक दिन छःहौ भाई तरुण अवस्था में प्रजापति के सन्मुख जाय हसे, उनको हँसता देख प्रजा पति ने महाकोप कर यह शाप दिया कि तुम जाय अवतार ले असुर हो इस बात के सुनते ही ऋषि पुत्र अति भय खाय प्रजा-पति के चरणों पर जा गिरे और अति बिनती कर बोले कि कृपासिंधु आपने शाप दिया, पर अब कृपा कर कहिये कि इस शाप से हम कब मोक्ष पावेंगे । इनके

दीन बचन सुन प्रजापतिने कहाकि तुमश्रीकृष्णजीकादर्शन पायमुक्तिहोगेमहाराज!

इतनी कहत प्राण तजि गये। वे हरणाकुश पुत्र जु भये॥
पुनि बसुदेव के जन्मे जाय। तिनको हन्यो कन्स ने आय॥
मारि तिन्हें माया ले आई। इहठा राखि गई सुखदाई॥

उनका दुख माता देवको करती हैं इस लिये हम यहाँ आये हैं कि अपने भाइयों को जाय माता को देवें, और उनके चित्त की चिंता दूर करें श्रीशुकदेव जी बोलेकि राजा! इतना बचन हरिके मुख से निकलते ही राजा बलि ने छहों बालक ला दिये और बहुत सी भेंट आगे धरी तब प्रभु वहाँ से भाइयों को साथ ले माता के पास आये, माता पुत्रों को देख अति प्रसन्न हुई इस बात को सुन सारी पुरी में आनन्द हुआ और उनका शाप छूटा।

—*०*—

अध्याय—८६

(सुभद्रा हरण)

श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! जैसे द्वारिका से अर्जुन श्रीकृष्णचन्द्रजी की बहन सुभद्राको हर ले गया और श्रीकृष्णचन्द्र मिथिला में जाय रहे तैसे कथा कहता हूँ तुम मन लगाय सुनो, देवकी की बेटी श्रीकृष्णजी से छोटी जिसका नाम सुभद्रा, वह ब्याहने योग्य हुई तब बसुदेवजी ने कितने एक यदुवंशी और श्रीकृष्ण बलरामजी को बुलाय के कहा कि अब कन्या ब्याह योग्य हुई, कहो किसे दें? बलरामजी बोले कि कहा है बैर प्रीति समान से कीजै, एक बात मेरे

मन में आईहै कि यह कन्या दुर्योधन को दीजै, और जगत में यश और बढ़ाई लीजै। श्रीकृष्णजी ने कहा मेरे बिचार में आता है कि अर्जुन को लड़की दें तौ संसार में यश लें। श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! बलरामजी के कहने पर तो कोई कुछ नहीं बोला पर श्रीकृष्णजी के मुखसे यह बात निकलते ही सब पुकार उठे कि अर्जुन को कन्या देना अति उत्तम है। इस बात के सुनते ही बल रामजी बुरा मान वहाँ से उठ गये और उनका बुरा मानना देख सबलोग चुपरहे। आगे यह समाचार पाय अर्जुन सन्यासी का वेषबनाय दण्ड कमण्डल ले द्वारिका में जाय एक भली सी ठौर देख मृगछाला बिछाय आसन मार बैठा।

चार मास वर्षा भर रह्यो। काहू कछू मर्म ना लह्यो॥
अतिथी जानि सब सेवन लागे। विष्णु हेत वासों अनुरागे॥
वाको भेद कृष्ण सब जान्यो। काहू सों तिननाहि बखान्यो॥

महाराज! एक दिन बलरामजी अर्जुन को साधु जानकर घरजिमाने लिवाय ले गये, जो अर्जुन भोजन करने को बैठे तब सुभद्रा जी दृष्टि आईं। देखते ही इधर तो अर्जुन मोहित हो सबकी दृष्टि बचाय फिर २ देखने लगे और मन ही मन बिचार करने लगे कि देखें बिधाता कब जन्मपत्री की बिधि मिलावे और उधर सुभद्राजी इनके रूप की छटा देख रीझ मन ही मन यों कहती थीं।

है कोऊ नृपति नाहि सन्यासी। का कारण यह भये उदासी॥

महाराज! इतना कह उधर तो सुभद्रा घरको जाय पतिके मिलने की चिंता करने लगी और इधर भोजन कर अर्जुन अपने आसन पर आय प्रिय से मिलने की अनेक प्रकार की भावना करने लगे, इसमें कितने एक दिन पीछे एक समय शिवरात्री के दिन सब पुरवासी क्या स्त्री क्या पुरवासी नगरके बाहर शिव पूजन को गये, तहाँ सुभद्राजी अपनी सखी सहेलियों समेत गईं। उनके जानेका समाचार पाय अर्जुन भी रथ चढ़ धनुष बाण ले वहाँ जाय उपस्थित हुआ। महाराज ज्यों शिव पूजन कर सखियों को साथ ले सुभद्रा जी फिरी, त्यों देखते ही सोच संकोच तज अर्जुनने हाथ उठाय सुभद्रा को रथमें बिठाय अपने घर की बाट ली।

सुनि ये राम कोप अति कर्यो। हल मूसल ले काँधे धर्यो॥
रोवे नयन रक्त से करे। तब सब गर्जि बोल उच्चरे॥

अब ही जायप्रलय मैं करिहौं। चिति उठाय करमाथे धरिहौं ॥
मेरी बहन सुभद्रा प्यारी। याको कसे हरे भिखारी ॥
अब मैं वह सन्यासी पाऊ। तिनका सबकुल खोज मिटाऊँ ॥

महाराज! बलरामजी तो महा क्रोध में बक झक रहे ही थे कि इस बात का समाचार पाय प्रद्युम्न, अनिरुद्ध और बड़े बड़े यादव बलदेवजी के सन्मुख आय हाथ जोड़ कर बोले कि महाराज! हमें आज्ञा होय तो जाय शत्रु को पकड़लावें। इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज ! जिस समय बलराम जी सब यदुवंशियों को साथ ले अर्जुन के पीछे चलने को उपस्थित हुये, उसकाल श्री कृष्णचन्द्रजी ने आय बलदेवजी को सुभद्रा हरणका सब भेद कह समझाया और अति विनती कर कहाकि भाई, अर्जुन एक तो हमारी फूफी का बेटा है और दूसरे परम मित्र उसने जाने अनजाने समझेबिन समझे यह कार्य किया तो किया, परहमें उससे लड़ना कभी उचित नहीं यह धर्म के बिरुद्ध है और लोक विरुद्ध है, इतनी बात सुनते ही बलराम जी शिर धुन झुँझलाय बोले कि भाई यह तुम्हारा काम है कि आग लगाय पानी को दौड़ना नहीं अर्जुनकी क्या सामर्थ जो हमारी बहन को ले जाता। इतनी कह मन ही मन पछिताय दाव पेच खोइ बलरामजी भाईका मुख देख हल मूसल पटक बैठ रहे और उनके साथ यदुवंशी भी श्रीशुकदेव जी बोले कि राजा इधर तो श्रीकृष्णचन्द्र जी ने सबको समझाय बुझाइ रक्खा और उधर अर्जुन ने घर जाय वेद की बिधि से सभद्रा के साथ ब्याह किया, ब्याह के समाचार पाय श्रीकृष्ण बलराम जी ने बस्त्र आभूषण दास, दासी, हाथी घोड़े, रथ और बहुतसे रुपये एक ब्राह्मण के हाथ सङ्कल्प कर हस्तिनापुर को भेज दिये। आगे श्रीमुरारी भक्त हितकारी रथ पर बैठ मिथिलाका चले जहाँ श्रुतदेव बहुलाश्व नाम एक राजा एक ब्राह्मण दो भक्त थे महाराज प्रभु के चलते ही नारद बामदेव, ब्यास, परशुराम आदि कितने एक मुनि आन मिले और श्रीकृष्णचन्द्र जी के साथ हो लिये पुनि जिस दिशा में ही प्रभु जाते थे तहाँ के राजा आगे आय२ पूज२भेंट धरते जाते थे निदान चलते २ कितने एक दिनों में प्रभु वहाँ पधारे, हरिके आनेका समाचार पाय वे दोनों जैसे बैठे थे तैसे ही भेंट ले ले उठ धाये और श्रीकृष्णजी के पास आये, प्रभु का दर्शन करते ही दोनों भेंट धर

दण्डवत कर हाथ जोड़ सन्मुख खड़े हो अति विनय कर बोले हे कृपासिंधु! दीनबन्धु! आपने बड़ी दयाकी जो हम से पातकी को दर्शन दे पावन किया जन्म मरण को चुका दिया इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले अन्तर्यामी श्रीकृष्णचन्द्रजी उन दोनों भक्तों के मन को भक्ति देख दो स्वरूप धारण कर दोनों के घर जाय रहे उन्होंने मन मानता सब राव चाव किया और हरिने कितने एकदिन वहाँ ठहर उन्हें अधिक सुखदिया और प्रभु उनके मनका मनोरथ पूराकर ज्ञान दे जबद्वारिका को चले तब ऋषि मुनि पन्थमें बिदा हुए और हरि द्वारिका में जा बिराजे।

अध्याय—८७

इतनी कथा कह राजा परीक्षितने श्रीशुकदेवजी से पूछा कि महाराज! आप जो आगे कह आये कि वेदने परमेश्वर की स्तुति की, सो निर्गुण ब्रह्म की स्तुति वेद ने क्यों कर की! यह मुझसे समझा कर कहो जो मेरे मन का सन्देहजाय। श्री शुकदेवजी बोले कि महाराज! सुनिये कि जिसने बुद्धि इन्द्रिय, मन, प्राण, धर्म, काम मोक्ष को बनाया सो प्रभु सदा निर्गुण रहता है, पर जब ब्रह्माण्ड रचता है तब सगुण रूप होता है इससे निर्गुण वही एक ईश्वर है, इतना कह पुनि श्रीशुकदेव मुनि बोले कि महाराज! जो तुमने प्रश्नकिया सो प्रश्न एक समय नारदजी ने नारायणजीसे किया था। परीक्षितने कहा कि महाराज! यह प्रसङ्ग मुझे समझा कर कहिये जो मेरे मनका सन्देह जाय श्रीशुकदेवजी बोले कि राजा सतयुग में एक समय सत्यलोक में जाय जहाँ नर नारायण अनेक मुनियों के सङ्ग बैठे तप करते थे, पूछाकि महाराज निराकार ब्रह्म की स्तुति वेद किस भाँति करते हैं सो समझाकर कहिये नर नारायण बोलेकि सुनो नारद। जो सन्देह तुमने मुझसेपूछा यही सन्देह एक समय जनलक में जहाँ सनातनादि ऋषि बैठे तप करते थे वहाँ सम्वाद हुआ था नारदजी बोले महाराज! मैंभी वहीं रहताहूँ जा यह प्रसङ्ग चलता तो मैं भी सुनता नर नारायण ने कहा नारदजी! तुम श्वेत द्वाप में भगवान के दर्शन को गये तभी यह प्रसंग चला था इससे तुमने नहीं सुना, इतनी बातसुन नारदजी ने पूछा महाराज! वहाँ क्या प्रसंग चला था सो कृपा कर कहिये। नारायण बोले कि सुनो नारद! जब मुनियों ने यह प्रश्न किया तब सनन्दन मुनि कहने लगे

कि सुनो जिस समय महा प्रलय में चौदह ब्रह्मान्ड जल समाप्त हो जाते हैं, उस समय पूर्ण ब्रह्म अकेले रहते हैं जब भगवान् को सृष्टि करनेकी इच्छा होती है तब उनके श्वास से वेद निकल हाथ जोड़ स्तुति करते हैं,ऐसे कि जैसे राजा अपने स्थान पर सोता हो और बन्दीजन भोर ही उसका यश गाय उसको जगावें इसलिए कि वो चैतन्य हो शीघ्र कार्य करे।

इतना प्रसङ्ग कह नारायण बोले कि सुन नारद! प्रभु के मुख से निकल वेद यह कहते हैं कि हे नाथ! वेग चैतन्य हो सृष्टि रचो और जीवों के मन से अपनी माया दूर करो। क्योंकि वह तुम्हारे रूप को पहिचाने तुम्हारे समझाने का ज्ञान हो हे नाथ। तुम बिन इसे कोई वश में नहीं कर सकता जिनके हृदय में ज्ञान रूप हो तुम बिराजते हो सो इस माया को जीतता है नहीं तो किसको सामर्थ्य है जो माया के हाथ से बचे। तुम सबके कर्ता हो सब जीव तुम्हीं से उत्पन्न हो तुम्हींमें समातेहैं ऐसे कि जैसे पृथ्वी से अनेक वस्तु हो पृथ्वी में मिल जाती हैं कोई किसी देवताकी पूजा करे पर वह तुम्हारी ही पूजा स्तुति होती है। आप अनेक रूप हैं और ज्ञान कर देखिये तो कोई कुछ नहीं जिधर देखिए तिधर तुम्हीं तुम दृष्टि आते हो नाथ! तुम्हारी माया अपरम्पार है यही सत रज तम तीन गुण हो तीन स्वरूप धारणकर सृष्टिको उपजाय पालन नाश करती है इसका भेद न किसीने पाया न कोईपावेगा इससे जीव को उचित यह है कि सब वासना छोड़ कर तुम्हारा ध्यान करे, इसी में उसका कल्याण है, महाराज इतना प्रसङ्ग सुनाय नारायण ने कहा कि हे नारद! सनकादिक मुनियों ने वेद की विधि से सनन्दन मुनि ने पूजा की।

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले कि हे राजा! यह नर नारायण नारद का संवाद जोकोई सुनेगा निस्संदेह भक्ति पदारथ पाय मुक्ति होगा। जो कथा पूर्ण ब्रह्म की वेद ने गाई सो कथा सनन्दन मुनि ने सनकादिक मुनियों को सुनाई वही कथा नर नारायण ने नारद को सुनाई इस कथा को जो जन सुने सुनावेगा सो मन मानता फल पावेगा, जो पुण्य होता है तप, यज्ञ, दान, व्रत तीर्थ करने में, सोई पुण्य होता है इस कथा के कहने सुनने में।

—**—

अध्याय—८८

बृकासुर वध

श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज ! भगवान की अद्भुत लीला है इसे सब कोई जानता है जो जन हरि की पूजा करे सो दरिद्री होय और महादेवजीको माने सो धनवान देखा हरिकी कैसी रीति है ये लक्ष्मी पति वे गौरीपति। तेरे धड़ बनमाला, वे मुण्डमाला, ये चक्रपाणि वे शूलपाणि ये धरणीधर वे गङ्गाधर, ये मुरली बजावें,वे सींगो,ये बैकुण्ठ वासीवे कैलाश वासी ये प्रतिपालें वे संहारें, ये चरचें चन्दन, वे लगावें विभूति, ये ओढ़े अम्बर ये बाघम्बर, ये पढ़ें वेद, वे आगम, इनका वाहनगरुड़, उनका नन्दोये ग्वाल बालोंमें वे भूतप्रेतोंमें विचरें।

दोऊ प्रभूकी उलटी रीति। जित इच्छा तिति कीजे प्रीति॥

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज ! राजा युधिष्ठिर से श्री कृष्णचन्द ने कहा कि हे युधिष्ठिर ! जिस पर मैं अनुग्रह करता हूँ होले २ उस का सब धन खो देता हूँ, इसलिए कि धनहीन को भाई बन्धु स्त्री पुत्र आदि सब कुटुम्ब के लोग तज देते हैं, तब उसे बैराग उपजता है। बैराग होने से धन जन की माया छोड़ निर्मोही हो मन लगाय मेरा भजन करता है। भजन के प्रताप से अटल निर्वाण पद पाता है। इतना कह पुनि श्रीशुकदेवजी कहने लगे कि महाराज ! और देवता की पूजा करने से मनोकामना पूरी होती है पर भक्ति नहीं मिलती यह प्रसङ्ग सुनाय मुनि ने पुनि राजा परीक्षित से कहाकि महाराज ! एक समय कश्यप का पुत्र बृकासुर तप करने की अभिलाषा कर जो घर से निकला तो पन्थमेंउसे नारदजीमिले देखतेही दण्डवत्कर हाथजोड़सन्मुख खड़े हो अति दीनता कर पूछा कि महाराज ब्रह्मा विष्णु महादेव इन तीनों देवताओं में शीघ्र वरदानी कौन है सो कृपा कर कहो तो मैं उन्हीं की तपस्या करूँ नारदजी बोले कि सुन बृकासुर इन तीनों देवताओं में महादेव बड़े बरदायकहैं, इनको न रीझते विलम्ब न खीजते देखो शिवजी ने थोड़े से तप करने से प्रसन्न हो सहस्रार्जुन को सहस्र हाथ दिये और अल्प ही अपराध में महा क्रोध कर उसका नाश किया महाराज ! इतनी कह नारद मुनि तो चले गये और बृकासुर

अपने स्थान पर आय महादेव का अति तप करने लगा सात दिन के बीच उस ने छुरी से अपने सिर का माँस सब काट काट होम दिया आठवें दिन जब शिर काटने को मन किया तब भोलानाथ ने आय उसका हाथ पकड़ के कहा कि मैं तुझसे प्रसन्न हुआ, जो तेरी इच्छा आवे सो वर माँग इतना बचन शिव जी के मुख से निकलते ही बृकासुर हाथ जोड़ बोला—

दोहा-ऐसा वर दीजै अब, धरौ जाहि शिर हाथ। भस्म होय सो पलक में, करहु कृपा तुम नाथ॥

महाराज! इस बात के सुनतेही महादेवजी ने उसे मुँह माँगा वर दिया वर पाय वह शिवजी के शिर पर हाथ धरने चला उस काल भय खाय महादेवजो आसन छोड़ भागे, उनके पीछे असुर भी दौड़ा। महाराज! सदा शिवजो जहाँ २ फिरें तहाँ २ वह भी उनके पीछे हो लगा आया निदान अति व्याकुल हो महादेवजी बैकुण्ठ में गये उनको महा दुखित देख भक्त हितकारी बकुण्ठ नाथ श्री मुरारी करुणा करके विप्र भेष धर बृकासुर के सन्मुख जाय बोले कि हे असुरराय! तुम उनके पीछे क्यों श्रम करते हो यह समझा कर कहो। इस बात के सुनते ही बृकासुर ने सब भेद कह सुनाया, पुनि भगवान बोलेकि हे असुरराय! तुमने सयाना हो धोखा खाया, यह बड़े अचरज की बात है इस नंगे भुजंगे बावले भाँग धतूरा खाने वाले योगी की बात को सत्य माना ये सदा चौर लगाये सर्प लिपटाये भयानक भेष किये भूत प्रेतों को सङ्ग लिए श्मशान में रहता है उसकी बात किससे जाँच आवै महाराज! यह बात कह श्री नारायण बोले कि असुरराय! जो तुम मेरा कहा झूँठ मानों तो अपने शिर पर हाथ रख लो महाराज! प्रभु के मुख से इतनी बात सुनते ही माया के वश अज्ञान हो ज्यों बृकासुर ने अपने शिरपर हाथ रख लिया त्यों जलकर भस्म हो ढेर हुआ असुर के मरते ही सुरपुर में आनन्द के बाजे बजने लगे और देवता जय जय कर कर फूल बरसावने लगे उसकाल हरि ने हर को स्तुति कर बिदा किया। बृकासुर को मोक्ष दिया श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! इस प्रसङ्ग को जो सुनै व सुनावेगा, वह निस्संदेह हरि की कृपा से परम पद पावेगा।

अध्याय—८६

श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! एक समय सरस्वती के तीर सब ऋषि मुनि बैठे यज्ञ करते थे, उनमें से किसा ने पूछा कि ब्रह्मा विष्णु महेश इन तीनों देवताओं में बड़ा कौन है? सो कृपा कर कहो इसमें किसी ने कहा शिव किसी ने कहा विष्णु और किसी ने कहा ब्रह्मा पर सब ने मिल एक को बड़ा न बताया तब कई एक बड़े मुनीशों ऋषियों ने कहा कि हम यों तो किसी की बात नहीं मानते, पर हाँ जो कोई इन तीनों देवताओं की जाके परीक्षा कर आवे और धर्म स्वरूपी कहे तो उसका कहना सत्य मानें महाराज! यह बात सुन सबने प्रणाम किया और ब्रह्मा के पुत्र भृगु को तीनों देवताओं की परीक्षा कर आने की आज्ञा दी। आज्ञा पाय भृगु मुनि प्रथम ब्रह्म लोक में गये और चुपचाप ब्रह्मा की सभा में जाकर बैठे न दण्डवत् की न स्तुति न परिक्रमा, राजा! तब पुत्र का अनादर देख ब्रह्मा ने कोप किया और चाहा कि शाप दूँ पर पुत्र की ममता ने ऐसा न करने दिया उस काल भृगु पिता को रजोगुण में आसक्त देख वहाँ से उठ कैलाश में गये और वहाँ शिव पार्वती बिराजतेथे तहाँ जा खड़े भये इसे देख शिवजी खड़ेहो ज्यों हाथ पसार मिलनेको हुए त्यों वह बैठ गये बैठतेही शिवजी क्रोधकर इसके मारनेको त्रिशूल हाथमें ले लिया उस समय पार्वती ने अति बिनतीकर पावों महादेवजी को समझाया और कहा कि यह तुम्हारा छोटा भाई है इसका अपराध क्षमा कीजिये।

बालक सों जो चूक कछु परे। साधु न कबहुँ मन में धरे।

महाराज! जब पार्वतीजी ने शिवजी को समझा कर ठण्डा किया, तब भृगु महादेवजी को तमोगुण में लीन देख चल खड़े हुए पुनः बैकुन्ठ में गये जहाँ भगवान मणिमय कंचन में छप्पर खट पर फूलों की सेज में लक्ष्मी के साथ सोते थे जाते ही भृगु ने भगवान के हृदय में एक लात ऐसी मारी कि वे नींद से चौंक पड़े मुनि को देख लक्ष्मी को छोड़ छप्पर खट से उतर हरि भृगुजी का पग शिर आँखों से लगाय, लगे दाबने और यों कहने कि हे ऋषिराय! मेरा अपराध क्षमा कीजे, मेरे हृदय की चोट तुम्हारे कोमल चरण में अनजाने लगी यह दोष चित्तमें न लीजे, इतना बचन प्रभु के मुख से निकलते ही भृगुजी अति प्रसन्नहो स्तुति कर विदा हो वहाँ आये जहाँ सरस्वती तीर पर सब ऋषि मुनि बैठे थे, आते ही

भृगुजी ने तीनों देवताओं का भेद सब को ज्यों का त्यों कह सुनाया कि—

ब्रह्मा राजस में लिपटान्यो। महादेव तामस में सान्यो॥
बिष्णु जु सात्यिक माँहि प्रधान। तिनते बड़ौ देवनहिं आन॥
सुनत ऋषिनकौ संशय गयौ। सबही के मन आनन्द भयौ॥
बिष्णु प्रशंसा सबने करी। अविचल भक्ति हृदय में धरी॥

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी ने राजा परीक्षित से कहा कि महाराज! मैं अन्तर कथा कहता हूँ तुम मन लगाय सुनो द्वारिकापुरी में राजा उग्रसेन तौ धर्मराज करते थे और श्रीकृष्णजी बलराम उनके आज्ञाकारी थे, राजाके राज्य में सब लोग अपने २ स्वधर्म में सावधान राज कर्म में सज्ञान रहते थे और आनन्द चैन करते थे! तहाँ एक विप्र भी अति सुशील, धर्मनिष्ठ रहता था एक समय उसके पुत्र होकर मर गया, उस मरे पुत्रको लेकर राजा उग्रसैन के द्वार पर गया और उसके मुँह में जो आया सो कहने लगा कि तुम बड़े अधर्मी दुष्कर्मी और पापी हो, तुम्हारे ही दुष्कर्मों से प्रजा दुख पाती है, मेरा भा पुत्र तुम्हारे ही पाप से मरा महाराज! इसी भाँति अनेक २ बात कह मरा लड़का राज-द्वार पर रख विप्र अपने घर को आया आगे उसके आठ बेटे हुए और आठों को वह उसी रीति से राज द्वार पर रख आया जब नवाँ पुत्र होने को हुआ तब विप्र फिर राजा उग्रसैन की सभा में जा श्रीकृष्णचन्द्रजी के सन्मुख खड़े हो पुत्रों के मरने का दुःख सुमिर रो ये कहने लगा कि धिक्कार है राजा और इसके राज्य को, पुनि धिक्कार है उन लोगों को जो अधर्मी की सेवा करते हैं और धिक्कार है मुझे जो इस पुरी में रहता हूँ, जो पापियों के देश न रहता तो मेरे पुत्र बचते इन्हीं के अधर्म से मेरे पुत्र मरे और किसी ने उपाय न किया महाराज! इस ढब की सभा के बीच खड़े हो ब्राह्मण ने रो रो बहुत सी बात कहीं पर कोई कुछ न बोला निदान श्रीकृष्णचन्द्र के पास बैठा सुन २ घबड़ा कर अर्जुन बोला कि देवता! तुम किसी के आगे यह बात क्यों कहते हो? इस सभा में कोई धनुर्धारी नहीं, जो तुम्हारा दुख दूर करे। आज कलके राजा आप काजी हैं पर दुःख निवारक नहीं, जो प्रजा को सुख दें और गौ ब्राह्मण की सेवा करें, ऐसा सुनाय पुनि अर्जुन ने विप्र से कहा कि देवता! तुम जाय अपने घर निश्चिन्त

बैठ रहो जब तुम्हारे लड़का होने का दिन आवै तब तुम मेरे पास आइयो मैं तुम्हारे साथ चलूगा और लड़के को न मरने दूँगा। महाराज! इतनी बात के सुनते ही विप्र खिजलाय बोला कि, मैं इस सभा के बीच श्रीकृष्ण, बलराम, प्रद्युम्न और अनिरुद्ध छुड़ाय ऐसा बलवान किसी को नहीं देखता जो मेरे पुत्र को काल के हाथ से बचावें अर्जुन बोला कि विप्र तू मुझे नहीं जानता कि मेरा नाम धनंजय है, मैं तुझसे प्रतिज्ञा करता हूँ कि जो मैं तेरा सुत काल के हाथ से न बचाऊँ तो तेरे मरे हुए लड़के जहाँ पाऊँ तहाँ से ले आय तुझे दिखलाऊँ और उन्हें न पाऊँ तो गाँडीव धनुष समेत अपने को अग्नि में जलाऊँ, महाराज! जबऐसी प्रतिज्ञाकर अर्जुनने ऐसाकहा तबवह संतोषकर अपने घरको गया पुनि पुत्र होने के समय विप्र अर्जुन के निकट आया, उस काल अर्जुन धनुष वाण ले उसके साथ उठ धाया आगे वहाँ जाय उसका घर अर्जुन ने बाणों से ऐसा छाया कि जिसमें पवन भी प्रवेश कर न सके और आप धनुध बाण लिये उसके चारों ओर फिरने लगा।

इतनी कथा कह शुकदेवजी ने राजा परीक्षित से कहा कि महाराज! अर्जुन ने बहुत सा उपाय बालक के बचाने का किया पर न बचा और दिन बालक होने के समय रोता था, उन दिन श्वास भी न लिया पेट ही से मरा निकला, मरे लड़के का होना सुन लज्जित हो अर्जुन श्रीकृष्णचन्द्रजी के निकट आया और इसके पीछे विप्र भी आया, महाराज! वहाँ आते ही रो रो विप्रकहने लगा रे अर्जुन! धिक्कार है तुझे और तेरे जप तप को जो मिथ्या बचन कह संसार के लोगों को मुख दिखाया है अरे नपुंसक! मेरे पुत्र को काल के हाथ से न बचा सकता था तो तैंने प्रतिज्ञा क्यों की थी कि मैं तेरे पुत्रको बचाऊ गा और न बचा सकूँगा तो तेरे मरे पुत्रको लादूँगा इतनी बात के सुनते ही अर्जुन धनुष बाण ले वहाँ से उठ चला और संयमना पुरी में धर्मराज के पास गया, उन्हें देख धर्मराज उठ खड़ा हुआ। अर्जुन बोले कि अमुक ब्राह्मण के बालक लेने आया हूँ धर्मराज ने कहा बालक यहाँ नहीं आये। महाराज! इतना बचन धर्मराज के मुख से निकलते ही अर्जुन वहाँ से विदा हो सब ठौर फिरा पर उसने

ब्राह्मण के लड़कों को कहीं नपाया कि निदान अछता पछता द्वारिकापुरी में आया और चिता बनाइ धनुष-बाण समेत जलने को उपस्थित हुआ आगे अग्नि जलाय अर्जुन ने चाहा कि चिंता पर बैठूँ तो श्री मुरारी गर्व प्रहारी ने आय हाथ पकड़ा और हँस कर कहा कि हे अर्जुन ! तू मत जले तेरी प्रतिज्ञा मैं पूरी करूँगा जहाँ उस ब्राह्मण के पुत्र होंगे तहाँ से लाके दूँगा।

महाराज ! ऐसे कह त्रिलोकीनाथ रथ पर बैठ अर्जुन को साथ ले पूर्व दिशा की ओर चले और सात समुद्र पार हो कंदरा में पैठे उस समय श्रीकृष्णचन्द्रजी ने सुदर्शन चक्र को आज्ञा दी वह कोटि सूर्य सम प्रकाश किये प्रभु के आगे २ महा अंधकार को हटाता चला। आगे जाते ही आँखें खोल कर देखा कि बड़ा लम्बा चौड़ा ऊँचा कंचन का मणिमय मन्दिर अति सुन्दर हैं तहाँ शेषजी के शीश पर रत्न जटित सिंहासन धरा है तिसपर श्याम घनरूप सुन्दर प्रभु मोहिनी मूर्ति बिराजे हैं, ऐसा उत्तम स्वरूप देख अर्जुन और श्रीकृष्णचन्द्रजी ने प्रभु के सोंही जाय दण्डवत् कर हाथ जोड़ अपने आने का सब कारण कहा बात के सुनतेही प्रभु ने ब्राह्मण के सब बालक मँगा दिये, और अर्जुन ने देख भाल कर प्रसन्न हो साथ लिये तब प्रभु बोले—

तुम दोऊ मेरी कलाजु आदि। हरि अरजुन देखो चित वाहि ॥
भार उतारन भूमि पर गये। साधु सन्त को बहु सुख दये ॥
असुर दैत्य सब तुम संहारे। सुर नर मुनि के काज संभारे ॥

इतनी कह भगवान ने अर्जुन और श्रीकृष्णचन्द्र को विदा किया, ये बालक ले पुरी में आए घर घर आनन्द मङ्गल भये, इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी ने राजा परीक्षित से कहा कि महाराज !

जो यह कथा सुने धर ध्यान। तिनके पुत्र होय कल्याण ॥

इति श्री लल्लूलाल कृते प्रेम सागरे द्विजकुमार हरणो व प्राप्तो नाम नवाशीतितमोऽध्यायः ॥८९॥

अध्याय-९०

श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज ! द्वारिकापुरी में श्रीकृष्णचन्द्र सदाबिराजैं ऋद्धि सिद्ध सब यदुवंशियों के घर घर बिराजैं नर नारी सब आभूषण ले नव बेश बनावें, हाट बाट चौहाटे झाड़बुहार छिड़कावें, तहाँ देश २ के व्यापारी

अनेक २ पदार्थ बेचने को लावें, जिधर तिधर पुरवासी कुतूहल करें, ठौर २ ब्राह्मण वेद उच्चारें, घर २ मङ्गलीं लोग कथा पुराण सुनें सुनावें सारथी रथ घोड़े बहल जोत २ राजद्वार लावें रथी महारथी, गजपती अश्व पती, शूरवीर, रावत, योधा यादव राजाकी जुहार करने जाय, गुणीजन नाचें गावें बजावें बन्दीजन चारण शब्द बखान कर, हाथी, घोड़े, वस्त्र, अन्न धन कंचन के रत्न जटित आभूषण पावें इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी ने राजा परोक्षित से कहा कि महाराज ! इधर तौ राजा उग्रसेन की राजधानी में इस रीति भाँति के कौतूहल होरहे थे और उधर श्रीकृष्णचन्द्रजी आनन्दकन्द सोलह सहस्र एक सौ आठ युवतियों के साथ नित्य बिहार करें, कभी युवतियाँ प्रेम में आसक्त हो प्रभुका वेश बनाया करें कभी हरि आसक्त हो युवतियों का श्रङ्गार करें, और जो परस्पर लीला क्रीड़ा करैं सो अकथ है वह देखे ही बनै ।

इतना कह श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! एक दिनरात्रि समय श्रीकृष्णचन्द्र सब युवतियों के साथ बिहार करते थे और प्रभु के नाना प्रकार के चरित्र देख किन्नर, गन्धर्व, बीणा, पखावज, भेरी, दुन्दुभी बजाय २ गुणगाते थे और एकसा समा हो रहा था, कि बिहार करते २ जो प्रभुजो के मनमें आया तौ सबको सरोबर के तीर लेजाय नीर में पैठ, जल क्रीड़ा करने लगे जल क्रीड़ा करते २ सब स्त्री श्रीकृष्णचन्द्र के प्रेम में मग्न हो तन मन की सुरत भुलाय एक चकवा चकई को सरोवर के वार पार बोलते देख बोली—

हे चकई तू दुख क्यों पावै। पिय वियोग ते रैन नशावै॥
अति व्याकुल होपियहिपुकारै।हमलों तूनिज पियहि सम्हारै॥

पुनि समुद्र से कहने लगीं कि हे समुद्र ! तू जो लम्बी२श्वाँस लेता है,और रात दिन जागता है सो क्या तुझे किसी का वियोग है। या चौदह रत्न गये सोई शोक है फिर चन्द्रमा को देख बोलीं कि हे चन्द्रमा ! क्यों तनक्षीण मन मलीन हो रहा है क्या तुझे क्षयरोग हुआ जो दिन२घटता बढ़ता है, श्रीकृष्ण-चन्द्र को देख जैसी हमारी गति भूलती है तैसी तेरी भी भूलती है।

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी ने राजा परीक्षितसे कहाकि महाराज इसीभाँति सब स्त्रियों ने पवन, मेघ, पर्वत, नदी, कोकिल, इनसे अनेक२बातें कहीं सो जान लीजै,आगे सब श्रीकृष्णचन्द्र जी के साथ बिहार करें। और सेवा में रहैं, प्रभुके गुण गावें और मन बांछित फल पावें। प्रभु गृहस्थ धर्म से गृहस्थाश्रम चलावें।

महाराज!सोलह सहस्रएकसौआठ श्रीकृष्णचन्द्र की रानी जो प्रथम बखानी तिनमें एक २ के दस दस पुत्र और एक २ कन्या थी। और उनकी सन्तान अनगिनत हो गईं सो मेरी सामर्थ्य नहीं कि जो उनकी सन्तानका बखान करूँ पर मैं इतना जानता हूँ कि तीन कोटि अठ्ठासी सहस्र एक सौ चटशाल थीं श्री कृष्णचन्द्र के जितने बेटे पोते नाती हुए उनमें बल पराक्रम धन धर्म में कोई कम न था एक से एक बढ़ कर थे उनका वर्णन मैं कहाँ तक करूँ।

इतना कह ऋषि बोले कि महाराज ! मैंने ब्रज और द्वारिकाकी लीला गाई,यह है सबको सुखदाई ! जो जन इसे प्रेम सहित गावेगा सो निस्सन्देह मुक्ति पदार्थ पावेगा जो फल होता है तप, यज्ञ, दान, व्रत, तीर्थ, स्नान, करने से सो फल मिलता है हरि कथा सुनने और सुनाने से फिर श्री शुकदेवजी बोले कि राजा अब श्रीकृष्ण लीला तौ समाप्त होगई। यों तौ भगवानकी लीला अगाध है पर सूक्ष्म में वर्णन करी है।

इति श्री लल्लूलालजी कृते प्रेमसागरे द्वारिका बिहार वर्णनो नाम नवतितमोऽध्यायः॥९०॥

❀ इति शुभम् ग्रन्थः समाप्तयं ❀

Printer & Publisher Pt. Radha Ballabh Sharma N. S. Sharma Gaur
Book Depot Shiam Press, Hathras.